

झीनी-झीनी बीनी चढरिया

झीनी-झीनी बीनी चदरिया

अब्दुल बिस्मिल्लाह

भाई काशीनाथ सिंह के लिए

ताना खण्ड

जाड़े की छूप इस छत में उस छत तक पीले कतान¹ की तरह फैली हुई है। इस छत पर असीमुन एक ओर बने हुए बाबर्चीघाने में आग सुलगाने जा रही है और उस छत पर कमरून कतान फेरने की तैयारी में व्यस्त है। अचानक दोनों छतें बोल उठती हैं, "का हो असीमुन अबइन तक आग नहीं बारीब का?"

"नहीं हो देघो अब जाइसा बारे। एतना-सा काम रहा करे के ऐही से एतनी अबेर हो गयी हो। तू का करे तू?"

"हम जाइसा कतान फेरे, बड़ी जल्दी की है।"

और तभी हम्बुन घट-घट मोड़ियाँ षड़कर इस छत पर पहुँचती है और असीमुन के पास बैठ जाती है।

"बलो हो हमरे साथ तइसा हुआ जाये के है, हमरी घासा किये!" दैटते ही वह अपने आगे का मझसद बताती है तो असीमुन जल उठती है। इ अल्ताफ़ की बीबी को और कोई काम तो है नहीं, कभी घासा किये तो कभी भड़की किये... घूमने में ही इसका दिन बीतता है। वह इनकार कर देती है, "भक हो हम नहीं जइसा, तू जातू काहे ने।"

"का हो तइसा हम कही सा जाये घात्रिर तो सफ़ा इनकार कर दीयेन।"

"देघो अइसा ने है कि हम्मे तनिकको मोका नहिने, नहीं तो हम जरूर जाते।"

और अल्ताफ़ की बीबी अपनी चादर उठाकर मुँह बनाती हुई घल देती है। असीमुन फूँकनी उठाकर बूझा फूँकने लगती है। और जब अच्छी तरह आग जल जाती है तो वह पछीसी में बड़के का गोस षड़ा देती है। भीतर कमरे में बैठा-बैठा इश्वास न जाने क्या-क्या बना-बिगाड़ रहा है और पूरे घर को गन्दा किये दे रहा है। उसकी घटर-घटर से जैसे ही असीमुन की निगाह उठर घूमती है, वह अपने

जनारसी बेटे पर चीखने लगती है, "अरे माटी-मिले तैं का वानावेते रे ! हट ओज्जन से...ई हरमिया बड़ा कोपाये रहते, कउनो दिना तोरी नटइये दवा देव हो हरामी..." और चीखते-चीखते अलीमुन को खाँसी आ जाती है। खाँसते-खाँसते घूम !

अलीमुन को टी. वी. हो गयी है। मतीन को मालूम है। लेकिन वह कुछ नहीं कर सकता। घर का जो काम है, वह बीबी को करना ही होगा। फेरार्ई-भरार्ई, नरी-ढोटा, हाँड़ी-चूनी... सभी कुछ करना होगा। बिन किये काम चलेगा नहीं। और रहना भी होगा पदों में। खुली हवा में घूमने का सवाल नहीं। समाज के नियम सत्य हैं, उन्हें तोड़ना गुनाह है। मतीन जानता है।

छित्तनपुरा से लेकर मदनपुरा तक, कहीं भी इस नियम में अन्तर नहीं है। नव रंगूले-पाक की उम्मत हैं। सब अंसारी हैं, जिन्होंने हुजूर को शरण दी थी। हुजूरत व्यूब अंसारी के वंशज...मतीन को यही बताया गया है। सच क्या है, वह नहीं जानता। पर समाज का जो नियम है, उसे मानता है। जैसे सब मानते हैं।

कहते हैं कि बनारस में बिनकारी का काम छित्तन बाबा ने शुरू किया था। वे इजारबन्द (पैजामा का नाड़ा) बुना करते थे। उन दिनों मफलर की तरह के इजारबन्द होते थे। एक बार उनका बिना हुआ इजारबन्द लखनऊ के किसी नवाब की नजर से गुजरा तो उन्होंने उस सेठ को तलब किया जिसके माध्यम से वह इजारबन्द उन्हें मिला था। सेठ डर गया कि कहीं कोई सजा न मिले और वह नहीं गया। उसने छित्तन बाबा की पिटाई की और उन्हें नवाब के पास भेज दिया। वे छरते-छरते वहाँ पहुँचे तो नवाब साहब ने उनकी बड़ी खातिर की और बनारस में पाँच मुहल्ले आवाद करने की इजाजत दी। तब छित्तन बाबा ने मऊ से कुछ लोगों को लाकर तथा बनारस के कुछ लोगों को मिलाकर पाँच मुहल्ले बसाये और इस प्रकार वे 'पाँचों' के सरदार बने।

एक समाज दुनिया का है। एक समाज भारत का है। एक समाज हिन्दुओं का है। एक समाज मुसलमानों का है। और एक समाज बनारस के जुलाहों का है। यह समाज कई अर्थों में दुनिया के हर समाज से अलग है। इस समाज के कई खण्ड हैं। पाँचो हैं, चौदहो हैं, बाइसी और बावनो हैं। अब एक नया बाइसी भी बन गया है। हर खण्ड का अपना सरदार है, अपना महतो है। लेकिन पाँचो का सरदार सबसे बड़ा माना जाता है। चौदहो, बाइसी या बावनो का जब सरदार चुना जाता है तो उसके सिर पर पगड़ी पाँचो का सरदार ही रखता है। लेकिन पाँचो का सरदार प्रायः वंशगत होता है और वह खुद अपने सिर पर पगड़ी रखता है। यही स्थिति महतो की भी है। फिर यहाँ कुछ लोग बनारसिया हैं, कुछ लोग मऊवाले हैं। मऊवाले वे हैं जो आजमगढ़ जिले के मऊनाथ मंजन से आकर बस गये हैं। पदे-

निगे नरके उन्हें 'एम घु' कहते हैं। जवाब में उधर के पड़े-निगे सहें इन्हें 'बी घु' कहते हैं। 'एम घु' और 'बी घु' में नौक-शौक बनती रहती है।

फिर अमर्दनुरिया अलग है और मदनुरिया अलग। छठ में से छन्द। जेमें रेसम की छपरंगी निगरी में से कई-कई घागे निकले आ रहे हो। हर घागा दूसरे घागे से थोड़ा अलग दिखता है, पर ऐसा है नहीं। चाहे बनरसिया हों या मऊवाते, अमर्दनुरिया हों या मदनुरिया, हैं सब एक।

यह बिरादरी छितनपुरा में लेकर इधर पड़ानी टोना, अंमाराबाद, भोंगार-सेखर, मुगा गढ़ही, मोनबीली का बाड़ा, नरकटिया की गढ़ही, चन्द्रपुरा, आनम-पुरा, हगनपुरा, कुनुबन गरीद, बहेनिया टोना, गसेमपुरा, मेहनिया तले, बीमला बाजार और पोहटा तक तथा उधर दुन्नी गढ़ही, मोहम्मद गढ़ीद, नीम तले, ऊग्रपुरा, बाकगबाद, रगूनपुरा, जैनपुरा, कमानपुरा, लदनपुरा, छोहरा, कच्छी बाग, भोरीपुरा, कुमवगिया, तेलिपाना, बड़ी बाडार, जलामीपुरा, धकरिया कुण्ड, दोगीपुरा और काजी गादुन्सापुरा तक फैली हुई है। गोदीनिया में आये मदनपुरा निररकुण्ड और बजरहीहा की ओर भी इनका फैलाव है, पर उनकी रीति-नीति कुछ अलग है। बोसो-भाया भी थोड़ी भिन्न है। लेकिन हैं सब एक। यहाँ के पाँव करघे में और स्त्रियों के हाथ धरते में।

असीमुन का धून टी. बी. के रूप में बह रहा है। इकबाल धून देखकर घबरा जाता है। वह पास आकर अम्मा को देखना चाहता है, पर असीमुन उसे तिड़क देती है, "भागते कि बतावें हम तुवें।"

और इकबाल गहम जाता है। वह धीरे-धीरे वहाँ से चलकर अपने टूटे-फूटे धिसीनों के पाग पहुँचता है और उन्हें एक पुराने-मे शौने में भरकर छोटिया के नीचे सरका देता है। फिर दबे पाँव बाहर निकलता है और आहिस्ता-आहिस्ता मीड़ियाँ उतर जाता है।

मनीन मुबद् से ही निकला है। कलान घट गयी है। हाजी साहब के यहाँ से लाना है। जब से होश में आता है, मनीन बानी पर ही बिन रहा है। उसके बाप भी बानी पर बिनते थे। इतनी हेमियत कभी नहीं हुई कि अपना कतान खरीद सकें, जबकि कमरन का आदमी सतीक अरना कतान खरीदकर लाता है और बिनता है। फिर अपनी गाड़ी गोतधर में जाकर अच्छे दामों में बेच देता है। यहाँ तो ये हाल है कि हाजी अमीरस्ता साहब दें तो घाओ करना भूखे रहो। करघा अपना, जाँगर अपनी, सिर्फ कतान हाजी साहब का, लेकिन हाजी साहब की बोटियाँ तन गयी और मनीन उसी ईंट की कच्ची दीवारोंवाले दरबे में गुजर कर रहा है। पेट को ही नहीं भँटता, क्या करें? कितनी भी सफ़ाई से बिनो, नब्बे रुपया से ज्यादा मजदूरी नहीं

मितन की। हफ्ते-भर में सिर्फ नव्वे रुपया ! उसमें से भी कभी पाँच रुपया 'दाग' का तो कभी तीन रुपया 'मती' का और कभी 'रफू' का तो कभी 'तीरी' का कट जाता है। महेगाई की हातत यह है कि दिन-दूनी रात-चोगुनी बढ़ती ही जा रही है। बाह रे अल्ला मियां बाह, खूब इन्साफ है तेरा भी !

मतीन सूरज की ओर ताककर छींकता है और फिर अपने खयालों में गुम हो जाता है।

अब्बा उसके बचपन में ही मर गये थे। लम्मा को टी. बी. धी। उसका इलाज भी करना था और जिन्दा भी रहना था। अतः अंसारी स्कूल को गोली मार दी। नवाब मास्टर साहब थे वहाँ प्राइमरी रेक्शन में ! विरादरी के थे। उन्होंने बहुत समझाया कि पढ़ तो वेटा, पर कैसे पढ़ता ? जिन्दगी की गाड़ी अंसारी स्कूल के बल पर नहीं चल सकती थी। वह लतीफ के अब्बा के पास बिनकारी सीखने जाने लगा। लतीफ भी बिनता था, लेकिन लतीफ उनका लड़का था और वह 'जोड़िया'। वह काम सीख रहा था और बदले में पेट भरने-भर को कमा भी रहा था। पचास रुपया महीना। जब कभी माँ की बीमारी की वजह से वह न पहुँच पाता काम पर, उसका पैसा काट लिया जाता था। देर से पहुँचने पर 'सकाड़' से पिटाई होती थी और अगर कभी कोई गलती हो जाती तो जिस हाथ से गलती होती उसी हाथ पर 'ठरकी' से मारा जाता। गाली ऊपर से, 'साले ! भोसड़ियावाले...'

मतीन को याद है कि लतीफ का बाप बहुत क्रोधी था। और काइयाँ भी। जैसे ही वह पहुँचता, उसकी डपटती हुई आवाज सुनायी पड़ती, 'चल बे चल, काम में चल।' और जैसे ही 'फल्ली' तैयार होती, चढ़ा हो जाता। बोलता, 'चल बे, फल्ली छोड़ दे अउर ताग भराव, अउर 'फू' दे। हम आइते।' और चला जाता मड़क पर पान पाने।

वह घटता रहता।

अपने विचारों में तोया हुआ मतीन कब पहुँच गया हाजी साहब के यहाँ, उसे मालूम

1. बाँस की छड़ी। इसका इस्तेमाल बिनकारी में भी होता है।
2. ठरकी बिनकारी का मूल यन्त्र है। यह दो तरह की होती है : तीरीदार और माकोदार। तीरीदार में से कलाबत्तू पाम होता है और माकोदार में से घागा।
3. सोड़ा-सा बिना हुआ भाग।
4. मुँह में पानी भरकर बिने हुए वस्त्र पर फूहारा मारने की प्रिया 'फू' कहलाती है।

नहीं। वह धौंका, जब उसे देखते ही हाजी साहब ऊपर चले गये और अपने सड़के को जोर-जोर से जगाने लगे, “कबे कमरूबा, अबइन नाही उठ्ठे ? अबइन तक काहे सूते है ? उठ जल्दी।”

मतीन सुनता है। उसे लगता है कि कमरूद्दीन शायद देरी कर रहा है। हाजी साहब की आवाज फिर गूँजने लगती है, “कबे अबइन तक का करते बे ? अबइन तक काम-घन्दा में हाथ काहे नाही लगा ? देख कारीपर कब्बे से आके तोरी आस में बइठा है। ओकी कतान घट गयी है। ओके पांस एहम कतान नइने कि ऊ रेजा पुजावे। कतनिपा केतनी ओके दिये रहे कि घट गयी। चल ओके काम-भर कतान दे दे, अउर तइसा तार^१ भी ओके दे देवे।”

और मतीन देखता है कि कमरूद्दीन सीढ़ियाँ उतरकर आँगन में आ गया है। वह एक किनारे घिसक जाता है। कमरूद्दीन गद्दी पर जम जाता है।

“का म्या कब आएब ?”

“हम्मैं तो आये देरी मो बा, कब्बे से तोरी आस में बइठे हैं।”

“अरे तो तुबहूँ तो एतना सबेरवे आके बइठ गएब। जनतो नाही कि आजकल केतना जल्दी आठ बज जाते ?” फिर वह रेशम तौलकर मतीन को देता है और साप ही हिदायत भी—

“अच्छा सो, कतान से जाओ। देखो रेजा मजे का बिनियो। अच्छा उतरे। तनिको कोई बात का उन्नईस न रहे।”

“नाई नाई, उन्नईस काहें के होइए। अस्ता चइये तो रेजा बहुत बड़ियाँ उतरिये।” मतीन अपना रटा हुआ चाक्य बीसता है और कतान लेकर बाहर आ जाता है।

घर आकर अलीमुन को वह लस्त-पस्त हालत में देखता है तो बहल जाता है। उसे अपनी अम्मा की याद आ जाती है कि किस तरह वह भी खून की उल्टियाँ करती हुई चल बसी थी और वह धबका उठता है।

मतीन दौड़कर डाक्टर अंसारी के यहाँ पहुँचता है और दवाई ले आता है।

बिरादरी में अब डाक्टर-बकीस सब हो गये हैं। कालेज अलग, अस्पताल अलग। बैंक अलग, अखबार अलग। पुराने जमाने में कोई कबीर नाम का कवि हुआ था इस बिरादरी में तो इस जमाने में नजीर बनारसी नाम के गायर भी हैं, जो अब हज़ भी कर आये हैं। बुनकर मार्केट अलग है और चुनकर

1. निर्माणाधीन साड़ी।

2. सुनहरा घागा, जिसे कलाबत्तू भी कहते हैं

कालोनी अलग। बुनकरों के लिए एक स्पेशल सिनेमा हाल भी है, यमुना टाकीज।
बी. ए., एम. ए. तो न जाने कितने हो गये बिरादरी में।

लेकिन मतीन अभी तक बानी पर ही बिन रहा है।

मतीन चाहता है कि वह भी एक छोटा-मोटा गिरस्ता बन जाय। कम-से-कम इतनी हैमियत तो हो ही जाय कि अपना रेशम-घागा खरीदकर केवल अपनी मेहनत के बल पर कमाये-खाये। तब बड़े गिरस्तों¹ का मुँह तो नहीं जोहना पड़ेगा।

मतीन पास पढ़ा-लिखा नहीं है तो क्या हुआ, समझदार है। युवा है। तरक्की करने का जववा है उसमें। इसीलिए वह निडर है। एक दिन वह शहर उत्तरी के एम. एल. ए. अल्ताफुर्रहमान अंसारी साहब के यहाँ गया था। वहाँ उसे मालूम हुआ कि गरकार ने तो बुनकरों के लिए काफी सहायित्तें दे रखी हैं। उनके लिए शेयर कैपिटल, वार. बी. आई. है। लोन लेकर वे अपना काम ज्यादा बढ़िया ढंग में कर सकते हैं। कई लोग मिलकर एक कोआपरेटिव सोसाइटी बना सकते हैं जिसके जरिए लोन भी ले सकते हैं और अपना माल सरकार को तथा बाहर के मुल्कों को अच्छे दामों में बेच सकते हैं। तब से वह इसी फिराक में है कि किसी दिन रययादा² जाकर बैंक में पता लगावे कि किस तरह उसे लोन का रुपया मिल सकता है? मगर फुसंत ही नहीं मिलती।

मतीन अपनी बीबी के पास बैठा है और सोच रहा है। इकबाल कहीं खेलने खला गया है।

अचानक अलीमुन को फिर पांसी आती है और खून का एक छोटा-सा थक्का फाँस पर गिर पड़ता है। मतीन उसे कपड़े से पोंछकर नीचे गली में गिरा देता है।
'वाह रे अल्ला मियाँ'... वह बुदबुदाता है और सिर घामकर बैठ जाता है।

2

गरदया के आगे, बरना पुल के उस पार ताड़ के बागों में शाम कुछ जल्दी ही पहुँच जाती है। और उन बागों में जो बुनकर जल्दी पहुँचता है उसे सबसे अच्छी ताड़ी

1. बड़े सेठों को 'गिरस्ता' या 'कोठीवाल' कहा जाता है। 'गिरस्ता' लोग बुनकर ही होते हैं, पर 'कोठीवाल' प्रायः हिन्दू सेठ होते हैं।
2. बनारस का एक मुहल्ला।

मिलती है। हालांकि बढ़िया ताड़ी तो खुबह ही मिल सकती है—एकदम पेवर नीरा, पर वह जवानों के लिए होती है; जिनके लिए गुनाह करना कोई गुनाह नहीं है। लेकिन जो लोग गुनाह को गुनाह की तरह नहीं करना चाहते वे शाम के झुट-पुटे में इन बगीचों की ओर आते हैं। लुंगी पहने, एक हाथ से उसका टोंका उठाये, टोपी लगाये, अल्ला-रमूल की बातों में मग्नगूल, पाकिस्तान की तारीफ़ करते हुए और हिन्दुस्तान को गालियाँ बकते हुए ऐसे लोग शाम होते ही सारसों की तरह इस क्षेत्र में घँवराने लगते हैं।

लतीफ ने थोड़ी ज्यादा ही पी है आज, पर नज़ा का कहीं पता नहीं है। 'बुरखोदी के पानी बहुत जादा मिलाइसे बे।' वह बुदबुदाता है और आरा मशीन की बगल से निकलकर अंसाराबादवाली मस्जिद के सामने पहुँच जाता है। मस्जिद अभी निर्माणाधीन है। वहाँ चन्दा उतर रहा है और साउडस्पीकर पर एलान हो रहा है :

'हाजी मतिउल्ला गिरस ग्यारा सौ रुपिया !'

'हाजी बलिउल्ला पान सौ एक रुपिया !'

'हाजी अमीउल्ला यकइस सौ रुपिया !'

"हाजी अमीउल्ला केतना दियेन म्याँ ?" साउडस्पीकर से छनकर यह सवाल बाहर आता है।

"यकइस सौ, तोरा केतना लिखै हाजी साहब ?"

"हमरा पाँच हजार रइये। लिखी।"

लतीफ उदास हो जाता है। उदास इसलिए हो जाता है कि वह अपना चन्दा और आगे बढ़कर नहीं लिखवा सकता। यहाँ तो होड़ है। इस होड़ में वह नहीं शामिल हो सकता।

कमरून कल शाम को जाकर अपना छामल दे आयी थी। बता रही थी कि रात में बहुत सारी औरतों ने तबिये-पीतल के बर्तन से लेकर अपने सोने के जेवर भी दे दिये हैं। मस्जिद के लिए। आखिर अल्ला ताला का घर बन रहा है, क्यों न कोई सवाब ले ?

पर उसके पास क्या है कि वह बढ़-बढ़कर चन्दा लिखवाये और उस जहान में जन्नत और इस जहान में नाम कमाये ?

नहीं ! वह चाहे तो कमा सकता है जन्नत। आज रात अगर रेजा उतर जाता है तो साड़ी कल बिक ही जायेगी। वह मतीन की तरह बानी पर थोड़े बिनता है कि गिरस्ता का मुँह जोहेगा। अपना कतान है, अपना करघा है। मेहनत भी अपनी है।

और वह जल्दी-जल्दी घर की ओर बढ़ने लगता है। आज रेजा पूरा ही करना

है, चाहे जैसे हो; ताकि कल वह भी मस्जिद में कुछ दे सके। कल आखिरी दिन है। कल असिरवाद से चन्दा-बसूली बन्द हो जायेगी।

सतीफ घर पहुँचकर सीधे करघे पर बैठ जाता है और शुरू हो जाता है—
खटा-खुट ! खटा-खुट !

सतीफ रात-भर बिनता रहता है। भोर होते-होते रेजा पूरा हो जाता है।

बस, चार सौ का काम हो गया। रेजा अब की बढ़िया उतरा है। चार सौ में बिक जायेगी साड़ी। तीन सौ के करीब निकल जायेंगे कतान-वतान के। सौ बचेंगे। काम चल जायेगा। इक्यावन दे देंगे मस्जिद में, बाकी से घर का खर्च चलायेंगे।

सतीफ मन-ही-मन हिसाब लगाता है और चाय के साथ चासी रोटी खाकर, साड़ी की पेटो बगल में दबाकर, बोड़ी सुलगाते हुए गोलघर की तरफ निकल जाता है।

गोलघर में बड़ी रौनक है। अन्दर दिन में भी रात जैसा समा है। दूकानों में बिजली के फई-कई लट्टू जल रहे हैं और दूकानदार अपनी-अपनी गद्दी पर बैठे ग्राहकों को ताड़ रहे हैं। गद्दियों पर तरह-तरह की जरीदार साड़ियाँ बिखरी हुई हैं और लग रहा है जैसे पूरा-का-पूरा बाजार किसी अनन्त विवाह के लग्न के लिए सुहाग-वेश सजाये बैठा हुआ है।

अलईपुर इलाके के अनेकानेक चुनकर लुंगी पहने, टोपी लगाये, 'रीको' और 'सीको' घड़ियाँ बाँधे, बगल में साड़ी की पेटो दबाये पूरे गोलघर में घूम रहे हैं। यहाँ, सामान्य वेश में भी असामान्य-से नजर आनेवाले भाँति-भाँति के दलाल भी घूम रहे हैं, जो एक ओर तो चुनकरों पर अपना ध्यान लगाये हुए हैं और दूसरी ओर बनारसी साड़ी के खरीददारों पर अपनी बगुला नजर जमाये हुए हैं।

सतीफ एक दूकान के सामने खड़ा हो जाता है। वह चाहता है कि अपने माल का सौदा करे, लेकिन वहाँ कोई बड़ा खरीददार पहुँचा हुआ है। साथ में रामभजन दलाल भी है। सतीफ दलाली की भाषा समझता है, इसलिए रुचि लेकर सुन रहा है। दलाल दूकानदार से पूछता है, "कहिए, मंगलदासजी हैं या नहीं?"

सतीफ समझ जाता है कि यह रुपया पीछे दो आने दलाली पर माल दिखाने के लिए कह रहा है!

दूकानदार कहता है, "बैठो भइ, मंगलदास तो नहीं हैं, लेकिन हमारा-तुम्हारा व्यवहार तो चलता है।"

अर्थात् दूकानदार छः पैसे रुपये की दलाली पर माल बेचना चाहता है।

दलाल निराश हो जाता है, लेकिन हिम्मत नहीं हारता। कहता है, "माप

कांगड़ा। ठीक बलचिए तो गिलीड़ी हो। बाड़ा पलना अभी। गाउली फिर। सलाय जोलाय चहिए।”

अर्थात् ग्राहक धनी है। ठीक से बेचिए तो बात हो। भुगतान अभी हो जायेगा। दलाली फिर दे दीजियेगा। दस-बारह साड़ियाँ चाहिए !

द्रुकानदार कहता है, “दूसरा होता तो खरे में बात होती, पर आपसे व्यवहार चसता है, इसीलिए।”

अर्थात्, दूसरा होता तो एक आना प्रति रुपया ही देता, आप को छः पैसे दे रहे हैं।

खैर...दलाल मान जाता है और माल दिखाने के लिए कहता है। द्रुकानदार नौकर को आदेश देता है, “दमोढ़ा लम् में उक्तो।”

अर्थात् दाम गुप्त भाषा में बोलो।

और व्यापार शुरू हो जाता है। लतीफ बगल में अपनी पेटी दबाये खड़ा रहता है।

अचानक वह अपने कन्धे पर दबाव महसूस करता है और घूमकर देखता है तो हाजी अमीरुल्ला साहब के लड़के कमरुद्दीन को देखकर सहम जाता है। कमरुद्दीन से वह हमेशा सहमत है। हाजी अमीरुल्ला अगर दाढ़ीवाला बड़ा जोंक लगता है तो कमरुद्दीन बिना दाढ़ीवाला छोटा जोंक मालूम पड़ता है। वह धवराने लगता है।

“बेचिहो ?” कमरुद्दीन पूछता है तो लतीफ बर्रा उठता है। लगता है आज यह फिर उसकी साड़ी ले लेगा। इस गोसघर में तो छोटे-मोटे कारीगरों की कोई गिनती ही नहीं है। सेठ-महाजन ध्यान ही नहीं देते। जहाँ लाट-का-नाट माल आ रहा हो वहाँ एक-दो साड़ियों की क्या बिसात ? और अगर मेहरबानी करके ले भी लें तो पैसा बेंगे हफ्ता-भर बाद। तब तक तो कतानवाले गोस्त नोंध डालेंगे। अतः नकद पैसे के लोभ में लतीफ-जैसे टुटपुंजिए कारीगर कमरुद्दीन-जैसे जोंकों के हाथ कम पैसे में ही अपना माल बेच देते हैं।

लतीफ साढ़े तीन सौ में अपनी साड़ी कमरुद्दीन के हाथ बेच देता है।

तीन भी निकल जाते हैं कर्ज के। बाकी बचते हैं पचास। इसी में चाहिए कम-से-कम दस दिनों के लिए आटा, धावल, गोश (भैंस का) और दूसरी चीजें। उनमें से एक चीज मस्जिद भी है। अल्ला मियाँ का घर।

उसका क्या होगा ?

लतीफ मस्जिद के सामने पहुँचता है और लिखवाता है : अब्दुल लतीफ ग्यारा रुपिया। लिखनेवाले सज्जन उसे धूरकर देखते हैं और लाजइस्पीकर पर बगैर एसान किये ही उसके हाथ से दस का नोट और एक का सिक्का लेकर सामने रखे बॉक्स में दास लेते हैं !

वह अंसारावाद की सड़क पर आता है तो लगता है, रास्ता यकबयक काफी लम्बा हो गया है।

3

हाजी अमीरुल्ला साहब अलईपुर के अनेक बड़े गिरस्तों में से एक हैं। कच्ची बाग में उनकी भव्य कोठी है। तिमंजिली। नीचेवाली मंजिल में पचीस करघे गड़े हैं। दमरन में घुसते ही एक पक्का आंगन है, जिसके तीन ओर बड़े-बड़े कमरे हैं। सामने की ओर मिर्क गलियारा है—प्रवेश के लिए। और एक ओर पल्ला-सिस्टम पाखाना, जिसमें वही पुराने जमाने का अलमुनियमवाला एक बेंधना नल के नीचे रखा है और दूसरी ओर ऊपर जाने के लिए सीढ़ियाँ हैं। सामने और दाहिनेवाले कमरे में करघे गड़े हैं, जिन पर ऐसे मजूर चुनकर बन्दरों की तरह झुके हुए साड़ियाँ चुनने में सदैव व्यस्त रहते हैं, जो न तो अपने फरघा-कतान का जुगाड़ कर सकते और न ही बानी पर चिन सकने की हिम्मत जुटा सकते। बायीं ओर गद्दी है, जिस पर बैठने के लिए आंगन में ही अपने जूते उतार देने होते हैं। गद्दी पर एक बड़ी-सी पेंटी रखी है और पास में ही फोन का चोंगा रखा हुआ है।

मतीन जिस वक़्त अपनी साड़ी लेकर गद्दी पर पहुँचा, हाजी साहब फोन पर बातें कर रहे थे, "हलो! हाँ! हम बोलीते, अमीरुल्ला। हलो! का भोवा ओढ़िन? सही? हलो! म्यां तूँ का कहे तो..."

मतीन बैठ जाता है। हाजी साहब इतमीनान से फोन करते रहते हैं और चोंगा जय रख दिया जाता है तो वह गिरस्त के सामने साड़ी सरका देता है।

हाजी साहब साड़ी खोलकर खूब बारीक निगाह से चेक करते हैं और शुरू हो जाते हैं, "का म्यां, देगो कइसी साड़ी बीने हो? केतना-सा ऐब है। एहम चउपट करके रग दीये हो। पूरी सड़िया चउपट है। कइसे ई विकिए?"

"का ऐब है गिरस्त?" मतीन सहमते-सहमते पूछता है तो हाजी साहब और बिफर पड़ते हैं—

"अभइन पूछे तो कि का ऐब है? साड़ी पुजेती तो चेक नाहीं करतो? उल्टे हमई ने पूछे तो कि का ऐब है? देगो, एज्जन ताग मइला है, एज्जन दाग है। हेदे मसी है। दस रुपिया कम होइए!"

हाजी साहब बोलते हैं तो मतीन का दिल बैठ जाता है। न जाने क्या बात है कि हाजी साहब को हर नाड़ी में कोई-न-कोई ऐब जरूर दिखायी पड़ जाता है।

कभी कहेंगे ढाँटी कड़ी लगी है तो कभी कहेंगे ढक लगी है। हजार तरह के ऐब। छोर है, ओखा बिनान है, खेवा कड़ा लगा है, तार का जोड़ है, नाका पड़ा है, हुनर कटा-कटा पड़ा है, तीरी पड़ी है, छापा बड़ा है, रंग ठिकहा है, गण्डा पड़ा है, बाड़ खराब है, कतान महीन है...एतना कम होइए !

बस काम ख़तम। गरज हो तो काम करो बरना रास्ता नापो। इसीलिए तो अल्ताफ जैसे कारीगर बेईमान हो जाते हैं। उस दिन मिल गया था धोलीकोटी पर अल्ताफ; कितनी बुराई कर रहा था अपने गिरस की। हाजी रसीद का ढेरों कर्जा चढ़ा हुआ है अल्ताफ पर, लेकिन वह है कि अपने मन का राजा। जब जो चाहेगा, बिनेगा; नही तो बैठा रहेगा। हाजी साहब क्या कर सेंगे ?

मतीन भी ऐसा कर सकता है, पर उसका खमीर उसे इजाजत नहीं देता इसके लिए।

लेकिन इस तरह की कटौती तो हृद है बेइन्साफ़ी की। आखिर कब तक होता रहेगा यह सब ?

मतीन सोचता है और देर तक वही बैठा रहता है, गुमसुम। फिर उठता है और अगले रोज़ के लिए कतान लेकर चल देता है।

अलीमुन की तबीयत सुधर नहीं रही है। मतीन कतान रखकर फिर डाक्टर अंसारी के यहाँ जाता है। डाक्टर अंसारी उसे डपट देते हैं। छाती दबा-गोली से आराम होगा ? कोई मामूली मजं है क्या ? गिजा-बिजा खिताते नहीं, फरियाद करते हैं कि अच्छी दवा लिखिए। अरे दवा के साथ-साथ उसे मलाई-बलाई खिताओ। अण्डा-मुर्गा खिताओ !

मतीन सुनता है और चुप रहता है। बहस करने से फायदा ?

मतीन को रात में नींद नहीं आती, सिर्फ विचार आते हैं—तरह-तरह के विचार, जो उसे सोने नहीं देते।

बीबी को टी. बी. है। उसे गिजा चाहिए। गिरस जो हैं, उन्हें साड़ी में ऐब-ही-ऐब दोघता है। सरकार जो है, वह चीजों के दाम बढ़ाये हो जा रही है। यह गाड़ी जो है जिन्दगी की, कैसे चलेगी ?

विचार-ही-विचार हैं, बादलों की तरह उमड़-धुमड़ रहे हैं उसके दिमाग में। सवाल-ही-सवाल हैं, आँधियों की तरह उफन रहे हैं उसके दिमाग में।

कि अचानक उसे एम. एल. ए. साहब की बात याद आती है—सरकार ने युनकरो के लिए काफी सहुलियतें दे रखी हैं अब तो। शेयर कैपिटल है, आर. बी. आई. है, कही से भी वह लोन ले सकता है। लोन लेकर अपना निजी धंधा शुरू कर सकता है।

और भोर तक मतीन को नींद आ जाती है।

बुढ़ा वह देर से उठता है। अलीमुन पहले ही उठ गयी है। आज उसकी तबीयत कुछ चमकन है। उठते ही कतान फेरने बैठ गयी है। आज से नया रेजा शुरू होगा।

लेकिन मतीन उसे मना कर देता है। आज वह काम शुरू नहीं करेगा। आज वह रययात्रा जाकर बैंक में पता करेगा कि कैसे उसे लोन का रुपया मिल सकता है? और फिर अपना धन्धा वह अपने से करेगा। किसी हाजी-वाजी की गुलामी अब वह नहीं करेगा।

अलीमुन कतान छोड़कर हाँड़ी-चूली में व्यस्त हो जाती है। मतीन के लिए नाश्ता तैयार करना है। बैंक दस बजे खुलेगा। नौ बजे तक सब तैयार हो जाना चाहिए। रययात्रा दूर भी तो है बहुत।

वह इकबाल को कटोरी देकर मुहल्ले की दुकान में भेजती है, आठ आने का धो लेने के लिए। धो नहीं, डालछा। बड़ियवका धो तो बयालिस रुपया किलो है। 'अउर एकठे अण्ठा ने लेवे।' वह इकबाल को पैसे सहेजकर अंगीठी में कायलेवाले घुरादे की गोलियाँ भरने लगती है।

मतीन नाश्ता करके बैंक के लिए चल देता है।

छित्तनपुरा से मँदागिन तक मतीन पैदल जाता है। वहाँ से गोदौलिया के लिए रिक्शा कर लेगा। फिर रययात्रा तक पैदल। लेकिन रिक्शा उसे मिलता ही नहीं। मँदागिन पर कई रिक्शेवाले खड़े मिले, पर जिससे भी उसने पूछा, 'खाली है?' उसी ने कह दिया, 'नहीं।' एक रिक्शेवाले ने 'हाँ' कहा भी तो बोला, 'लहुराबोर चलेंगे।' बनारस के रिक्शेवाले एहम्मे हरामी हो गये हैं। अभी कालेज की लड़कियाँ मिल जायें तो लंका तक चले जायेंगे भोसड़ियावाले!

मतीन रिक्शेवालों को कोसता हुआ और पैदल चलता हुआ रययात्रावाले बैंक में पहुँचा ग्यारह बजे।

"कहो?"

मैनेजर ने सवाल किया तो मतीन ने बताया कि मैं बैंक से लोन लेना चाहता हूँ, ताकि अपना धन्धा अलग कर सकूँ।

मैनेजर ने थोड़ी देर तक उसे घूरकर देखा, फिर बोला—

"मेयर कैपिटल कैसे बनता है, जानते हो? कम-से-कम तीस मेम्बरों की संगाइटी बनाओ पहले। हर मेम्बर को इसके लिए फीस जमा करनी होगी। फी मेम्बर एक सौ दो रुपये। फिर अपने में से एक चेयरमैन चुनो। उसी को रुपया

1. बनारस का एक मुहल्ला, जो बी. एच. यू. के पास पड़ता है।

दिया जायेगा। सोसाइटी बन जाने के बाद उसे ए. डी. आई. अप्रूव करेंगे, तब वह कागज कानपुर भेजा जायेगा। समय में आया?"

मतीन चुप रहा।

"तुम्हारा क्या नाम है?"

मैनेजर ने उसका नाम पूछा तो अपना नाम उसने बना दिया और चुपचाप बाहर निकल आया।

रथयात्रा चउमुहानी पर आकर उसने देखा कि गन्ने का रस बिक रहा है तो मुँह में पानी भर आया। कितने दिन हो गये रस पिये। और सोच तो जब भी बाहर निकलते हैं कुछ-न-कुछ खा लिया करते हैं। उसी अल्ताफ को देखो, रोज जाता है दासमण्डी कीमे की पकोड़ी खाने, लेकिन वह शायद ही कभी बाहर कुछ खाता हो। पर कभी-कभी मन नहीं मानता। फिर आज तो उसकी जेब में पैसे भी हैं। यह जब भी बाहर निकलता है, अतीमुन कुछ-न-कुछ पैसे उसकी जेब में डाल देनी है।

उसने अठन्नी निकाली और एक गिलास रस पिया—नीबू-नमक डलवाकर। फिर डकार लेता हुआ चल पड़ा।

तीस बुनकर इकट्ठे करने होंगे—सोचता हुआ। लतीफ एक, अल्ताफ दो, बशीर तीन, रऊफ चाचा चार...

अगर तीस बुनकर इकट्ठे हो गये तो हाजी अभीरुल्ला को वह बता देगा कि घन्घा ऐसे होता है।

4

सुबरात का दिन है। घर-घर में हलबे बन रहे हैं। मुहल्ले की लड़कियाँ साटन की ससवार और ल्यूरेक्स की पेरानी (कमीज) पहनकर बालों में अपनी-अपनी भाभियों से अफशा के बेलबूटे बनवाकर इधर-उधर चहक रही हैं। सड़के पटाखे छोड़ रहे हैं। आनन्द का एक समुद्र है, जो छित्तनपुरा से लेकर मदनपुरा तक ये उमड़ा हुआ है।

लेकिन मतीन अपने तीस आदमियों की तलाश में घूम रहा है। जब तक वह तीस आदमी इकट्ठे नहीं कर लेगा, उसे चैन नहीं। अगर कुस मिलकर साठ हजार भी मिल गये लोन के तो दो-दो हजार हिस्सा आयेगा। इतना बहुत है। जिसके पास करघा नहीं है वह करघा गाड़ लेगा, जिसके पास करघा है वह कतान खरीद लेगा और जिसके पास करघा भी और कतान भी है वह अपने कारोबार को और

बढ़ा लेगा। लोगों का मांस भी बाहर के बाजारों में विकने लगेगा। सबके दिन फिर आयेंगे। बस जरूरत है तीस बादमियों की, जो एक सौ दो रुपये खर्च करके सोसाइटी के मेम्बर बन सकें। फिर सबकी जो राय होगी उसी के हिसाब से किसी एक बुजुर्ग को चेयरमैन बना दिया जायेगा।

वह पूरा दिन घूमता रहा। रात हो गयी। लेकिन उसे पाँच बादमी भी ऐसे नहीं मिले जो सोसाइटी के मेम्बर बनने को तैयार हों। तबाल सिर्फ इसका है कि फीस के रुपये कहां से आयेंगे?

मतीन उदाग हो गया।

अलीमुन ने उसके लागे गेहूँ का बना हुआ हलवा रखा तो वह भीतर-ही-भीतर बुझ गया। गेहूँ को मिगोकर, फिर उसकी गिरी निकालकर पता नहीं कैसे-कैसे तो यह बीरत हलवा बनाती है हर सान सुबरात के रोज, जिसे मतीन बड़े चाव के साथ खाया करता है। पर आज उसका जो ठीक नहीं है। एक निवाला खाकर इकबाल को धमा देता है और लेट जाता है।

अलीमुन उसके सिर में तेल डालकर दवाना चाहती है तो उसे भी हटा देता है। उसे दरलभन चैन नहीं है। सोसाइटी बननी चाहिए, जैसे भी हो। गिरस्तों का गढ़ टूटना चाहिए, जैसे भी हो। दिमाग में बस यही एक बात घूम रही है।

सहना उनके दिमाग में आया कि इस सिलसिले में रऊफ चाचा से मिलना चाहिए। रऊफ चाचा भी हाजी अमीरुल्ला के यहाँ से कतान लाकर बानी पर बिनते हैं। उसके बाप के चचेरे भाई हैं, पर सगे चाचा जैसा व्यवहार करते हैं। पहले तो वह दिन में कई बार उनके यहाँ चला जाया करता था लेकिन इधर कई महीने हो गये, नहीं गया। कस जरूर जायेगा।

और मतीन मुबह-मुबह ही रऊफ चाचा के घर पहुँच जाता है।

दरवाजे से अन्दर दाखिल होते ही सामने एक कमरा है जिसमें एक करघा गड़ा हुआ है। करघे पर बँटन¹ पड़ा है। नीचे सन्नाटा है। मतीन ऊपर चला जाता है।

ऊपर नीचेवाले कमरे के बराबर का ही एक कमरा है। कमरे से बाहर थोड़ी खुली जगह है जहाँ बावर्चीघराना बना है।

वह कमरे में पहुँचकर खड़ा हो जाता है। वहाँ भी सन्नाटा है। वह खड़ा-गड़ा कमरे को गौर से देखने लगता है—यह सोचता हुआ कि घर खुला छोड़कर गजबुनिया यहाँ चली गयी? चच्चा तो हो सकता है, चाय पीने चले गये हों। चच्ची की तो खादत है पटोस में जाकर गप हाँकने की।

1. करघा जिस वस्त्र से ढँका होता है, उसे बँटन कहते हैं।

वह देर तक वहीं खड़ा रहता है और कमरे का निरीक्षण करता रहता है। एक तरफ दो चारपाइयाँ खड़ी हैं, दूसरी तरफ एक चौकी बिछी है, जिन पर धिछोने बगैर रहतह करके रखे हैं। दीवारों पर कई-कई असमारियाँ हैं जिस पर घर-गृहस्थी की वस्तुएँ करीने से रखी हुई हैं। एक तरफ एक बड़ा-सा मन्दूक है जिसके ऊपर दो छोटे-छोटे बॉक्स रखे हुए हैं। सबों में सासे बन्द हैं। दीवारों पर कई-कई खूंटियाँ हैं, जिन पर बिनकारी की चीजें टँगी हुई हैं। चर्चा, नटावा, परेता, मोना, मोनी, टेकुआ, सिरकी आदि। एक खूंटो पर एक सालटेन टँगी हुई है और एक कोने में कुछ पड़े रखे हुए हैं।

अचानक नजबुनिया को देखकर वह चौंक उठता है। बावर्चीखाने की बगल में बने हुए पाखाने में से निकलकर वह दरवाजे पर आ गयी है।

“कब आएँ?” वह सवाल करती है और मुस्कराती है।

“अभइने आवा है। कहाँ गयी रहे!” वह बोसता है तो नजबुनिया सजा जाती है। वह चौकी पर बैठ जाता है।

नजबुनिया जमीन पर बैठ जाती है।

“बच्चा कहाँ गयेन?”

“गये ने चाय पिये!”

“अउर अम्मा?”

“बसीर बच्चा किये।”

वह भैया-भइजी के बारे में नहीं पूछता। जानता है कि हनिफवा अलग रह रहा है।

मतीन समझ नहीं पाता कि वह और क्या बोले? फिर न जाने क्या होता है कि वह एक अजीब-सा सवाल कर बैठता है—

“तोरा बियाह कब होइए?”

“भक्क!”

नजबुनिया उसे आँखें तरेरकर देखती है और मतीन के कानों में उसका भक्क-भक्क बजने लगता है।

तभी सीढ़ी पर किसी के आने की आवाज होती है और ठीक उसी समय बावर्चीखाने में भी छड़छड़ सुनायी पड़ती है। नजबुनिया भाग जाती है।

“अरे अत्ता के दूद¹ गिरावा है?” वह बावर्चीखाने में पहुँचकर बुदबुदाती है। और मतीन रऊफ बच्चा के साथ बैठकर सोसाइटी के बारे में बतियाने लगता है।

नजबुनिया का कलेजा धक्-धक् हो रहा है।

मतीन का जी अच्छा नहीं है। अलीमुन को आज फिर खून गया है। इकबाल को घुजली हो गयी है। दिन-रात घुजलाता रहता है। पेशाब की नली में और जाँघों के इर्द-गिर्द ज़र्रम हो गये हैं। डाक्टर खलीकुज्जमाँ अंसारी के यहाँ से दवा आयी है, पर कोई खास फायदा नहीं है।

तोस आदमी अभी तक ठीक नहीं हुए। रऊफ चचा ने पता नहीं किससे-किससे बात की? वैसे उने भी लोगों से दुवारा बात करनी चाहिए। एक दिन के बाद ही तो चुप बैठ गया वह। अरे बार-बार मिलने-जुलने से काम बनेगा कि एककै बार में सब ठीक हो जायेगा। हाजी अमीरुल्ला का गढ़ तोड़ना है। लोगों का गला काट-काटकर बच्चू ने बड़ा धन जोड़ा है। देखते हैं अब कौन बिनता है उनके यहाँ की साड़ी? सब अपना-अपना बिनेंगे और अपना-अपना बेचेंगे। अभी तक हमारी मेहनत की रोटियाँ इन मुठल्लों ने खायी हैं, अब हम खुद खायेंगे। बस सोसाइटी बनने-भर की देर है।

और मतीन अचानक ही बेहद उत्साहित हो उठा। उठकर उसने अलीमुन को दवा पिलायी, इकबाल के ज़र्रमों में मलहम लगाया और बाहर निकल पड़ा। चायखाने की ओर।

मगरिब का वक़्त करीब है। सड़क पर चहल-पहल बढ़ गयी है। मुहल्ले के बेकार लोहे चोराहे पर पान की दूकान पर खड़े हैं और आने-जानेवाली स्त्रियों के बुकें देग रहे हैं। कुछ लोग घुटनों तक लुंगियाँ मोड़े चबूतरों पर बैठे हैं और पान की पीक धूक-धूककर ठट्ठा लगा रहे हैं।

मतीन सबको नजरबन्दाज करता हुआ आगे बढ़ जाता है।

वह खोजितकुर्मा की मस्जिद के सामनेवाले चायखाने में घुसकर बैठ जाता है। चाय का होटल बुनकरों से ग़चाख़च भरा है। लोग दुनिया-जहान की बातों में मशगूल हैं।

“अबे एकठे चाय देवे।”

“अमा अमरीका में एकठे बिल्डिंग में बाग लग गयी, अउर कई आदमी मारे गयेन।”

“हाँ म्याँ, ऊ बहुत बड़ी बिल्डिंग रही अऊर आठ करोड़ की लागत से ऊ बनी रही। सीमे का सब गिरकी अऊर पल्ला रहा।”

“अच्छा एक बात है कि पाकिस्तान भी अब बहुत मजबूत हो गोवा है। अमरीकावाला ओके एफ मोना (एफ-16) दे रहा है। लगेते कि जंग की तैयारी कर रहा है।”

“रूस में एकठे कम्पनी खुली है म्याँ जेम्मे एकठे अइसा जहाज बनेते कि ओम्मे एक हजार अदमी एक साथ बइठ सवेते न !”

“रूस में म्याँ करपा भी बढ़िया-बढ़िया हैं न ! ऊँहा के बुनकर बड़े मजे में हैं न म्याँ ! इँहा त बुरचोदी के रात-दिन खटो, तउने पर परेसान रही !”

“अवे भोगइया के, मुने नाहीं का बे ? एकठे घाय देवे ।”

“अमाँ आजकल बरना¹ में मछरी लगेते कि नाहीं ?”

“आजकल तो मछरी बहुत लगेती । समिउत्सा गये रहेन तो अट्टारा किनों की एकठे मछरी मार के लियाय रहेन ।”

“अवे तनी सलाई दे तो, बीड़ी दगावें ।”

“एनापारी गोहूँ बहुत सस्ता बिकिए म्याँ !”

मतीन चायखाने की गप सुन रहा है और अखबार पढ़ रहा है । उसमें एक विज्ञापन है जो ‘भारतीय हथकरघा प्रौद्योगिकी संस्थान, चौका-घाट’ की ओर से जारी किया गया है :

‘एक कुशल बुनकर पच्चीस विभिन्न प्रकार की उभारदार डिजाइनों को रेशम के एक ही धागे से पैदा कर सकता है ।

एक कुशल बुनकर करघे पर अपनी कारीगरी से बालूघर को पंखुड़ी जैसी कोमलता, तन्तु को सावण्यता, किनखाब को भव्यता, तंछई को ऐन्द्रिक अनुभूति, नांघीपुरम् को आकर्षक सज्जा, पटोला को गहन नक्काशी और जरी को सुन्दर स्वरूप प्रदान कर सकता है ।

हथकरघा वर्मों की बुनाई ने सूती, रेशमी और ऊनी कपड़ों का उन्नति प्रदान की है तथा इसके धागो की मुलायमियत ने शरीर पर सुनहरे मौसम की अनुभूति दी है । कपड़ों की कलात्मकता में हथकरघे की घुरी की कुशलता भी सलकती है । लगभग तीन हजार वर्ष पूर्व से ही हथकरघा के बुनकरों की कुशलता, रंगों के गहन अध्ययन, छूब-सूरत डिजाइनों तथा तकनीकी दक्षता के चलते भारत ने समूची दुनिया को प्रभावित किया है ।’

और भारत ने एक मामूली बुनकर को क्या दिया है ?

मतीन ने अपने छांटे-से दिमाग से विज्ञापन की बड़ी भाषा को समझने की कोशिश करते हुए खुद से ही एक सवाल पूछा तो जबाब की शक्त में चायखाने के भीतर बैठे हुए वे तमाम लोग उसे दिखायी पड़े जिन्हें मालूम नहीं है कि उनके घर में आज आग जली है या नहीं, पर वे अमेरिका की किसी कल्पित इमारत में लगी हुई आग के बारे में चिन्तित हैं ।

मतीन को लगा कि यहाँ चायखाने में बहस-मुवाहसा उचित नहीं है, अतः वह चाय पीकर चुपचाप लौट आया ।

ऊपर पहुँचकर उसने घड़े से मलसी¹ में पानी उड़ेली और खूब छीटा मारकर मुँह धोया । तभी खोजितकुर्बा की मस्जिद और अंसाराबाद की मस्जिद से साथ-साथ लाउटस्पीकर पर मगरिब की अजान सुनायी दी । उसने देखा कि अजान की आवाज कान में पड़ते ही अलीमुन चारपाई पर उठकर बैठ गयी है और ओढ़नी से उसने अपना सिर ढँक लिया है, उस अल्लाह के सम्मान में, जो रब्बुलबालमीन है । रहमान और रहीम है ।

मतीन की भोंहें सिकुड़ गयीं । वह लेट गया ।

6

फजिर की नमाज पढ़कर हाजी अमीरुल्ला बहरी अलंग निकल जाते हैं । साफा-पानी² के लिए । उनका यह रोज का नियम है । पठानी टोला और अंसाराबाद के बीच में उनका एक बगीचा है जो उनका, उनके पूरे खानदान का और उनकी मित्र-मण्डली का सैरगाह है । बगीचे में गुलाब, बेला, रातरानी, जोनिया और नर्गिस के फूल लगे हुए हैं । एक कोने में हजरत आदम को अपने पत्ते देनेवाला अंजीर भी अकड़ता हुआ-सा खड़ा है । वहाँ एक पक्का कुर्मा है और बगल में प्लश सिस्टम पायाना । कुएं के पास दो-तीन शहतूत के झाड़ भी लगे हुए हैं । एक ओर की जमीन को खाँद-खोदकर कुछ ब्यारियाँ-सी बना ली गयी हैं जिनमें मौसमी सब्जियाँ उगायी जाती हैं । बारिश में भुट्टा यहाँ पूव होता है । पीछे की ओर दो पक्के कमरे हैं जिनमें घर के फालतू लड़के कैरम और फातरंज खेलते हैं । दरवाजे के पास ही एक और पक्का कमरा है, जिसमें एक औरत रहा करती है—बगीचे की देख-भाल के लिए । लोगों का कहना है कि यह हाजी अमीरुल्ला की रखैल है । औरत कोई घाल गूबसूरत तो नहीं, पर जवान है और मसल है कि जवानी में तो

1. कटोरे की तरह का एक बर्तन ।

2. नित्य दिया एवं स्नान आदि । बनारस का 'साफा-पानी' मशहूर है ।

कृत्रिया भी धूमधूमरत लगती है। उस औरत के मर्दे ने उसे छोड़ दिया है। मुना यह भी जाता है कि वह मल्साहिन है। वह औरत दिन-भर शृंगार करके पूरे बगीचे में घूमा करती है। सफेद रंग की छाँटदार साड़ी और काले रंग के ब्लाउज में वह गूब जेंचती है, लोगों का ऐमा विचार है। ब्लाउज हमेशा वह बड़े गले का पहनती है, ताकि उसका मोन्दर्य गुप्त न रहने पाये। ब्लाउज के भीतर अँगिया वह गूब कस-कर बाँधती है। बालों में फीता इस तरह गुँथती है कि अठारह साल की छोकरी लगे। उसकी इस अदा पर हाजी अमीरुल्ला ही नहीं, उनके होनेवाले ममथी हाजी मतिउल्ला भी फिदा हैं। वैसे कभी-कभी हाजी अमीरुल्ला के बड़े भाई (जिन्हें लोग हाजी मिनिस्टर कहा करते हैं) भी मजाक कर लिया करते हैं।

हाजी अमीरुल्ला का खानदान बहुत बड़ा है। चार भाई और पाँच बहिनें। फिर हर भाई का अलग-अलग परिवार। सबसे बड़े हैं हाजी मतिउल्ला, उनमें छोटे हैं हाजी मिनिस्टर, फिर हाजी अमीरुल्ला और अन्त में हबीबुल्ला अभी हाजी नहीं हैं, पर जल्दी ही मक्का जानेवाले हैं। पामपोर्ट के लिए अप्लाई कर दिया है।

हाजी मिनिस्टर के बारे में मशहूर है कि हज से लौटते वक़्त अपने लिहाफ में भरकर वे इतना सामान ला रहे थे कि तस्करी के आरोप में पकड़ लिये गये और जेल चले गये। लोगों ने प्रतिक्रिया व्यक्त की कि गये थे हाजी होने, हो गये मिनिस्टर। और तबसे उनका नाम ही पड़ गया—हाजी मिनिस्टर। असली नाम है धरकतुल्ला।

हाजी मतिउल्ला बड़े नेकदिल इंसान हैं। कभी एक पैसा किसी का दबाया नहीं। उल्टे दीन के काम में खर्च ही किया है। एक कालेज खुलवा दिया। एक अस्पताल बनवा दिया। यतीमघराना भी तैयार हो गया है। और क्या चाहिए?

धर का कारोबार हाजी अमीरुल्ला के लड़के ही संभालते हैं। मतिउल्ला के दोनों लड़के पाकिस्तान जाकर बस गये हैं। हाजी मिनिस्टर का कोई लड़का ही नहीं है। हबीबुल्ला के लड़के अभी पढ़ रहे हैं। एक लड़का अभी दस में है और एक आठ में। पढ़ने में दोनों कमजोर हैं, पर इस साल दोनों को पास कराना है। आठ-बाले के लिए तो दिक्कत है नहीं, मास्टर सब धर ही के हैं। नौकरी दी है तो क्या इतना भी न करेंगे? दसवाले के लिए प्रिंसिपल से कहना है कि बोर्ड परीक्षा के सेप्टर पर ऐसे मास्टरो को भेजें जो हर विषय में भरपूर मदद कर सकें।

हाजी अमीरुल्ला के तीन लड़के और दो लड़कियाँ हैं। एक लड़की हबीबुल्ला की भी है। हाजी मतिउल्ला की चार लड़कियाँ हैं जो ब्याह दी गयी हैं।

हर भाई के नाम अलग-अलग कोठियाँ हैं और अलग-अलग करपे हैं। किसी के जिम्मे बीस तो किसी के जिम्मे पचीस। जरी का घग्घा अलग।

हाजी अमीरुल्ला के बड़े लड़के कमरुद्दीन की शादी हो गयी है हाजी उस्मान के

यहाँ। हाजी उत्तमान बनारसी साड़ियों के मजहूर एक्सपोर्टर हैं। उनके यहाँ जरी का काम भी होता है। बड़ी लड़की का ब्याह संगमतुल्ला महतो के लड़के से किया है। मसले लड़के जरफुद्दीन की शादी हाजी बलिउल्ला की लड़की से तय हो चुकी है। छोटा लड़का जमरुद्दीन अंसारी स्कूल में अंग्रेजी पढ़ रहा है।

पचोस करघों से अब काम चलता नहीं। जरदोजी में भी कुछ घरा नहीं है। खर्च बढ़ गया है। हाजी अमीरुल्ला चिन्तित हैं। कोठी भी छोटी पड़ रही है। बशिरवा अगर अपना घर बेच दे तो ले लेंगे उसे। बगल में है। मेल की जमीन है, छोड़ना नहीं है। कमरुवा से कहना है कि बशिरवा को पटाओ। अगर नहीं पटता तो कोई निकड़म नेलना होगा।

महंगाई बढ़ रही है। कमरुवा से यह भी कहना है कि साड़ियों में जरा ध्यान न ऐव देखो, बरना कारोबार कैसे चलेगा ?

हाजी अमीरुल्ला अपने विचारों में इतने मग्न रहे कि कब वे बगीचे में दाखिल हो गये, उन्हें पता ही नहीं चला।

वहाँ पहुँचे तो देखा, हनिफवा उनका इन्तजार कर रहा है।

“कहो म्याँ कइसे ?”

कुएँ की जगत पर अपने शरीर को टिकाते हुए उन्होंने सवाल किया तो हनीफ थोड़ा और आगे सरक आया—

“हम आये हैं गिरस ई बतावे कि ऊ जो मतिनवा है न, कइसी सुसाइटी बनावेते। तीस ददमिन क दसकत करावेते। ऊ कहते लोन मिलिए।”

“हूँ !”

हाजी साहब मुनते हैं और घामोश रहते हैं। हनीफ उठता है और यह आश्वासन देता हुआ चल देता है कि हम उसके कागज पर दस्तखत नहीं करेंगे।

हाजी अमीरुल्ला फिर विनारमग्न हो जाते हैं।

कमरुद्दीन ‘भूसा का गुल’ अपने दाँतों में मलता हुआ उनके पास पहुँचता है और कुछ बात करना चाहता है, पर हाजी साहब कोई तबज्जोह नहीं देते। वे समझ रहे हैं कि मतीन कैसी सोसाइटी बनाना चाह रहा है। अगर यह सोसायटी बन गयी तो ?

हाजी साहब चिन्तित हो जाते हैं।

हालांकि उनके चचा जनाव हमीदुल्ला एमे (एम. ए.) आल इण्डिया हेण्डलूम बोर्ड के मेयरमैन हैं और उनके होनेवाने समधी हाजी बलिउल्ला के बड़े भाई हाजी हमीद मू. पी. हेण्डलूम बोर्ड के मेयरमैन हैं और वे कुछ भी कर सकने में सक्षम हैं, पर मतिनवा के दिमाग में यह बात आयी कैसे ? जरूर उस एमेले (एम. एल. ए.) भोमड़ीबाब की कारखानी है ! ठीक है। बगला चुनाव आवे तो बतावें बुरचोदी को ! अरे, महर उत्तरी के बाधे अंसारियों के वोट तो हमारे हाथ में हैं !

लेकिन मतिनवा की सोमाइटी अगर बन गयी तो ? हमारे करपों का फिर क्या होगा ?

और हाजी साहब अचानक बेहद उदास हो गये । वे उठे और घर की ओर चले पड़े ।

7

हनिफा दो साल से छोटा-मोटा गिरस बन गया है । हाजी अमीरुल्ला की चापलूसी कर-करके कुछ ज्यादा ही पैसे इसने कमा लिये हैं और अब अपने घर में दो करघे निजी बैठा लिये हैं । एक पर खुद बिनता है और दूसरे पर एक कारीगर से बिनवाता है ।

हाजी अमीरुल्ला को मतीन की कारमुजारियों की खबर करके उसने मानो तार मार लिया और उठी छुशी में शाम को सरैया की ओर निकल गया । इधर कई हफ्ते से नशा-मानी का जुगाड़ नहीं हो सका था ।

ताड़ी पीकर लौटने लगा तो रास्ते में सतीफ मिल गया ।

“का म्याँ मतिनवा के का हो गोवा है ?”

इसने बात छेड़ी तो सतीफ गम्भीर हो गया, “कुछ तो नहीं म्याँ । सरकार जब सहूलियत मुहैया करा दियेसे ■ ओके लेव में कउन हर्बा है ?”

“त सोसाइटी बन जइए अब ?”

“जरूर बनिये, बाकी पइसवे क मतला सामने है !”

“तुहूँ दसकत करियां ?”

“हाँ, काहे न !”

इसपर हनीफ धामोश रहा । थोड़ी दूर साथ चलता रहा, फिर तेज-तेज कदम बढ़ाकर आगे हो गया । आगे बर्षार और शरीफ मिल गये । उनसे भी हनीफ ने वही बात की और उन्होंने भी उसे वही जवाब दिया तथा पैसे का रोना रोया । तब यह बिल्कुल धामोश हो गया और गोल-गड्ढा तक सीधे आकर फिर नक्खीघाट की ओर मुड़ गया ।

अलईपुर रेलवे स्टेशन के पासवाला इलाका नक्खीघाट बोला जाता है । वहाँ एक औरत रहती है जो पेशा करती है । दासमण्डी की रण्डियाँ तो अब गायब हो

गर्मा। अब किसी का दिल लतचे तो यही एक जगह है, बरना भेंडुआडीह जाय।
हनिफवा नक्कीघाट ही जाता है। सस्ता भी और नज़दीक भी।

लतीफ घर नीटता है तो अपने दरवाजे से मतीन को बाहर निकलता हुआ देखता
है। लुंगी का टोंका उठाये, मैला-सा कुर्ता पहने, टोपी लगाये... लतीफ को देखकर
वह अपने-आप ही खड़ा हो गया।

“कहो म्याँ कइसे आवे रहेव?”

“बइठा त बात होय?”

“बाबो।”

और दोनों जने करघेवाले कमरे में घुसकर बैठ गये।

“दस जने क दसखत हो गोवा है। बीस अदमी अउर भहिए। कोसिस
करो।”

“होइए म्याँ, सब होइए, पर इ पूछ लिये हो न कि रुपिया मिलिए?”

“हां म्याँ, मिलिए काहे ने?”

“तब होइए, सबुर करो। बस ऊ हनिफव बुरचोदी के हरामी है। भोसड़िया-
वाला दलाली करते।”

“चलो कउनो हर्जा नहिने।”

“कतना मिलिए म्याँ?”

“करीब-करीब साठ हजार जरूर से मिलिए। दु-दु हजार एक-एक जने के।”

“बहुत है म्याँ, बहुत है!”

और मतीन खड़ा हो गया। उसे अभी कई जगह जाना है। आज दिन-भर वह
उसी काम में लगा रहा। उन सभी लोगों के पास वह बारी-बारी से गया जो हाजी
अमीरुल्ला के यहाँ या किसी दूसरे गिरस के यहाँ बानी पर बिनते हैं या टुटपुंजिए
है या नाधारण मजूर हैं। सिर्फ दो लोग रह गये हैं जो गिरस के घर में जाकर बुना
करते हैं। उनसे तो ‘बैठकी’ में ही भेंट होगी। गिरस के यहाँ जाना मुनासिब नहीं।
बरना बात बिगड़ जायेगी।

मतीन बाहर आ जाता है।

कातिक बीत गया है। मौसम में हल्की-हल्की छुनकी शुरू हो गयी है। इस साल दीयाली के दिन हाजी अभीरुल्ला ने अपने कारीगरों को मिठाई का एक-एक किलो-वासा दिब्बा बाँटा है। हर साल आधा किलो का दिब्बा मिलता था। 'आघिरी बुध' के रोज भी एक किलो का दिब्बा नहीं दिया गया कभी। हाजी साहब अमानक इतने उदार कैसे हो गये, यह बात किसी के भी पल्ले नहीं पड़ी।

मतीन को भी एक किलो का दिब्बा मिला और इस बार उसकी बिनी साड़ी में ऐब भी नहीं निकासी गया, जबकि दूसरे सभी कारीगरों की साड़ियों में ऐब निकले। लेकिन मिठाई देने में कोई कोताही नहीं बरती गयी, बल्कि देहात से आने-वाले हिन्दू कारीगरों को तो आधा-आधा किलो के दिब्बे अतिरिक्त दिये गये।

सभी कारीगरों ने हाजी साहब की धूब शारीफ की। गिरस हो तो भाई भइसा।

मतीन के मापे पर बस पड़ गये। उसका कागज अभी अधूरा है। तीस लोग नहीं पूरे हो सके हैं अभी तक। जिन लोगों ने दस्तखत किये हैं उनमें से कइयो ने अभी पैसे भी नहीं जमा किये हैं। वह एक दिन और गया था बैंक, तो बाबू ने उसे घुड़क दिया था। पहले कागज पूरा तो करो, फिर ए. बी. आई. से मिलो। वही भी तो हजार-दो हजार लगेगा, बरना कागज अप्रूव कैसे होगा?

मतीन उठा और रऊफ चचा के यहाँ जाने के लिए बाहर निकल पड़ा।

रऊफ चचा बिन रहे हैं। करपे के पीछे टिका हुआ उनका बूढ़ा शरीर बिल्कुल किताब में छपी कबीर की तस्वीर की तरह लग रहा है। दर्जा पाँच की किताब में मतीन ने वह तस्वीर देखी थी। रऊफ चचा के बदन पर सिर्फ लुगी है और टोपी। कुर्ता उतारकर उन्होंने बगल में रख लिया है। करपे पर बैजनी रंग की एक साड़ी बिनी जा रही है। मरी पर कलाबत्तू सिपटा है और बोटा पर रेशम, मानो आस-मान पर चाँद और सूरज साथ-साथ चमक रहे हैं और दुनिया का करपा एक अखण्ड लय के साथ गतिमान है...

मतीन के पहुँचते ही रऊफ चचा उठ जाते हैं और दोनों ऊपर चले जाते हैं।

"देख बनिया मतीन आया है, ओके पानी-बानी दे।"

मजबुनिया की अम्मा उसे देखकर बोलती है तो मजबुनिया मुस्कराती है।

कनखी से मतीन को ओर ताककर वह एक घड़े में से बत्ताशा निकालने लगती है। रऊफ चचा समस्या पर विचार करने में मग्न हो जाते हैं। देहात के कारीगरों को भी शामिल करना होगा। बस यही एक हल है। वरना तीस आदमी कहां से पूरे होंगे ?

रऊफ चचा की राय मतीन को जंचती है। सिर्फ शहरी कारीगरों से काम नहीं चलेगा। सभी तरह के परेशान लोगों को शामिल करना होगा। लेकिन समस्या सिर्फ यही है कि लोगों के पास पैसे कहां से आयेंगे ? पैसे का ध्यान आते ही मतीन का चेहरा मुरसाने लगता है। लेकिन रऊफ चचा का उत्साह कम नहीं होता।

“तू घबराओ न मतीन, सब होइए। मगर टैम पर। बिना टैम के म्यां कउनो काम भोवा है कम्भों ?”

और वे अपनी चमकीली आँखें मतीन के चेहरे पर टिका देते हैं। उन आँखों में अनुभव और मेहनत की गहरी धाराएँ छिपी हुई हैं। ऐसा मतीन को लगता है।

“हां चच्चा, तू ठीक कहें तो !” वह इतनी देर बाद बस एक वाक्य बोलता है और पड़ा हो जाता है।

“कहां चलेव ?”

“आज पियाला है न चच्चा, चलें देखें, कुछ लोगन से बतियावें।”

“हां, मेला में तो बहुत जने मिलियें। ठीक याद दियायो, हम भी जुम्मा पढ़े की तैयारी करें।”

“अच्छा सत्तावाले कुम।”

और मतीन झटके के साथ बाहर निकलकर सड़क की ओर बढ़ जाता है।

नजयुनिया नगोल (छत) पर पड़ी-पड़ी उसे देखती रहती है।

आज ‘पियाला’ है। चौका पर का जुम्मा। अगहन का पहला शुक्रवार। आज बिरादरी के लोग मस्जिदों में नमाज नहीं पढ़ेंगे। आज नमाज होगी चौकाघाट के मैदान में। सुबह से ही तैयारी शुरू है।

तैयारी सिर्फ नमाज की ही नहीं, इस साल तैयारी लड़ाई की भी हो रही है। पुरानी बाइसी और नयी बाइसी में भिड़ी हुई है। जब से नयी बाइसी बनी है तभी से चौका पर के जुम्मे को लेकर विवाद पड़ा हुआ है। और कुछ नहीं, झगड़ा उस मैदान का है जहाँ नमाज होती है। मतीन जानता है। उसे मालूम है कि उस जमीन के हक्द्वार एक ओर हाजी अमीरुल्ला हैं—पुरानी बाइसीवाले, तो दूसरी ओर हाजी रसीमुल्ला हैं—नयी बाइसीवाले। पहले जब एक ही बाइसी थी तो भी इन दोनों लोगों में भिड़ी रहती थी। न कोई सरदार की सुनता या न महतो की। अब तो

दोनों के गरदार-महती अलग-अलग हैं।

चौमाघाट में मेला नया हुआ है। जुमे की नमाज के बाद तकरीह शुरू होगी। एक तरह से बनारसी जुताहों की यह डिठवन एकादशी है। जंगह-जंगह ऊख के पहाड़ गँजे हुए हैं। सोग नमाज पढ़ेंगे, ऊख खरीदेंगे और अपने-अपने घर खाना होंगे।

“तू केहर हो म्याँ?”

“जनतो नाहीं का, हम नयी बाइसाँ में हैं।”

“आज तो भिड़िए!”

“भिड़े दो म्याँ, का करे के है।”

बातचीत का यह टुकड़ा मैदान में उमरता है और उधर पता चलता है कि ऊखवाले के टाल पर झगड़ा हो गया है। सोग टाल में से ऊख निकाल-निकालकर एक-दूसरे को ऊख के ढण्डे से-ही भार रहे हैं और चारों ओर भगदड़ मची हुई है।

“केसर क हउरा है म्याँ?”

मतीन पूछता है तो अस्ताफ ऊख के टाल की ओर दौड़ता हुआ जल्दी-जल्दी जवाब देता है, “झगड़ा हो गोवा है।”

और सब मजा किरकिया।

क्षण-भर पहले जो नमाजगाह थी वह अब जंगगाह बन गयी थी। लेकिन चाहे नमाज हो और चाहे जंग हो, जिस आदमी के जहन में कोई दूसरा ही तूफान भरा हो, वह अपनी ही धुन में खोया रहता है। मतीन पूरे मेले में अपनी सोसायटी को लेकर ही घूमता रहा। और इस वक्त जबकि सारी दुकानें उठ गयी हैं और ‘पियाले’ की छुपी लड़ाई के दरिया में सुप्त हो चुकी है, तो भी वह अपनी सोसायटी के बारे में ही सोच रहा है।

“तू दसखत करयो? पइसा मिसिए।” रास्ते में मतीन अस्ताफ को टोकता है।

“करें, मगर रुपिया नहिने हमरे संग।”

“दसखत तो करियो?”

“हाँ करें।”

और वह जेब से कागज निकालकर सड़क पर ही उसमें दसखत ले लेता है। बादस हो गये।

“अबे, अबे चल गुल्ली-डण्डा खेला जाये।”

नतीफ का लड़का शरीफ इकबाल को खेलने के लिए उकसाता है तो वह तैयार हो जाता है।

“हाँ वे हाँ, चल खेला जाये, बड़ी मजा भइये।”

“अबे भक, गुल्ली-डण्डा नाहीं खेला जइये।”

यही छड़ा हनीफ का लड़का बिराहिम बीच में टुपक पड़ता है और इकबाल बिगड़ जाता है।

“अबे तैं हमरे संग काहे आवेते वे ? भाग जैं नाहीं तो पटक के मारें।”

लेकिन जमील नहीं भागता। वहीं छड़ा रहता है। यह बात शरीफ को भी बुरी लगती है और वह भी उठे डपटता है, “अबे बुरचोदी के तोरी का करों में भाग जैं एज्जन ने नाहीं तो अच्छा न होइए।”

“बेटा उठा के पटक दें, मरी जइयो।”

इकबाल को और ग्राह मिलती है।

जब बिराहिम देखता है कि ये दोनों ही एक में मिल गये हैं तो वहाँ से चल देता है, लेकिन धीरे-धीरे बुदबुदाता जाता है—

“तोरे में एतनी दम्मी है ? तोरे बाप तो मारी नाहीं सकतेन, तैंका मरबे वे ?”

लेकिन इकबाल और शरीफ उसे अनसुना कर देते हैं। शरीफ एक और गड़बा बनाने लगता है और इकबाल गुल्ली लेकर थोड़ी दूर पर छड़ा हो जाता है।

बाहर सूर्य अपने ढलान पर है और गलियों में इमारतों के बड़े-बड़े साये पसरने लगे हैं। घर-उधर, जहाँ भी चाली जगह पड़ी हुई है या तो कारीगर अपना ताना फैलाये हुए हैं, या मुहल्लों के बच्चे धमा-चौकड़ी मचाये हुए हैं। उनमें से कुछ गैद गेल रहे हैं तो कुछ गुल्ली-डण्डा। कुछ आँच-मिचडवल में मग्न हैं तो कुछ ‘चोर-सिपाही’ बने दोड़ रहे हैं। घरों में उनके माँ-बाप भविष्य की योजनाएँ बना रहे हैं।

बलीमुग की तबीयत कुछ ठीक हो गयी है। वह मतीन से बातिया रही है। घर-गृहस्थों के बारे में, लड़के के बारे में, कपड़े-लत्ते के बारे में। बातें-ही-बातें हैं।

“एक बलया क नठवाँ लिघाय दो एनापारी।”

“हमहूँ सोचोते। दिनचौ-भर खेतत रहेते।”

“उहै कमरनिषा क लड़का बिगाड़ेते ओके।”

“ऊ न पड़िये का ?

“क जानी पड़िये कि नाही ! कहत त रही कमरनिषा की संभावले मनरसा में

नांव लिखाएँगे। दिनवां मे बिनकारी सिखिए। दिन-रात ओका धियान पइसवे मे रहेते। तोरा कागज क का भोवा।”

“तैं का करवे जान के? होइ न! अमई अउर रुपिया चइए।”

असीमुन चुप हो जाती है।

मतीन भी चुप हो जाता है।

एय्या कहाँ से लायेंगे लोग? जो लोग बानी पर बिनते हैं उन्हें मजदूरी इतनी कम मिलती है कि हफ्ते का खर्च चलाना ही मुश्किल हो जाता है। जो लोग अपना मांस खरीदकर बिनते हैं उनके ऊपर कतान और कलावत्तू का कर्जा इतना होता है कि इधर से आया और उधर गया। गिरस्ता के घर जाकर मजदूरी पर बिनने-बालों की हासत तो और भी खराब है। किसी भी मामूली बुनकर के लिए एक सौ दो रुपये का इन्तजाम करना मुश्किल है। फिर ए. बी. आई. के लिए भी तो कुछ चाहिए। वह कहाँ से लायेगा?

मतीन की इच्छा है कि इकबाल को वह अंग्रेजी स्कूल में पढ़ायेगा। लतीफ तो अपने लड़के को मदरसे में भेजनेवाला है। मदरसे में पढ़ाकर क्या होगा? क्या मोलबी बनाना है उसे, कि लड़का दाढ़ी बढ़ाकर चटाई बँधना सिये इस मस्जिद से उठा मस्जिद तक धूमता रहे जिन्दगी-भर। नहीं। इस साल वह इकबाल का नाम अंसारी स्कूल के प्राइमरी सेक्शन में जरूर लिखवा देगा। इकबाल से वह दिनकारी थोड़े न करायेगा।

यह अजीब इत्तफाक है कि जिस वक़्त मतीन अपने लड़के की तालीम के बारे में सोच रहा था, उस वक़्त लतीफ भी वही सब सोच रहा था।

लतीफ की इच्छा है कि शरीफ को मदरसे में दाखिल करायेगा। अरे अंग्रेजी स्कूल में पढ़कर क्या करेगा? कौन उसे नौकरी करनी है! करना तो यही अपना ही काम है। थोड़ा और बड़ा हो जाय तो पेटी लेकर गोलघर¹ जाने लामक हो जायेगा।

फिर मदरसे में पढ़ने से कई फ़ायदे हैं। एक तो यह कि दिन में खाली रहेगा और बिनकारी में मदद करेगा। मतीन की तरह थोड़े न उसे भूखों मरना है। अपना करपा है। लड़का भी अगर मदद करेगा तो ज्यादा काम होगा। फिर जैसा कि मतीन कह रहा है, अगर लोन का एय्या मिल गया तो एक करपा और गाड़ लेगा। इसके अलावा लड़का अपने दीन-मजहब की बातें सीखेगा, कुरान-हदीस पढ़ लेगा, यह क्या कम फ़ायदा है?

अभी ये लोग अपने-अपने घरों में बैठे अपने-अपने लड़कों के भविष्य के बारे में सोच

1. बनारसी साड़ियों का मार्केट।

अबे चल गुल्ली-डण्डा खेला जाये।”

तोफ का लड़का शरीफ इकबाल को खेलने के लिए उकसाता है तो वह तैयार
नहीं है।

हाँ वे हाँ, चल खेला जाये, बड़ी मजा अइये।”

अबे भक, गुल्ली-डण्डा नाहीं खेला जइये।”

ये पड़ा हनीफ का लड़का बिराहिम बीच में टपक पड़ता है और इकबाल
गता है।

खे तै हमरे मंग काहे आवेते वे ? भाग जै नाहीं तो पटक के मारने।”

केन जमीन नहीं भागता। वहीं पड़ा रहता है। यह बात शरीफ को भी
जानी है और वह भी उसे डपटता है, “अबे बुरचोदी के तोरो का करो में
एज्जन मे नाहीं तो अच्छा न होइए।”

टा उठा के पटक दें, मरी जइयो।”

इकबाल को और गह मिलती है।

बिराहिम देखता है कि ये दोनों ही एक में मिल गये हैं तो वहाँ से चल
लेकिन धीरे-धीरे बुदबुदाता जाता है—

तेरे में एतनी दम्मी है ? तोरे बाप तो मारी नाहीं सकतेन, तँका मरवे वे ?”

केन इकबाल और शरीफ उसे अनसुना कर देते हैं। शरीफ एक और गड़बा
गता है और इकबाल गुल्ली लेकर घोड़ी दूर पर खड़ा हो जाता है।

हर मूँष अपने इलान पर है और गलियों में इमारतों के बड़े-बड़े साये
पड़े हैं। उधर-उधर, जहाँ भी खाली जगह पड़ी हुई है या तो कारीगर
ना फँसाये हुए हैं, या मुहल्लों के बच्चे धमा-चीकड़ी मचाये हुए हैं। उनमें
‘दे गेल रहे है तो कुछ गुल्ली-डण्डा। कुछ आँच-मिचढवल में मग्न हैं तो
‘र-निगाही’ बने दौड़ रहे हैं। घरों में उनके माँ-बाप भविष्य की योजनाएँ
हैं।

मेमन की तबीयत कुछ ठीक हो गयी है। वह मतीन से बातिया रही है।

घो के बारे में, लड़के के बारे में, कपड़े-लत्ते के बारे में। बातें-ही-बातें हैं।

क बलया क नउवाँ लिगाय दो एनापारी।”

महूँ सोचते। दिनवाँ-भर खेलत रहेते।”

है कमरनिया क लड़का बिगाड़ेते ओके।”

न पड़िये का ?

जानी पड़िये कि नाहीं ! कहत त रही कमरनिया की संसावाले मनरसा में

नी-शानी बीनी बदरिया

नांव लिखाएँगे। दिनवाँ में बिनकारी सिखिए। दिन-रात ओका धियान पढ़सबे में रहते। तोरा कागज क का भोवा।”

“तै का करवे जान के ? होइ न ! अमई जठर रुपिया चइए।”

असीमुन चुप हो जाती है।

मतीन भी चुप हो जाता है।

रुपया कहाँ से लायेंगे लोग ? जो लोग बानी पर बिनते हैं उन्हें मजदूरी इतनी कम मिलनी है कि हफ्ते का खर्च चलाना ही मुश्किल हो जाता है। जो लोग अपना मान खरोदकर बिनते हैं उनके ऊपर कतान और कलावत्तू का कर्जा इतना होता है कि इधर से आया और उधर गया। गिरस्ता के घर जाकर मजूरी पर बिनने-वाल्लों की हातत तो और भी खराब है। किसी भी मामूली बुनकर के लिए एक सौ दो रुपये का इस्तजाम करना मुश्किल है। फिर ए. डी. आई. के लिए भी तो कुछ चाहिए। वह कहाँ से लायेगा ?

मतीन की इच्छा है कि इकबाल को वह अंग्रेजी स्कूल में पढ़ायेगा। सतीफ तो अपने लड़के को मदरसे में भेजनेवाला है। मदरसे में पढ़ाकर क्या होगा ? क्या मोलबी बनाना है उसे, कि लड़का दाढ़ी बढ़ाकर चटाई बँधना लिये इस मस्जिद से उस मस्जिद तक घूमता रहे जिन्दी-मर। नहीं। इस सान वह इकबाल का नाम अंसारी स्कूल के प्राइमरी सेवशन में ज़रूर लिखवा देगा। इकबाल से वह बिनकारी थोड़े न करायेगा।

यह अजीब इत्फाक है कि जिस वक़्त मतीन अपने लड़के की तालीम के बारे में सोच रहा था, उस वक़्त सतीफ भी वही सब सोच रहा था।

सतीफ की इच्छा है कि शरीफ को मदरसे में दाखिल करायेगा। अरे अंग्रेजी स्कूल में पढ़ाकर क्या करेगा ? कौन उसे नौकरी करनी है ! करना तो वही अपना ही काम है। थोड़ा और बड़ा हो ज़ाय तो पेटी लेकर गोलघर¹ जाने लायक हो जायेगा।

फिर मदरसे में पढ़ने से कई फ़ायदे हैं। एक तो यह कि दिन में खाली रहेगा और बिनकारी में मदद करेगा। मतीन की तरह थोड़े न उसे झूठों मरना है। अपना करपा है। लड़का भी अगर मदद करेगा तो ज्यादा काम होगा। फिर जैसा कि मतीन कह रहा है, अगर सोन का रुपया मिल गया तो एक करपा और गाड़ लेगा। इसके अलावा लड़का अपने दीन-मजहब की बातें सीखेगा, कुरान-हदीस पढ़ेगा, यह क्या कम फ़ायदा है ?

अभी ये लोग अपने-अपने घरों में बैठे अपने-अपने लड़कों के भविष्य के बारे में सोच

1. बनारसी साड़ियों का मार्केट।

तो रहे दे कि हनिफवा जमील को लेकर आ धमका। पहले वह लतीफ के घर गया, फिर मतीन के। वह बाहर गली में से ही बुरी-बुरी गालियाँ बकने लगा और कहने लगा कि इन दोनों भोखड़ियावालों के लड़कों ने मिलकर मेरे लड़के को मारा है, मैं इसका बदला लेकर रहूँगा।

इस पर जब लतीफ ने भी जवाबी गालियाँ देनी शुरू कर दीं तो वहाँ से तो हनीफ धबकाकर भाग पड़ा हुआ, पर मतीन ने चाहा कि उसे सीधे से समझा दिया जाय तो वह और बमक गया। बीच में अलीमुन को भी बोलना पड़ा, तब जाकर वह शान्त हुआ।

हनीफ जब चला गया तो उधर लतीफ ने शरीफ को दो चप्पड़ लगाये और उधर मतीन ने इक्याल को एक घूँसा जमाया, कि ऐसे बुरचोदीवालों से क्यों लगते हो?

इस पर उधर कमरून लतीफ पर बमक उठी तो इधर अलीमुन मतीन पर।

अलीमुन को फिर घाँसी आ गयी।

घाँसी के साथ घून।

मतीन घून देखकर परा उठा।

डॉक्टर अंसारी इस वक़्त मिलेंगे या नहीं? वह थोड़ी देर तक सोचता रहा, फिर कमीज पहनकर बाहर निकल गया।

10

लतीफ अपने बड़े बेटे शरीफ को बिनकारी सिखा रहा है। शरीफ को उम्र लगभग दस साल है। उससे छोटा एक और लड़का है जो अभी नंगा रहता है। शरिफवा लुंगी पहनता है। मुहल्ले में ऐसे चार-चार साल के लड़के भी लुंगी पहनते हैं। उनकी नाप की नन्ही-नन्ही लुंगियाँ यहाँ दालमण्डी की दूकानों में मिल जाती हैं।

बड़ी लड़की अदतुनिया नरी' भर रही है। घर के हर फ़र्द को कुछ-न-कुछ काम करना पड़ता है। बँठने ने काम नहीं चलने का। शरिफवा को डंग आ जाय तो एक दूसरा करपा गाड़ लिया जायेगा। ग़िलवाड़ी है, चरना इतने-इतने लड़के तो अलग से रेजा बनाने लगते हैं।

1. बिनकारी का एक यन्त्र, जिसमें धागा भरा जाता है।

शरिफवा इस ताक में रहता है कि बाज इधर-उधर हटे तो कन्नी काटकर सरक जाय। उसके दोस्त कब्रस्तान में इन्तजार करते होंगे। सतिफवा बीसे तो हटता नहीं, पर पान-पान की तलब लगती है तो हटना पड़ता है। बिना नसा-पानी के काम होता नहीं।

सतिफवा हटा कि शरिफवा बाहर।

शरिफवा की टेंट में आज पैसे हैं। माँ से झटका है। वह एक दुकान में बैठकर चाय पीता है और बाहर निकलकर पान की दुकान पर खड़ा हो जाता है। लोग उसे हैरत की निगाह से देखते हैं। इतना छोटा-सा लड़का पान चायेगा!

लेकिन वह किसी की परवाह नहीं करता। नशे की उसकी भी आदत पड़ गयी है। पान के साथ चुटकी-भर घुसो हुई सुती फाँककर घूना खाटता हुआ वह कब्रस्तान की ओर निकल जाता है।

कब्रस्तान में एक ओर ताने फँसे हुए हैं और दूसरी ओर लड़के क्रिकेट खेलने की तैयारी कर रहे हैं। जब से पाकिस्तान ने भारत को हराया है तब से यहाँ का हर लड़का इमरान खाँ बनने का ख्वाब देख रहा है। विपक्ष में एक नहीं, कई-कई मायस्कर हैं।

शरिफवा बहुत तेज 'बासी' मारता है।

कुएँ के पास ईंट-पर-ईंट जोड़कर स्टम्प खड़ा किया गया है और उसी के पास एक लड़का बाँस का बट लिये खड़ा है। स्टम्प के सामने एक मरियल-सा लड़का बिकेट कीपर बना झुका हुआ है। गेंद को वह टॉप फेंसाकर अपनी लुंगी में रोक लेता है। शरिफवा लुंगी पहने, पतले-पतले होंठों में पान की पीक भरे, कपड़े का गेंद लिये धीझ-धीझा माता है और हुमचकर बासिंग करता है।

"बजवा।"

लड़के भीघते हैं और बीच जोर पकड़ लेता है। आज हिन्दुस्तान सैंटहियोवाने को हरा के रहना है।

उधर सतीफ जब घर पहुँचता है तो देखता है, करघा सूना पड़ा है। दरकी खामोश है। शरिफवा गायब है।

वह बीबी पर उखड़ जाता है। इसी हरामजादी के चलते लड़का बिगड़ रहा है। यावारा हो जायेगा, और कुछ नहीं। देखती नहीं, मतिनबा का लउंडा दिन तरह दिन-भर घर में बना रहता है।

सतीफ शरीफ को बुँदने निकल जाता है। पहले वह मतीन के यहाँ पहुँचकर इकबाल से पूछता है, फिर हनीफ के घर जाता है, फिर अस्ताफ के घर। हनीफ अस्ताफ का लड़का तो अभी खेलने लायक हुआ भी नहीं। फिर भी। नन्हा है कि

पानी हेराती है तो लोग उसे सुराही में भी ढूँढ़ते हैं ।

लतीफ हेरान हो जाता है ।

संझा करीब है । सर्दों भी बढ़ने लगी है । दिया-बत्ती का टैम अउर इ लउंडा है कि बुरचोदीवाला पता नहीं कहाँ चला गया ?

वह गड़क पर गड़ा अभी कुछ तय ही कर रहा था कि एक ओर से समिडल्ला अपने लउंडे को डाँटते हुए निकल आया जो सड़क के बम्बे पर एक लड़की का झोंटा पकड़कर उसे बम्बे में हटा रहा था ।

"काहे रिघी' करते रे ?"

वह अपने लड़के को डपटता है और लतिफवा को सूचना देता है कि उसका लउंडा कब्रस्तान में मँच खेल रहा है ।

लतिफवा लुंगी का टोंका उठाकर तेज-तेज कदमों से कब्रस्तान की ओर चल देता है ।

थोड़ा नज़दीक पहुँचने पर वह देखता है कि कब्रस्तान में खेल तो नहीं हो रहा है, हाँ कुछ लड़के एक जगह जमा हैं और चिल्ला-चिल्लाकर बातें कर रहे हैं—

"जब कँच हो गोवा त अउट नाहीं हो गोवा वे ?"

"बुरचोदी के हट, चनेन अउट करे के !"

"एक रो बहिन क...छोड़ वे कि नाहीं वे ?" इस बीच एक लड़का किसी के हाथ से बँट छीन लेता है और शुरू हो जाता है युद्ध ! छीना-झपटी, मार-पीट । देखते-ही-देखते हिन्दुस्तान-पाकिस्तान में बुरी तरह भिड़न्त हो जाती है !

लतीफ अपनी लुंगी पटककरता हुआ तेजी के साथ वहाँ पहुँचता है और अपने लउंडे को एक घण्टा जमा देता है । शरिफवा का चँचुरा पकड़ के वह उसे कब्रस्तान से बाहर ले आता है ।

युद्ध शान्त हो जाता है ।

पर आकर शरिफवा फिर करघे पर बैठ जाता है, लेकिन लतीफ उसे उठा देता है । धाज मदरसे में उसका दागिला वह जरूर करा देगा ।

बनारस में चारों ओर मदरसे-ही-मदरसे हैं । मन्दिरों, मस्जिदों, घाटों और मदरसों का ही शहर है यह । कोई मतलबल उलूम है, तो कोई मजहूरल उलूम । कोई मदरना फ़ाकिरिया है तो कोई हमीदिया । अरबी माध्यम से एक छोटी-मोटी जामिया (यूनिवर्सिटी) भी अब यहाँ गुल गयी है । कुछ दिनों पहले तक वहाँ दो प्रोफेसर अरब के भी थे । पर अचानक एक रोज रात में एक प्रोफेसर साहब के घर

में कुछ भारतीय लुटेरों ने ऐसा धावा बोला कि दोनों ने ही यह मुन्क छोड़ दिया।

मदनपुरा के एक मदरसे में दो कमेटियाँ हो गयी हैं और दोनों कमेटियों का दावा है कि मदरसे पर हमारा अधिकार है। नतीजा यह निकल रहा है कि मदरसा बन्द है। दोनों मैनेजर मुकदमा लड़ रहे हैं और उस्ताद लोग सबक पर हैं। लड़कियोंवाले संरक्षण की उस्तानियाँ अपने-अपने घरों में स्वेटर चुन रही हैं। सिर्फ़ एक उस्ताद है गुफ़्फ़ार खाँ, जो मुकदमा लड़ रहे हैं। ये दोनों मैनेजरों की पंरबी एक साथ कर रहे हैं। जिधर से ज्यादा पैसा मिलता है, उधर ही उनकी पंरबी ज्यादा झुक जाती है।

अरबी मदरसों की निदेशिका हैं—श्रीमती खोहरा रिखी, जो इसाहाबाद में रहती हैं और गुलाबो की शौकीन हैं। यहाँ बनारस में जो डिप्टी साहब हैं उनकी बीबी बनारसी साहियो की शौकीन हैं। अतः गुफ़्फ़ार खाँ खोहरा रिखी को धुश करने के लिए तरह-तरह के गुलाबो की डालियाँ पेश करते हैं और मैनेजर लोग डिप्टी साहब को धुश करने के लिए उनकी बीबी के बास्ते संछई और जरी की साड़ियाँ पेश करते हैं। मदरसा फ़ैमसे के इन्तजार में है।

लेकिन खोजित कुर्मा की मस्जिद में जो मदरसा चलता है वह इस प्रकार के हागड़ों से मुक्त है। सतीफ़ अपने बचपन में इसी मदरसे में जाया करता था। बाप चाहते थे कि हाकिमा कर ले, लेकिन कहीं कर सका? अब बेटे को करायेगा।

शरीफ़ को लेकर सतीफ़ जब खोजित कुर्मा की मस्जिद में दाखिल हुआ तो मगरिब की नमाज़ पढ़म हो चुकी थी और नमाज़ी लोग जा चुके थे। मस्जिद में जो मदरसे का क्षेत्र था उसके बरामदों में, सहन में और सीढ़ियों के नीचे तुल्बा¹ अपनी-अपनी उर्दू-अरबी की किताबें धोले, तख्तियाँ रगड़ते और किरिच की कलम काटते बैठे थे और उस्ताद लोग दरी के छोटे-छोटे टुकड़ों पर बैठे आगे रखी हुई धब्येदार बेत्को पर झुके मदरसे के रजिस्टर ठीक करने में ध्यस्त थे।

हेड मास्टर साहब ऊपर थे। सतीफ़ जब ऊपर पहुँचा तो यह देखकर आश्चर्य-चकित हो गया कि यहाँ छत पर एक ओर मतीन खड़ा था और मदरसे के एक उस्ताद से बातिया रहा था। यह तो कह रहा था कि अपने सबके को अंसारी स्कूल में दाखिल करायेगा, यहाँ कैसे आ गया?

“सत्तावाले कुम।”

पाग पहुँचकर सतीफ़ ने सत्तामी दागी तो मतीन चौंक पड़ा।

“का म्याँ तू एहर कहसे?”

नतीफ ने बात शुरू की तो मतीन ने सारी स्थिति स्पष्ट कर दी। जिस उस्ताद के साथ वह बातें कर रहा था उसका नाम नसीम था और वह भी दिन में बानी पर चिना करता था। चूँकि उसने फाजिल की डिग्री हासिल कर रखी थी इसलिए उसे यहाँ मुदरसी मिल गयी थी। वह बेहद परेशान था। मतीन उससे भी सोसाइटी के बारे में बात कर रहा था और वह मेम्बर बनने के लिए तैयार हो गया था।

नतीफ ने सारी बातें जब साफ कर ली तो शरीफ को लेकर हेड मास्टर के कमरे की ओर चला गया। मतीन वहीं खड़ा रहा, हालाँकि छत पर अब काफी ओस पड़ने लगी थी।

11

हाजी अमीरुल्ला अभी-अभी रथयात्रा से लौटे हैं। बँक गये थे।

हाजी मिनिस्टर अपने कारीगर बशीर से उसके मकान के बारे में बात कर रहे हैं। वे सलाह दे रहे हैं कि इस मकान को बेच दो। बशीर का मकान हाजी अमीरुल्ला के मकान से सटा हुआ है। मकान क्या है, वस एक कमरा नीचे और एक कमरा ऊपर। ऊपरवाला हिस्सा खपरैली है, जिसके आगे एक छोटा-सा दालान है। उसी में अपनी तीन लड़कियाँ और दो लड़कों के साथ वे मियाँ-बीवी रहते हैं।

बशीर हाजी अमीरुल्ला के घर आकर उनके करघे पर बिनते हैं। बूढ़े हो गये हैं, पर कारीगरी में ख़रा भी जब नहीं आया है। कितना ही मुश्किल डिजाइन हो, वे बिनकर रख देंगे। भले पन्द्रह दिन लग जायें। बल्कि होता करीब-करीब यही है कि बहुत मुश्किल डिजाइन का नक़्शा उन्हें ही दिया जाता है, जिसे बिनने में अक्सर बारह-पन्द्रह दिन लग जाते हैं। मजूरी जरूर कुछ ज्यादा मिलती है, पर ख़यादा भी गया, वही पन्द्रह-बीस रुपये का फ़र्क पड़ता है। फिर भी पन्द्रह-सोलह रुपये रोज़ में ज्यादा नहीं पड़ता। किसी तरह गाड़ी खींच रहे हैं। वस यों समझ लीजिए कि मुबह नाश्ता नहीं बनता। रात की बची हुई रोटियाँ चाय में डुबोकर खा लेते हैं और काम पर हाज़िर। दोपहर में वही दाल-रोटी। किसी-किसी दिन भैंस का गोشت और हफ़्ते में किसी एक दिन चावल। उसी में रोग-बीमारी का इलाज भी।

हाजी मिनिस्टर चाहते हैं कि बशीर अपना मकान उनके हाथ बेच दें। बदले में वे चाहेंगे तो बगीचे के पास कहीं जमीन दिसवा देंगे।

बधीर घामोश हैं।

हाजी अमीरुल्ला आते हैं तो बधीर को और सातब देते हैं। जब सातब देने पर भी वे घामोश रहते हैं तो खुद भी घामोश हो जाते हैं और बधीर को जाने के लिए कह देते हैं।

बधीर के जाने के बाद हाजी अमीरुल्ला थोड़ी देर तक मुमसुम बने रहते हैं। फिर अचानक ही मुस्करा उठते हैं। हाजी साहब मुस्कराने हैं तो उनके होंठ थोड़ा फँस जाते हैं और फिर तुरन्त ही गिकुड़ जाते हैं। वे उन्हीं सिकुड़े हुए होंठों के बीच कुछ बुदबुदाते हैं और फिर मानो स्वयं ही आश्वस्त होकर किमी अन्य समस्या पर विचार करने लगते हैं।

धुनकर अस्पताल को बने हुए कई बरस हो गये। उस वक्त जो बन्दा-बन्दा मिला था, सब ले-दे बराबर हो गया। अब कोई खास आमदनी नहीं है। हालाँकि डाक्टरों को तनछाह देनी नहीं पड़ती, विरादरी के दो-तीन डाक्टर फ्री में आकर दो पण्डे बैठ जाते हैं। सिर्फ गैर विरादरी के डाक्टरों को और अन्य कर्मचारियों को ही कुछ देना पड़ता है। लेकिन यह सारा काम एक पूरी कमेटी करती है, अतः कोई खास गुंजाइश उसमें नहीं रहती। कमेटी का जो सेक्रेटरी है वह खुद भी डाक्टर है और बड़ा काइयाँ आदमी है। इसमें पहले वह अंसारी स्कूल की कमेटी का सेक्रेटरी भी रह चुका है और मास्टरों को परेशान कर चुका है। उसके काइयेपन के कारण ही अस्पताल में कुछ नहीं हो पा रहा है।

हाजी साहब चाहते हैं कि अस्पताल की इमारत में वृद्धि हो। पिछली बार जब यतीमघाना बनवाया गया था तो कई हजार का फायदा एकमुश्त हुआ था। आज भी यतीमघाने में बकरीद की कुरबानियों की जो पालें आती हैं उनसे हजारों का फायदा होता है। बाकई अस्ताह जिसे न नवाब दे। मदरसे की भी यही हालत है। 'मदरसा इस्तामिया' के कर्ता-घर्ता हाजी अमीरुल्ला ही हैं। वहाँ एक बलकं हैं—मुहम्मद इस्लाम। मदरसे का सारा कारोबार वही देखते हैं। हेडमास्टर को भी मुहम्मद इस्लाम से दबना होता है। मुहम्मद इस्लाम का एक सड़का डी. ए. बी. स्कूल में बी. ए. कर रहा है। इस साल से मदरसे में उसकी नियुक्ति भी कर ली गयी है। हाजी साहब किसी की शिकायत पर ध्यान नहीं देते। उन्हें फायदे से मतसब है और यह फायदा मुहम्मद इस्लाम क्लर्क के जरिये ही उन्हें हो सकता है।

इसी तरह अस्पताल में भी उन्होंने एक मुंशी रखे हुए हैं, जो फायदे के कामों का पिनान (प्लान) तैयार करते हैं और पूरे अस्पताल की वार्षिक स्थिति का ब्योरा ठीक करते हैं। मुंशीजी का नाम है—मुस्तान बकीस। दरअस्त मुस्तान

साहब बलीग, (बलीगद् यूनिवर्सिटी) से एम. ए., एल. एल. बी. हैं और पिछले दिनों क्वार्टरों में प्रैक्टिस कर रहे थे। पर बकालत जब नहीं चली तो हाजी मतिउल्ला गिरत ने सोने लगाकर बुनकर हॉस्पिटल के मुंशी हो गये।

मुंशीजी ने राय दी है कि अस्पताल में मरीजों के लिए कुछ नये वाडें बनवा दिये जायें। हाजी अमीरुल्ला इसी मुद्दे पर आजकल सोच रहे हैं।

बचानक हाजी साहब ने तय किया कि इस नए काम की शुरुआत आज ही क्यों न कर दी जाय और आवाज देकर उन्होंने फौरन ही हाजी मिनिस्टर व हबीबुल्ला को अपने पाग बुलाया। पीछे-पीछे मुंशीजी भी दुबके हुए-से आकर खड़े हो गये।

“अब अस्पतालवाला काम शुरू कर दो म्यां।”

हाजी साहब ने मुंशीजी को इशारा किया और सट से मुंशीजी ने सलाह दी कि उनके बारे में पहले एक पम्पलेट छपवाकर इलाके-भर में बँटवा देना चाहिए।

“त बनावो न म्यां, देर काहे की?”

“हबीबुल्ला ! तू ही काहे नाई बनउ तो म्यां?”

और हबीबुल्ला प्रचार का मजमून बनाने लगे—

786

बुनकर अस्पताल, वारानसी

मुकरंमी। सलाम मसनून !

बुनकर अस्पताल बनारस किसी तब्राक़ का मुहताज नहीं है। अपनी पिढ़मात मे इतने जो नाम पैदा किया है उस पर हम सबको फ़ख़ है।

मरीजों की तादाद रोज-बरोज बढ़ती जा रही है, मगर वाडों में गुंजाइश न होने से निदामत व अफ़सोस के साथ मरीजों को वापस करना पड़ता है। इस मुश्किल का हल मजलिसे इंतज़ामिया (प्रबन्ध समिति) ने मरफ़जी इमारत के बालाई हिस्से पर तीन बड़े जनाना वाडों के साथ एक बसीब (बड़ा) लेबर रूम की तामीर का मंसूबा बनाया है।

हम बड़ी मसरत के साथ यह एलान करते हैं कि तीसीब-इमारत के मिलसिने में आली जनाव वाइस चांसलर साहब, उस्मानिया यूनि-वर्सिटी हैदराबाद तमारीफ़ ला रहे हैं। उन्हीं के मुखारफ़ हाथों से तीसीब तामीर की इंट रयी जायेगी और यह प्रोग्राम तीन रोज़ का होगा। जम्मीद है कि आप इस सहरोजा (विदिवसीय) प्रोग्राम में हस्व साबिक (मयासाध्य) तामीर के मंसूबा की तकमील में तबालूज फरमायेंगे।

आपकी मिली गैरत (राष्ट्रीय भावना) और दीनी हमीयत (धर्म-भावना) से उम्मीद है कि ईमारो-इत्तेफ़ाक़ (स्वाय और एकता) का भानदार मुजाहरा फरमायेंगे, ताकि बीमार और दर्द में कराहते मरीज मुस्कुराकर आपको दुआओं में याद करें।

नोट : औरतों के लिए बाद नमाज़ मगरिब से आठ बजे रात तक का बहुत है।

हाजी मतिउल्ला

हाजी अमीरुल्ला

हाजी मिनिस्टर

हबीबुल्ला

“पूरा मद्रिया हो गोवा म्याँ !”

हाजी मिनिस्टर हबीबुल्ला को दाद देते हैं और पत्रों ‘कौमी एकता’ प्रैस में भेज दिया जाता है। इसी प्रैस से ‘कौमी एकता’ नामक उर्दू-अज़बार् भी निकलता है जिसका सम्पादन गहर उसगी के एम. एल. ए. श्री अल्ताफ़ुर्रहमान अंसारी करते हैं।

12

दोहर ठल रही है। छूप में कुछ तेजी है। असीमुन फर्ज़ पर बैठी कतान मुलमा रही है।

इकबलबा कही से खेलकर आया है और खाना माँग रहा है।

“घानीता में का भरे है रे ? निकान ओके।”

असीमुन उसकी फूली हुई जेब को देखकर डाँटती है तो इकबाल अपनी जेब से गोलियाँ निकालकर ताक पर रख देता है और फिर खाना माँगता है।

“ज चूसीदुआर में खा ले। ठरबा¹ में रोटी होइए। अठर मससी² में तरकारी होइए। पनेट में तदसा³ निकाल लेवे अउर कप्पन में डाँक देवे। अभी तोरे अग्श आवत होइएँ।”

1. रोटी रखने की टोकरी।

2. बटोरे के आकार का पात्र।

अलीमुन उसे खाने के लिए सहेजती है और चर्खा उठाकर कतान फेरने में व्यस्त हो जाती है।

मतीन मुबह से निकला है। अभी तक लौटा नहीं। इन्हें भी न जाने क्या नशा नवार हुआ है कि पूरे शहर-भर का ठेका लेकर घूम रहे हैं। अरे जैसे सब अपना काम कर रहे हैं तू भी करो। क्या लेना-लादना है? हमेशा से जो होता आया है वही न होगा, कि अल्ला मियाँ का निजाम तू बदल दोने? अरे जो गरीब है वह गरीब ही रहेगा, चाहे लाख कोशिश करो। अल्ला मियाँ ने जिसे अमीर बना दिया है वह अमीर ही रहेगा। लोन लेने से थोड़े गरीबी मिट जायेगी। अरे फकीरी और बादशाहत सब गुदा की देन है!

अलीमुन सोच रही है।

कई दिन से काम पर नहीं बैठ रहे हैं। खाने-पीने की फिकिर भी नहीं है। बस हाथ-धुन बही सोसायटी। सोसायटी न हुई, बिटिया की शादी हो गयी कि रात-दिन इन्तजाम में लगे हुए हैं। अरे मिलेगा रुपया तो सबको मिलेगा, न कि तुम्हें अकेले ही सब मिल जायगा? और लोग तो हर्जा नहीं कर रहे हैं अपने काम का। अरे सब लोग इतने बेकूफ थोड़े हैं। देखते नहीं कि घर की क्या हालत है? बीमारी का इलाज करना है। दक्कनवाली दीवार की मरम्मत करानी है। इक्बाल की गुजनी तो ठीक हो गयी है, पर कमजोरी इतनी है कि जरा-सा भी दौड़कर चलता है तो गिर पड़ता है। उसे भी डॉक्टर अंसारी को दिखाना है। धीरे-धीरे साल-भर हो गया। पिछले जाड़े से लेकर इस साल का जाड़ा भी बीत गया, पर एक सूटर तक नहीं बना तन के लिए। इ सबकी फिकिर नहीं करेंगे, बस सोसायटी बनायेंगे। सोसायटी क्या हमें खाने को दे देगी?

तभी अचानक सीढ़ियों पर छट-छट की आवाज होती है और अलीमुन चौंक जाती है। लगता है आ गये। लेकिन नहीं, बशीर की बीबी है। अमिनवा। ऊपर आते ही उसने नकाब उतार लिया है और अलीमुन के पास बैठ गयी है। गोद के बच्चे को उतार दिया है, जिसे लेकर इक्बाल नीचे चला गया है।

आमिना और अलीमुन में पुनुर-पुनुर बातें शुरू हो गयी हैं।

अभी दोनों स्ट्रियाँ सामने की ओर झुककर एक-दूसरे से एकदम सट जाती हैं और कभी किसी बात पर वे बारी-बारी से दुखी हो उठती हैं। बीच में एकाध बार आमिना बाहर की ओर भी झाँक लेती है और इस मौक़े का फ़ायदा उठाकर अलीमुन उसके चेहरे को गौर के नाथ देख लेती है।

अचानक सीढ़ियों पर आवाज होती है और अलीमुन सतकं हो जाती है। लगता है, इक्बालवा के अब्बा आ गये। लेकिन पल-भर बाद वह देखती है, फिर कमरान अपने नकाब का पल्ला संभालती हुई थके हुए कदमों से चली आ रही है।

अमिनवा की फुनफुसाहट बन्द हो जाती है।

“बइठो हो।”

असीमुन कहती है तो सतीफ की बोबी दरवाजे पर छड़ी-छड़ी हो इनकार कर देती है। दरअसल वह समझ जाती है कि ये कोई ध्वास बात करने में मगगूस है।

“नाही बइठवा नाही।”

“बा हो तइसा बइठ्यो भी नाही? अरे तइसा बइठ जाओ। फहाँ गयी रहित?”

“गयी रहे अपनी अम्मा कि यें।”

सतीफ की बोबी अनमने ढंग से जवाब देती है और उलटकर सीढ़ियाँ उतरने लगती है। साथ ही बतियाती भी जाती है; “अच्छा अब हम जाइता हो, फिर कब्बो मुचित में अइवा त मुचित में बतियइवा।”

“अच्छा त अदयो, देखा भुत्ता मत जइयो।”

“नाही, भुत्तइवा नाही।”

और कमरन अपना नकाब सँभालती हुई सीढ़ियाँ उतर जाती है।

अमिनवा फिर छुमुर-फुमुर बतियाने लगती है। असीमुन यह सुनकर चिन्तित हो जाती है कि हाजी अमीरुल्ला अबरम उनका मकान खरीदना चाहते हैं। इसके लिए बशीर पर चारों ओर से दबाव पड़ रहा है।

अमिनवा रमांसी हो जाती है।

तभी इक्बाल दौड़ा-दौड़ा ऊपर आता है और चिल्लाता है, “अम्मा रे बउवा दुआरे हगते!”

और अमिनवा झट में उठकर सीढ़ियाँ उतर जाती है। असीमुन भी उसके बच्चे की टट्टी घुलाने के लिए पीछे-पीछे पानी लेकर भीचे उतरती है और दरवाजे पर छड़ी हो जाती है।

इकबलवा के अम्मा अभी तक नहीं आये। क जनी¹ कहाँ रह गये?

होली सकुशल बीत गयी है। इस पर्व पर कुशलता-अकुशलता का सवाल इसलिए बना रहता है कि कहीं कोई बालक भूल से किसी मियाँ भाई पर रंग न डाल दे।

हालांकि होली के एक रोज पहले मतीन जब बिसैसरगंज से गेहूँ खरीदकर लौट रहा था तो रास्ते में कहीं हल्के लाल रंग की पिचकारी कुर्ते की आस्तीन पर पड़ गयी थी, लेकिन वह कुछ नहीं बोला था। रंग ही तो है, कोई मैला तो है नहीं !

वैसे इतनी-सी बात को लेकर भी बवाल खड़ा हो सकता था, जोकि इस साल नहीं हुआ।

होली के बाद मौसम में एक खास तरह की रंगीनी आ गयी थी और लोग खुश थे।

चन्दन शहीद का मेला शुरू हो गया है। यह मेला हर साल चैत महीने के प्रत्येक बृहस्पतिवार को लगता है। गंगा और बरुणा के संगम पर एक मजार है जो चन्दन शहीद के नाम से मशहूर है। हिन्दुस्तान के मुसलमानों को इस बात का श्रेय मिलना चाहिए कि उन्होंने इस देश की धरती में डेरों शहीद खोज निकाले हैं, जो प्रायः हर बृहस्पतिवार के रोज अपनी शक्ति का परिचय जनता को दिया करते हैं। उनमें एक चन्दन शहीद भी हैं।

बसन्त कालेज के भीतर से चलकर, ढाल उतरते ही बायीं ओर मुड़ जाइए तो चन्द पेड़ों के सुरुमट में एक मस्जिद दिखायी पड़ेगी। चन्दन शहीद का मजार उसी मस्जिद के पास है। वैसे तो हर बृहस्पतिवार को यहाँ भीड़ होती है और बारिश के दिनों में तो यह स्थान एक सैरगाह ही बन जाता है, पर इन दिनों यहाँ बुनकरों का मेला लगा हुआ है। मर्द, औरतें, बूढ़े, जवान, बच्चे सभी चन्दन शहीद की ओर भागे जा रहे हैं।

मतीन भी इकबलवा को लेकर मेला जा रहा है। मेले में इकबलवा फिरकी घरीदेगा। मलाई बरफ खायेगा। मतीन माला-फूल लेकर शहीद बाबा के मजार पर फातेहा पड़ेगा। मन्नत मानेगा। शायद शहीद बाबा की दुआओं से ही सोसायटी बन जाय।

मेले में लतौफ भी है और चचा रऊफ भी। बशीर भी। अल्ताफ भी। हनिफवा भी। समिल्ला भी। बशीर की लड़कियाँ भी आयी हैं। नजबुनिया भी है। अलीमुन नहीं आयी है।

उधर हाजी मिनिस्टर भी आये हुए हैं। हवीमुल्ला भी। हाजी अमीरुल्ला के समधी हाजी उस्मान भी और होनेवाले समधी हाजी बलिजल्ला भी।

गर्जे कि अन्दरपुर इलाके के अधिकांश बुनकर मेले में भरे हुए हैं।

बरुणा की ओर दो कमरे भी बने हुए हैं, जिनमें कुछ औरतें बैठी हुई हैं। वे आराम कर रही हैं। बाहर जगह-जगह चूल्हे जले हुए हैं। गोشت पक रहा है। भैंस का। अब तो यह भी महंगा हो गया है। पाँच रुपया किलो।

मेने में ऐसे बुनकर भी है जिनसे मतीन की गाड़ी जान-गहचान नहीं है। वह उनमें मिलना चाहता है। बतियाना चाहता है। सोसायटी के बारे में राय करना चाहता है। इसलिए वह इस कदर परेशान है, जैसे मेले में उसका कुछ घो गया हो।

सोय झूला झूल रहे हैं। घाट और क्रीमे की पकौड़ियाँ खा रहे हैं। लड़कियों को देख-देखकर ठट्ठा मार रहे हैं...लेकिन मतीन को कुछ भी नहीं सुहा रहा है। वह भीतर-बाहर दोनों में काफ़ी थका हुआ लग रहा है। उसके बात बिछरे हुए हैं और ओठों पर पपड़ियाँ जम गयी हैं। कमीज पसीने से तर है और लुंगी गर्द में सनी हुई। सिर्फ़ उमकी आँखें हैं जो एक अजाने दग से मानो चमक रही हैं।

"सर्लावाले कुम !"

"ऐं, बच्चा केहर है रे?"

"क जनी, मजरिया के नगिब तो छड़े रहे न !"

नजबुनिया धोलती है और कनछी से मतीन की ओर ताककर मुस्कराती हुई भागे बढ़ जाती है। मतीन की आँखों में थोड़ी देर तक नजबुनिया की आँखों का सीधापन चूमता रहता है, फिर अचानक ही वह गायब हो जाता है। सामने से जो आदमी मलाई बरफ़ चूसता हुआ चला आ रहा था, वह मतीन के सामने आकर पड़ा हो जाता है।

"सर्लावाले कुम !"

"बालेकुम सर्लाम !"

"हमहूँ मेम्बर बनेनँ। हमरा नांव है कल्लू, हम बहेसिया टोला में रही ते।"

वह आदमी मलाई बरफ़ की सीक फेंकता हुआ अपना परिचय देता है और 'फिर मिलेंगे' कहता हुआ भीड़ में घो जाता है।

मतीन पूर्ववत् पड़ा रहता है। उसकी आँखों में नजबुनिया की आँखें फिर चूमने लगती हैं।

हनिफवा की साड़ी आज बढ़िया दाम पर बिक गयी है, इसलिए वह बेहद खुश है। आज ताड़ी नहीं, गोलगट्टा मार्का चलेगा। कभी-कभी ठर्रा चला लेने में वह कोई हर्ज नहीं समझता। हर्ज होगा उनके लिए जो नमाज-रोज़ा के पाबन्द हो। यहाँ

कौन अत्ता मियां से रिश्तेदारी जोड़नी है? हनिफवा गोलनड्डा¹ की होली² में पुतकर बैठ गया।

फिर थोड़ी देर बाद वहाँ से निकलकर उसने एक बढ़िया पान दबाया और उँगली में चुना लिये-लिये ही नक़्खीघाट की ओर चल पड़ा। लेकिन थोड़ी दूर चलकर ही उसे हाजी साहब की एक दात याद आ गयी और वह लौट पड़ा। आज उसने बशीर को भी इस तरफ देखा था। सरैया में उसकी लड़की व्याही है शायद! हनिफवा का माया तेज़ी के साथ घूमने लगा...

बशीर गये थे 'बियडवा' लेकर। बड़ी लड़की को लड़का हुआ था ससुराल में। छुहारा-बुहारा पहुँचाकर लौट रहे थे कि गली में कोई चीज उनके सिर पर बाकर गिरी और वे मुँह के बल लौट गये। होश आया तो खुद को उन्होंने अपनी कोठरी की जमीन पर पड़ा हुआ पाया। सामने वे लोग खड़े थे, जिन्होंने उन्हें यहाँ तक पहुँचाया था।

चोट काफ़ी थी। अस्पताल ले जाना जरूरी था, पर बीबी सिफ़ रोये जा रही थी। लड़कियाँ हाय अब्बा! हाय अब्बा! कहकर चिल्लाये जा रही थीं। साथ-साथ किसी अनाम अजनबी शत्रु को गालियाँ भी बके जा रही थीं। पर बशीर का दर्द बढ़ता जा रहा था। आखिर आस-पड़ोस के लोग उन्हें अस्पताल ले गये।

मुंशी सुल्तान बगील ने बशीर को गौर से देखा और भर्ती कर लिया। खून काफ़ी निकल गया था सिर से। आराम की जरूरत थी। लेकिन उस जरूरत को 'बुनकर अस्पताल' फ़ी में पूरा नहीं कर सकता था। बुनकरों का अस्पताल होने का मतलब यह नहीं कि बुनकरों का इलाज फ़ी में होगा। मुंशीजी ने सारा हिसाब क्षण-भर में समझा दिया। काफ़ी पैसों की जरूरत थी और उसके लिए क़र्ज़ ही एक सहारा था।

लेकिन बशीर की बीबी को क़र्ज़ मिलने में कोई प्वास दिक्कत नहीं हुई। गिरस्ता लोग ऐसे दिनों के इन्तज़ार में ही रहते हैं कि कोई अतामी क़र्ज़ लेने आये तो कम-से-कम! क़र्ज़ वसूलने में जो एक प्वास क्रिस्म का मज़ा है वह किसी और काम में कहाँ?

तो बशीर की बीबी को क़र्ज़ मिल गया और बशीर का इलाज होने लगा।

दोपहर का वक़्त था। बशीर के घर के सभी लोग अस्पताल में थे। घर में सिफ़

1. रफ़ान का नाम। 2. शराबघर।

रेहनवा थी, हाँड़ी-बूली करने के लिए।

रेहनवा मुबह से काम में लगी थी। थोड़ी देर पहले ही वह अस्पताल में खाना पहुँचाकर लौटी थी। साथ में छोटी बहिन बिबोइया को भी ला रही थी, पर वह नहीं आयी। बाद में अम्मा के साथ आयेगी।

रेहनवा एक गयी थी। वह ऊपर पहुँचकर कमरे के सामने धुले हुए दातान में ही निघरीं चारपाई पर सेट गयी और उसे नोद आ गयी।

हाजी अमीरुल्ला का मेसला लड़का शरफुद्दीनवा अपनी घिरकी से बशीर के घर को देख रहा था। यह अगर मिल गया तो अपने लिए इधर ही अंग्रेजी ढंग का मकान बनवायेगा वह, जैसा उसके प्रोफेसर साहब का है। यूनिवर्सिटी में बी. काम. कर रहा है न वह।

अचानक शरफुद्दीन उठा और नीचे उतरकर बाहर चला गया।

बशीर के घर का दरवाजा उठंगा हुआ था। वह भीतर दाखिल हो गया। फिर धीरे-धीरे ऊपर पहुँचा और दातान में पड़ा हो गया।

रेहनवा अबसर उसे ताका करती है; जब वह घिरकी के पास बैठकर पढ़ा करता है। आज इसके मन की याह मिल जायेगी।

शरफुद्दीन तेजी के साथ सोचने लगा और भीतर-ही-भीतर तनने लगा।

उसके दिमाग में यूनिवर्सिटी की अनेक सड़कियाँ और सिनेमा की अनेक अभिनेत्रियाँ घूमने लगीं।

रेहनवा को नोद ने घुरी तरह चपेट लिया था। एक हाथ उसका सिर के नीचे तकिया बना हुआ था और दूसरा हाथ पेट के ऊपर रखा हुआ था जो साँस लेने के साथ-साथ रह-रहकर ऊपर उठता था और फिर नीचे दबता था। नीले साटन की पेरानी¹ में उसकी छोटी-छोटी छातियाँ कुछ ज्यादा ही उभरी हुई दिख रही थीं। इजार² का एक पायेंचा थोड़ा ऊपर घिसफ गया था और उसकी साँवले रंग की पिङ्गली चपड़ी हुई थी।

शरफुद्दीन आगे बढ़ा और उसने अपना एक पंजा रेहनवा की छाती पर रख दिया।

रेहनवा धीप उठी।

“के है?”

शरफुद्दीन धरधराने लगा।

“एज्जन से चल ज नही त अच्छा न होइए!”

रेहनवा ने बेहद नफरत और गुस्से के साथ शरफुद्दीन की ओर देखा तो वह

1. समोज, कुर्ती।

2. ससवार।

एकबारगी घबरा गया और झटके से पीछे की ओर मुड़कर जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ उतर गया।

रेहनवा छटिया पर चुपचाप ब्रंठ गयी।

15

हाजी रसीद तीन दिन से अल्लाफ को ढूँढ रहे हैं। रुपया लेने का होता है तो ये लोग दिन-रात एक कर देते हैं और काम के पारी छोटहियोवाले... लड़का बीमार था तो दिन-भर दौड़ते थे कि गिरस दे दो पट्टा, महिला-भर में उतार देंगे। और अब है कि महीना-भर से काम पर आयी नहीं रहे हैं। लड़का कब का ठीक हो गया। नन्दन शहीद का मेला भी खतम हो गया, मगर लाट साहब का कहीं पता नहीं है।

हाजी रसीद परेशान हैं। एक दिन घर गये तो पता चला, 'मरु गयेने। संझा तक अर्धे।' शाम को गये तो मालूम हुआ, 'आयेन नाहीं।' दूसरे दिन भी वही जवाब। आज न मिला तो वे पता लेकर मरु जायेंगे और भोजड़ियावाले का दिमाग ठीक करेंगे।

हाजी रसीद तेजी के साथ अल्लाफ के घर की ओर भागे जा रहे हैं, जैसे अपने कारीगर की तलाश में नहीं, बल्कि अपने खोये हुए बैल को ढूँढ़ने के लिए चले जा रहे हैं। उनके पाँवों में चपलता है और आँखों में क्रोध। आज मिल जाय अल्लाफवा तो बतायें।

मुबह का वक्त था।

अल्लाफ छटिया पर एक मेली-कुचली तकिया लगाये और पैताने एक बोरे पर पाँव फैलाये लेटा था। पेट पर बजवा खेल रहा था। बीबी चाय लेकर आयी तो उसे भी ग्रीचकर बैठा लिया और बजवा से बोला, 'दूध पीवे?' बजवा ने उसकी बात नहीं समझी तो हवुनी की ओर अर्घभरी नजर से देखते हुए बोला, "तइसा एके आपन दूध गोम के पिधा देवे।" और बीबी के दूध की ओर जैसे ही उसने अपना हाथ बढ़ाया, बाहर से हाजी रसीद की आवाज सुनायी पड़ी—

"अल्लाफ! ए अल्लाफ!"

चुरचोदी के सब मजा किरकिराय गोवा!

"का गिरस, सनावाले कुम!"

बजवा को हवुनी की गोंद में रखकर वह बाहर निकला और द्वार पर खड़ा हो

गया। जेब मे एक बीड़ी निकालकर दग बीच उगने सुनगा लो यो धीर उमका घुम्रा हवा मे उड़ा रहा था।

"अमदन पूछे तो का गिरस ? काम-बाम होइए के नाही ?"

"अमदन त जो नाही करते गिरस !"

"काहे जो करिए, मऊ में काम मिल गोवा होइए !"

दग पर अस्ताफ खामोश रहा तो हाजी रमीद को और गुस्ता धाया, "तू हमरा पइसा दे दो, हम जाइते।"

"पइसा त नहिने।"

"काहे नहिने ?"

"अब नहिने त नहिने। मोंका मिसिए त भाएने, सड़िया बिन देने।"

"कब धइयो ?"

"का बताएँ कब भाएँ मे ?"

"आधिर ?"

"दू-चार दिन मे।"

और हाजी रमीद चले गये।

अस्ताफ की बीड़ी दग बीच गुप्त चुकी थी। उसने जैसे ही अड़ी फेंककर दरवाजा बन्द करना चाहा, सामने मे मतीन आता हुआ दिखायी पड़ा। एक गया।

"सत्तावाने कुम !"

"बालेकुम सत्ताम, आओ बइठो।"

और मतीन भीतर आ गया। दोनों छटिया पर बैठ गये।

हम्नुन यडबा को गर्दनरा पर लिटाकर चूली-नुआर¹ मे धुन गयी।

16

असीमुन भोर मे ही जाग जाती है। बच्च करती है। कजिर की नमाज पढ़ती है और इकबलवा को जगाकर रेशम लेकर बैठ जाती है।

असीमुन रेशम के धागे सुलमा रही है।

इकबाल उसमे मदद कर रहा है।

मतीन अभी सोया है।

1. रमोईपर।

अलीमुन को याद आ रहा है कि जब पहली बार वह व्याहकर यहाँ आयी थी तो इसी तरह मतीन उसके बातों को अपनी उँगलियों में फँसाकर घण्टों सहलाया करता था। वे भी कैसे अच्छे दिन थे। तब उसे यह बीमारी नहीं लगी थी और उसका चेहरा भरा-भरा था। हालाँकि व्याह के दस्त-बारह रोज़ बाद से ही वह हाँड़ी-चूली और चर्खा-भरनी के काम में जुट गयी थी, पर मेहनत से उसकी देह में और भी चमक आ गयी थी। उसके बाल तो काले रेशम की तरह ही लगते थे। लेकिन फिर न जाने क्या हुआ कि...

अचानक मतीन जाग जाता है। वह दबाव देख रहा था कि सोसायटी बन गयी है और सपना मिल गया है। वह खुशो-खुशी सपनाया से लौटा है और धड़-धड़ाता हुआ ऊपर पहुँच गया है। अलीमुन उसे देखकर हड़बड़ाती हुई सामने आती है तो माड़ी उसकी खटिया के पावा में फँस जाती है और वह गिर पड़ती है। उसके मुँह से फिर खून निकल आता है... मतीन चारपाई पर पड़े-पड़े ही अलीमुन और इकबाल को देखता है। दोनों तल्लीन हैं; जैसे वे कतान नहीं सुलझा रहे, बल्कि कुरान पढ़ रहे हैं।

वह उठकर छत पर निकलता है और पाखाने में घुस जाता है।

‘इसकी दिनिया (टीन की छत) भी ठीक करानी है,’ वह पाखाने में बैठे-बैठे सोचता है और बाहर निकलकर आता है तो देखता है, नाश्ता तैयार है। बासी रोटी और चाय। वह जल्दी-जल्दी मुँह धोकर नाश्ता करता है और नीचे पहुँचकर करघे पर बैठ जाता है। इधर कई दिनों से काम पर नहीं बैठा तो लग रहा था जैसे मुर्दा हो गया है। करघे पर बैठते ही उसके शरीर में मानो नये प्राण उग आये और वह नये उत्साह के साथ शुरू हो गया।

हल्के गुलाबी रंग के कतान पर वह लाल-हरी सुनहरी बूटियोंवाली एक स्पेशल साड़ी तैयार कर रहा है। हाजी साहब कह रहे थे, आर्डर का है। करघा अपनी पूरी गति में है। पत्ते की डिजाइन ताने पर उतर रही है और ‘नौलखा’ उसके भार को संभाले हुए है।

‘नौलखा’ मिट्टी का या लघोरिया इटे का गोलाकार पिण्ड होता है जो करघे के बाजू में ठोरी से लटका रहता है। कहते हैं कि एक बार किसी जुलाहे के घर में चोर घुसे। वे वभी चोरी करके जा ही रहे थे कि जुलाहे की नौद उचट गयी। उनसे अपनी पत्नी से कहा, “लगता है, चोर आये हैं। पता नहीं ‘नौलखा’ बचा या उसे भी ले गये?” और वह फिर सो गया। चोर उसकी बात सुन रहे थे। वे लोग अब ‘नौलखा’ तलाशने लगे, पर वह कोई जड़ाऊ हार तो था नहीं कि मिले। सुबह हो गयी और चोरों को सारा माल छोड़कर भागना पड़ा।

मतीन के पाँव नीचे चल रहे हैं, हाथ ऊपर चल रहे हैं। पूरा शरीर जैसे संगीत के किसी ताल में नियत होकर स्यात्मक हो गया है। ढरकी इस तरह नाच रही है

जैसे जंगल में कोई विसहरी फुटके।

मतीन बड़ी पूर्ती के गाथ पहने हरे रंग का धागा धींचता है और तानी पर हरे रंग की एक लपौर छिच जाती है। फिर त्रमसः सात और मुनहरे रंग का धागा यह धींचता है और तानी पर सात-मुनहरी लकीरें छिच जाती हैं। देखते-ही-देखते साड़ी पर एक रूयमूरत-मा फूल गिल उठता है।

मतीन थोड़ी देर तक खता है और फिर शुरू हो जाता है। करघे से घटाघुट ...घटाघुट...घटाघुट...घटाघुट की आवाज उठने लगती है। पहले धीरे-धीरे, फिर मध्यम से होते हुए पंचम और फिर सप्तम पर पहुँच जाती है। जैसे कोई तबलावादक पहले सबसे को टोंककर करो, फिर उसकी आवाज आजमाये और फिर गाने के साथ अपनी संगत शुरू कर दे।

साड़ी की बुनावट में रचना और संगीत की लयें इस तरह उभरती हैं कि सर्जक की चेतना एकाग्र होकर गूँघ हो जाती है। जैसे धीरे-धीरे कुण्डलिनी उठे और इंगला-पिमला की राह पद्मत्रों का भेदन करती हुई ब्रह्मरन्ध्र में समाहित हो जाये। पाँच से लेकर मस्तक तक एक ही अनहद नाद गुँजता रहता है।

छन् !

अपानक एक मधुर-सी आवाज से मतीन चौंक उठा। अलीमुन कब आकर वहाँ घड़ी हो गयी थी, उसे भानूम नहीं। वह क्या सोच रहा था ?

शायद सोसायटी के बारे में।

नही, वह शायद कुछ और सोच रहा था।

शायद इकबाल के भविष्य के बारे में।

नही, वह शायद कुछ और सोच रहा था।

“का बात है ?”

यह अलीमुन से पूछता है तो अलीमुन कुछ नहीं बोलती। करघे पर बिनी जा रही साड़ी को देखती रहती है।

“का बात है ?” मतीन फिर पूछता है तो वह मुस्कराती है और सिर नीचे कर लेती है।

“अबकी इदिया पर ये ही मे की मदिया हम्म दियाय दो !” वह बोलती है और सिर उठाकर मतीन को देखती है।

मतीन, यह दर्शाता हुआ कि उसने अलीमुन की बात सुनी ही नहीं, ऊपर की ओर ताकता रहता है—एकटक !

ऊपर पत्ता है। कागज का यह नक्शा, जिसके आधार पर नीचे साड़ी पर चूटियाँ उगती हैं।

और ऊपर ही आकाश भी है।

गुनते हैं आकाश पर अस्ता मियाँ रहते हैं ?

मतीन नक्शे को देखता है या आसमान को, कोई कह नहीं सकता ।

“मुनय के नाहीं ?”

बलीमुन टोंकती है तो मतीन ऊपर से एक धागा खींचता हुआ उसकी ओर देखता है और मुस्कराता है ।

“सोसायटी त बन जाय दे, जे ठे साड़ी कहवे दियाय देव ।”

और बलीमुन चली जाती है ।

मतीन छोड़ी देर तक गुम-चुम बैठा रहता है, फिर अपने काम में लीन हो जाता है ।

अचानक दरवाजे पर किसी के आने की आहट होती है और वह साँककर देखता है तो चकित रह जाता है । यह भोला यहाँ कैसे पहुँच गया ?

“आओ बड़ो !”

वह वहीं से भोला को बुलाता है और अपने काम में लगा रहता है ।

भोला नया-नया आया है बनारस में—काम की तलाश में । दो दिन पहले मतीन से मुलाकात हुई तो दोस्ती हो गयी ।

कोई दूसरा वस्तु होता तो शायद मतीन कुछ हालचाल पूछता भोला का, लेकिन इस वस्तु उसका मन उदास है । वह काम में लगा हुआ है । काम से उदासी कुछ शान्त होती है ।

एक फूल पूरा हो गया है और दूसरे फूल तक पहुँचने के लिए वह एक बित्ता का लाग¹ बिन रहा है ।

भोला एक किनारे बैठ जाता है और चुपचाप मतीन का बुनना देखता रहता है ।

मतीन बिनता रहता है—जैसे वह लाग नहीं, ज़िन्दगी का अन्तराल बुन रहा हो ।

“मतीन भाई, पाँव तो तुम्हारा गड्ढे में है और साड़ी पर इतना सुन्दर फूल कैसे बन गया है ?”

भोला ने पता नहीं जानकारी के लिए यह सवाल किया था यों ही चुटकी लेने के लिए, पर मतीन और उदास हो गया । छोड़ी देर तक वह खामोश रहा । फिर बोला, “हाँ, पाँव तो गड्ढे में है, मगर नक्शा ऊपर है । सब उसी ऊपरवाले नक्शे का क़ायम है भोला भाई !”

मतीन ऊपर की ओर उँगली उठाते हुए भोला को समझाता है तो भोला

1. एक फूल और दूसरे फूल के बीच की सादी जमीन ।

खामोश हो जाता है। वह करपे के ऊपर टेंगे हुए पत्ते को नहीं बल्कि छत को एक नजर देखता है और आँख नीचे कर लेता है।

मनीन उगी तरह अपना साग बिनता रहता है।

17

गूरज अभी नहीं निकला है।

नजबुनिया नगोल¹ पर गूड़ी वाला सेंवार रहो है। अभी-अभी महाकर ऊपर चढ़ी है। पाँच दिन तक नापाक बनी रहो। 'यह महीना-वहीना का झंझट भी बहुत घुरा है,' वह सोचती है और पता नहीं क्यों उसे हँसी आ जाती है। वह अपने आपमें ही मुस्कराती है।

मनीन आश्चर्य नहीं आ रहा है। सगता है भउजी की सबसेयत ज्यादा बिगड़ गयी है, वह सोचती है और इस कोने से टहलती हुई उस कोने तक चली जाती है।

नजबुनिया चलती है तो ऐसा सगता है मानो कोई मोरनी टहल रही है।

वह अचानक अपनी पेरानी के ऊपर से अपनी छातियों पर हाथ फेरती है और अपना दुपट्टा ठीक करती हुई फिर कंधी करने लगती है।

कंधी के दाँतों में उसे एक जूँ फँसी हुई दिख जाती है तो बड़ी बारीकी से उस जूँ को निकाल लेती है और अपने एक अँगूठे के नाखून पर उसे रखकर दूसरे अँगूठे के नाखून में पुट से मार देती है।

नजबुनिया फिर मुस्कराती है।

तब तक अम्मा बावर्चीगाने में खीचने लगती है और वह पलटकर धड़धड़ाती हुई नीचे उतर जाती है।

छत पर उगकी उपस्थिति के अमूर्त बिह्व कागज की राख की तरह बिखर जाते हैं।

नीचे मनीन बैठा है।

नजबुनिया को देखकर वह मुस्कराता है और नजबुनिया उसे बिराती हुई एक

1. छत।

और जाकर बिना बजह ही किसी काम में लग जाती है।

बोटी देर में रऊफ चचा भी वहीं आ जाते हैं और मतीन अपने आने का मऊलद कह मुनाता है, "दसखत त सब हो गोवा है, पर पइसवे नाहीं मिल रहा है।"

"उही हो जइए, घबराव नहीं।" रऊफ चचा उसे ढांडस बेंघाते हैं और दीवार पर टंगे एक तोगरे के पीछे कुछ ढूँढ़ने लगते हैं।

"इंही हम अगरबत्ती रखे रहे, का भोवा?"

वे पूछते हैं तो नजबुनिया दौड़कर आती है और एक दूसरे तोगरे के पीछे से 'मुगन्ध सिगार' अगरबत्ती का पैकेट निकालकर वाप के हाथ में थमा देती है।

मतीन नजबुनिया की ओर देखकर फिर मुस्कराता है तो वह कनखी से अपनी आँखें तरेरती है और बावर्चीखाने में चली जाती है।

रऊफ चचा पैकेट में से एक अगरबत्ती निकालते हैं और काबा की तस्वीरवाले तोगरे के नीचे उसे सुलगा देते हैं।

रऊफ चचा बहुत दिनों से हज पर जाना चाहते हैं, पर मदीनेवाले की कृपा ही नहीं हो रही है, इसलिए वे कावे की तस्वीर पर अगरबत्ती सुलगा-सुलगाकर ही सबर किये हुए हैं!

"हम चलीते।"

मतीन उठना हुआ बोलता है और बावर्चीखाने में बैठी हुई नजबुनिया को कनखी से देखता हुआ नीचे उतर जाता है।

घर आकर वह सीधे ऊपर पहुँचता है और एक हरे रंग की छोटी-सी पुरानी नोट-बुक निकालकर एक रपयेवाले डॉटपेन से उर्दू में कुछ लिखने लगता है।

लतीफ	102	
नसीम	—	102
बशीर	—	100
अल्लाफ	—	20
रऊफ चचा	—	102
समिउल्ला	—	50
कल्लू	—	80
अहद	—	52
जमीन	—	बाकी
		2 बाकी
		82 बाकी
		52 बाकी
		22 बाकी
		50 बाकी

1. फोम किया हुआ चित्र।

फिर वह टोटल सगाता है तो दो हजार कुछ रुपये का हिसाब बनता है। मतीन अलीमुन को पुकारता है—

"ए ५५!"

"का ५५?"

"मुन।"

"अमइन आइसा।" अलीमुन भीतर से ही जवाब देती है और बजाय मतीन के पास आने के वह बाहर निकलकर नीचे जाने लगती है तो मतीन को क्रोध आ जाता है, "कहाँ जाती?"

"आइसा तइसा कमहन किये।"

"अरे ऊ पइसवा त दिये ज।"

"आइसा त देईसा।"

"कैतनी देर में आइये?"

"पड़ो-पड़ो जाइसा, खड़ी-पड़ो आइसा।"

और अलीमुन चली जाती है।

18

मतीन ने कमहन को तलाक दे दिया।

अलीमुन ने जब यह खबर मतीन की सुनायी तो उसे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। तलाक तो बिरादरी में आम बात हो गयी है। औरत जात की आखिर हेसियत ही क्या है? जब चाहो धूतड़ पर नात मारकर निकास दो। औरत का और इस्तेमाल ही क्या है? कतान फेंके, हाँड़ी-चूसी करे, साप में सोये, बच्चे जने और पाँव दबाये। इनमें में अगर किसी भी काम में होला-हवाली करे तो क़ानून-इस्लाम का पालन करो और बोल दो कि मैं तुम्हें तलाक देता हूँ। तलाक! तलाक! तलाक! बिरादरी में तो 'महर' का शंसद भी नहीं है। मला हो सरदार महतो का बिन्दुलि क़ानून बना दिया कि साढ़े बत्तीस रुपया से ज्यादा महर बाँधेगा ही नहीं। एकदन घर ई उमूल। इस उमाने में साढ़े बत्तीस रुपये की बिसात ही क्या है? वहाँ निक्की पठान थोड़े हैं कि पंच-पच हजार का महर बाँधे जा रहे हैं, उस पर चिल्ला मुहर अलग से। सरे जितना बढ़ा कर सको आसानी से उतने से ज्यादा का महर बाँधे ही नहीं। साढ़े बत्तीस रुपया देना कौन बड़ी बात है? फिर दूहेज-बूहेज का इन्ह

भी नहीं कि मुकदमा चलाये माँ-बाप, कि हमने इतना सामान दिया था, दामाद सब हजम कर गया। यहाँ न देना है न लेना।

मुना कि लतीफ ने परसों ताड़ी नहीं, गोलगड्ढा मार्का पिया था। और ठर्रे के नगे में झूमता हुआ जब वह घर पहुँचा तो कमरून लेटी हुई थी। उसके पेट में दर्द था। उसने उसे झेंझोड़कर उठाया तो वह कराह उठी और ना-नुकुर करने लगी। इस पर उसने पिटाई की उसकी। सुबह कमरून जब चाय-रोटी लेकर इसके पास पहुँची तो उसे रात की बात याद आ गयी और उसने चाय-रोटी के बदले दो-तीन झापड़ जमा दिये उसे। कमरून को भी गुस्सा आ गया। वह जाकर चुपचाप लेटी रही। जब उसने देखा कि यह तो कुछ काम ही नहीं कर रही है तो और विगड़ उठा। उसने फिर उसे झेंझोड़कर उठाया तो वह भड़क उठी। उसने भी कुछ उल्टा-सीधा कह दिया। बस उसने उसे तलाक बोल दिया और साढ़े बत्तीस रुपये निकालकर उसके आगे फेंक दिये ! कमरून ने भी बुर्का उठाया और चल दी !

मतीन समझ गया कि कल जब अलीमुन जा रही थी कमरून के यहाँ तो जरूर उस वक़्त वहाँ झगड़ा होता रहा होगा।

लेकिन उसने बताया क्यों नहीं ?

मगर यह बता भी देती तो क्या मतीन उसे रोक सकता था ?

वह मोचता है और देर तक सोचता रहता है। शाम हो जाती है।

19

वशीर के मकान पर हाजी साहब ने कब्जा कर लिया है।

यह घर एक मुहल्ले से दूसरे मुहल्ले और दूसरे मुहल्ले से तीसरे मुहल्ले होती हुई कई मुहल्लों में फैल जाती है।

चर्चा है कि हाजी अमीरुल्ला अपनी कोठी से सटे हुए वशीर के मकान को खरीदना चाहते थे। मेल की जमीन थी और उनके लिए जगह की कमी थी। क्या बुरा सोचते थे ? अरे पैसा भी तो देते, मुफ्त तो लेते नहीं। लेकिन जुलाहे की अकल करघे में। वशीर अपनी ही अकड़ में था। टके-भर का कारीगर, चला था हेकड़ी दिगाने। वह भी अपने ही गिरस से। बस ताब ही तो आ गया हाजी साहब को। नाराज हो गये वीर भाई, राजा की प्रजा पर नाराजी उसी तरह है जैसे आग की नाराजी पुआल पर।



नड़का ही सारा कारोबार देखता है। चाल-बेंच करते-करते छोटा-मोटा गिरस्ता बन गया है। दो करघे गड़े हुए हैं घर में और दोनों भाइयों से उन पर बिनबाता है। माँ-बाप से भी काम लेता है। मँझलावाला तो एकदम अल्ला मियाँ की गाय है, बात भी सुनता है और काम भी किये चला जाता है। पर सलमा ने अपने आदमी से कह दिया है कि जल्दी ही अपना अलग जुगाड़ कर ले वह। लेकिन इतनी जल्दी तो कोई जुगाड़ हो नहीं पायेगा, इसलिए अभी उसी दोजख में रहना है। और जब दोजख में रहना है तो दोजख का कानून मानना ही होगा।

रेहाना गुमनुम रहती है। उससे छोटी जो दो लड़कियाँ हैं वे तो कुछ हँसती-बोलती भी हैं पर रेहनवा अक्सर चुप रहती है। कभी-कभी उसे दौरा भी आता है। उस वक़्त वह पता नहीं क्या-क्या बड़बड़ाया करती है और देखते-ही-देखते अपने बाल नोच-नोचकर हवुआने लगती है। औरतों का कहना है कि उसे कोई कपरी शै है। मन्ज़ूमशाह बाबा के मजार पर ले जाना होगा। लेकिन पास-पड़ोस की कुछ स्त्रियों की राय है कि पहले यहीं, किसी जुमरात को बहादुरशाह बाबा के यहाँ ले जाकर दिया लेना चाहिए। कुछ लोगों का कहना है कि नहीं, दुआ और दवा दोनों होनी चाहिए। बी. एच. यू. के हॉस्पिटल के मेण्टल विभाग में भी दिखाना चाहिए।

रेहनवा सबकुछ सुनती है और मौन रहती है। खाली वक़्त में मशीन लेकर बैठ जाती है और कुछ-न-कुछ सिलने लगती है। अपने को शायद वह व्यस्त रखना चाहती है।

बशीर मौन रहते हैं। अमिनवा की तो अककल ही गायब हो गयी है।

रेहनवा ने सिर्फ एक जने से दोस्ती की है। नजबुनिया से। कभी यह वहाँ चली जाती है और कभी वह यहाँ चली आती है। दोनों अकेले में न जाने क्या-क्या गुगुर-फुमुर बतियाती रहती हैं। बस इसी एक मौके पर रेहनवा कभी-कभी हँसती है।

कभी-कभी अलीमुन भी इधर निकल आती है। दो-चार दिन में एकाध बार मतीन भी आ जाता है। हाजी नजीर के यहाँ बहुत-से ऐसे कारीगर हैं जिन्होंने उसके कागज़ पर दस्तगूत किया है, पर अभी तक रुपया नहीं मिला है। बशीर के ख़रिफ वसूला जा सकता है। जल्दी से मिल-मुला जाय तो बैंक चलकर कागज़ जमा कर दे वह !

आज अभी-अभी आया है मतीन। बहुत उत्तेजित है। थोड़ा परेशान भी। दाढ़ी की मूटियाँ बढ़ी हुई हैं और लगता है जैसे कई दिनों से नहाया नहीं है। आते ही वह मचिंगा पर जम गया है और शुरू हो गया है—

“गुमायटी त म्याँ हय बना के रहने । बम तनी पइसवे के मससा है । मुना है हाजी साहय फोड़ रहें ने सोगन क.....।”

बगीर उमकी बानों को ध्यानपूर्वक सुनते हैं और धामोश रहते हैं । मतीन धाराप्रवाह बोलता रहता है ।

20

कई दिन ने सू घन रही है । जेठ लगते देर मही कि सू पालू । और बिजली की ये हानत है कि चार-चार घण्टे गायब । न काम हो पाता है, न बाहर निकला जाता है । दिन-भर पमीना पोछते-पोछते परेशान । रात में छत पर भी हवा नहीं लगती । बितना ही पानी डालो, नीचे की जलन मिटती ही नहीं । सुबह, सूरज निकलते देर नहीं कि गर्मी शुरू । दिन में बाहर ताकने की हिम्मत नहीं पड़ती ।

ऐसी सड़ी गरमी के मौसम में हो रहा है गाजी मियाँ का बियाह ।

बनारस में यह मेला जेठ महीने के प्रथम रविवार से आरम्भ होता है और अगर रविवार में एक-दो दिन पहले ही जेठ सवा हो तो दूसरे रविवार से । शनि-वार, रविवार और सोमवार की सुबह तक यह मेला काजी सादुल्लापुरा में लगता है । वहीं बाबायदा गाजी मियाँ के बियाह का आयोजन होता है । स्त्रियाँ जुटती हैं और भजन के घुमें काटे जाते हैं । गाजी मियाँ पर उनका धून चढ़ता है । और उनका प्रताप देखिए, यहाँ एक मुहल्ले का नाम ही पड़ गया है—गाजी मियाँ !

गाजी मियाँ का यह मेला सोमवार को शाम को नक्कीपाट, भंगल को कच्ची बाग, बुद्ध को छितनपुरा, बोफे को बेनियाबाग और शुक्रवार को पुराने पुम पर लगता है । इस तरह पूरे एक हफ्ते तक यहाँ मेले की चहल-पहल बनी रहती है ।

बड़ी बाजार¹ के पास गाजी मियाँ की एक कल्पित कब्र है जहाँ से यह मेला शुरू होता है । मेले में एक इतवार पहले यहाँ की कुछ औरतें और मर्द ‘पडम-पिडिम’ (दुल्हन के लिए कपड़ा व चादर आदि) लेकर बहराइच जाते हैं । फिर अगले इतवार को गाजी मियाँ का ब्याह रचाया जाता है । बहराइच से कल्पित दुल्हन मजदूर आती है । सोम गाजी मियाँ के मजार पर मुर्गा चढ़ाते हैं और मजार को पुमल (स्नान) कराते हैं । मजार के चारों ओर गढ़ा है जिसमें मजार के घुलने

1. बड़ी बाजार, बनारस का एक मुहल्ला ।

से जो पानी गिरता है उसे लोग अपनी आँखों से लगाते हैं और पीते हैं। दोपहर को ये लोग खाना नहीं पकाते, सिर्फ सत्तू-गुड़ और फल आदि खाते हैं।

आज गाजी मियाँ का खास मेला है। झुण्ड-की-झुण्ड स्त्रियाँ नकाब डाले मेले की तरफ चली जा रही हैं। बहुत पुराने जमाने की स्त्रियों ने ममी टाइप की गोल टोपीवाले, चारों ओर से बन्द बुके पहन रखे हैं। टोपी के सामने सिर्फ चन्द छोटे-छोटे सूरख नजर आ रहे हैं, जिनके जरिये ये स्त्रियाँ किसी तरह बाहर की दुनिया को देख सकती हैं। जो स्त्रियाँ उनसे कम पुराने जमाने की हैं, उन्होंने सिर्फ चादरें ओढ़ रखी हैं और नये जमाने की स्त्रियों ने नये ढंग के नकाब पहन रखे हैं। लड़कियों ने मैक्सी टाइप के नये काटवाले नकाब धारण किये हैं। किसी के नकाब में ऊपरी पल्ले में सलमे-सितारे टँके हैं तो किसी की कमर में कमरबन्द बना हुआ है। इन लड़कियों ने नकाब का पल्ला उलट रखा है। कुछ लड़कियों ने सिर्फ ऊपर का पल्ला पीछे फेंक रखा है और नीचे की जाली को चेहरे पर पड़ा रहने दिया है। ऐसी लड़कियों की आँखें जालियों में से इधर-उधर ताक रही हैं और लग रहा है जैसे भीतर कहीं कोई बिल्ली बैठी हुई कुछ तलाश रही है। कुछ लड़कियों ने कत्यई, सफेद, पॉले और लाल रंग के नकाब भी ओढ़ रखे हैं, पर काले रंग के नकाब ही अधिक पाये रहे हैं।

बुढ़ियों ने नीचे चूड़ीदार पैजामा पहन रखा है और उसके ऊपर हाफ आस्तीन की कमीज। विवाहिता स्त्रियों ने लँहगों के ऊपर साड़ियाँ पहन रखी हैं और हाफ आस्तीनवाली, कमर तक नीची कमीज। लड़कियों ने इजार (सलवार) और पेरानी (समीज)। छोटी लड़कियों के बालों पर अक्राँ से बेलबूटे बनाये गये हैं।

इस तरह भली प्रकार सज-बजकर लोग गाजी मियाँ का बियाह देखने जा रहे हैं। कुछ लोग ऊपर से लौट भी रहे हैं। लौटनेवालों के हाथों में तरह-तरह के सामान हैं। बच्चों ने मिट्टी के गिलीने ले रखे हैं। चूल्हा, भगौना, गुड़िया, चिड़िया आदि अनेक तरह के गिलीने। कुछों ने मैस के कीमे की पकोड़ियाँ ले रखी हैं।

मेले में नजबुनिया भी जा रही है। साथ में अलीमुन भी है। बशीर की बीवी आगिना अपनी लड़कियों के साथ गयी हुई है।

नजबुनिया का नकाब पुराना हो गया है। अब्बा ने कई बार वादा किया कि नया ला देगे दालमण्डी से, पर लाते ही नहीं। दूसरी लड़कियों के सरफराते हुए नकाब देखकर उसे अपने ऊपर कोपत होती है।

नजबुनिया की चूड़ियाँ भी पुरानी हो गयी हैं। सोच रही थी कि गाजी मियाँ के मेले में नयी चूड़ियाँ पहनेगी, लेकिन रेजा¹ ही नहीं पुजा। अब्बा की तबियत इधर घराब चल रही है।

नजबुनिया की चोटी भी धराव हो गयी है। मतीन का कोई मिमने-धुनने-वाला है—रहमान, उसके यहाँ चोटियाँ बनती हैं। पिछला बार वही से यह चोटी आयी थी। अब बार-बार तो किसी में यह नहीं सकती चोटी के लिए। फिर किसी पर राज नहीं है कि दूसरे का खयाल करे? अरे आदमी अपने बीबी-बच्चों को देखेगा कि दूसरे को। अम्मा में तो कहना ही बेकार है कुछ। फँसान की चीजें उन्हें पसन्द हो नहीं। गोया कि चुड़ियाँ और चोटियाँ भी फँसान की चीजें हैं।

नजबुनिया के पास निकल दो खाने हैं। इसी में गाजी मियाँ का भी सतकार करना है और अम्मा के लिए बुधवार की टिकिया भी खरीदनी है। वह अपने लिए क्या लेगी?

नजबुनिया सोच रही है और धस रही है। सामने एक मेला है जो जा भी रहा है और आ भी रहा है। इस मेले में नजबुनिया का कुछ नहीं है।

सत्ता उसने देगा कि सामने से उसकी भवजी चली आ रही है। हनीफ की बीबी। गोद में सड़का मिये, पाँव में प्लास्टिक की रंगीन चप्पलें पहने, नकाब का पल्ला उसटे, गम्भीराली साल-साल आइमशीम चूसती...

नजबुनिया को हँसी आ जाती है।

"गतावाने कुम भऊजी!"

यह गलाब करती है तो हब्सुन चौंक जाती है। वह झटके से ससाम का जवाब देती है और जाने लगती है तो नजबुनिया रास्ता रोककर पड़ी हो जाती है।

"बड़ी जल्दी की है का?"

"हाँ हो अम्मा की तबीयत धराव है, हुआ जायेके है।"

"कब से?"

"अरे धीरे-धीरे एक महिना हो गोवा!"

और वह उसी तरह आइसशीम चूसती हुई आगे बढ़ जाती है। नजबुनिया मेले की ओर चल पड़ती है।

दोपहर में तो मेला कुछ कमजोर था, लेकिन शाम होते ही भीड़ बढ़ गयी है। नजबुनिया पूमने-पूमने पक गयी है। गर्मी के भारे बुरा हाल है, पर मेला छोड़कर जाते नहीं बनता। उगने दूर में ही देखा, एक जगह मतीन कुछ लोगों के साथ खड़ा है। उसकी ओर देखकर वह मुस्कराया तो नजबुनिया लड़ा गयी। जल्दी से वह दूसरी ओर निकल गयी।

जगह-जगह खोमचे लगे हुए हैं। कहीं नान घटाई बिक रही है तो कहीं पकोड़ियाँ। कहीं गोसमणा तो कहीं पिजली और मुल्छी।

एक ओर बिमात बाने की दुकानें हैं और दूसरी ओर चुड़िहारिनें बैठी हुई हैं।

बारी-बारी में नजबुनिया का ध्यान सबकी ओर जाता है। गिजली और नान-
गताई की ओर, चूड़ियों की ओर, फीतों और चोटियों की ओर... फिर अचानक
वह विस्तार बाने की एक दूकान के सामने खड़ी हो जाती है। वहाँ एक डोरी पर
रंग-रंग की चोटियाँ लहरा रही हैं, नजबुनिया का दिल मचल जाता है। सबके
बीच में जो एक लालवाली चोटी है, वह नजबुनिया को बहुत अच्छी लग रही है !

"ऐ भइया इ चोटिया कतने की है ?"

वह बहुत खुश होकर दूकानदार से चोटी का दाम पूछती है और फिर आगे
बढ़ जाती है। एक रुपये का तो उसने मजार पर नेयाज कराने के लिए लाचीदाना
ही खरीद लिया था। अब बीस आने की चोटी कहाँ से खरीदेगी ? फिर अभी अब्बा
के लिए नोबलजीन भी तो लेनी है...

नजबुनिया मुँह लटकाये मेले से बाहर आ जाती है।

21

स्कूल खुल गये हैं। इकबाल का नाम मतीन ने अंसारी स्कूल में लिखा दिया है।

इकबाल अब जाँघिया-कमोज पहनकर पाँव में हवाई चप्पलें डाले, झोले में
फिताब लेकर अच्छे लड़कों की तरह स्कूल जाने लगा है।

वह स्कूल में सिर्फ अलिफ, बे, पे ही नहीं बल्कि क, ख, ग, घ, ङ भी पढ़ रहा
है। कुछ दिनों बाद ए. बी. सी. डी. भी पढ़ेगा।

मतीन चाहता है कि इकबाल उसकी तरह करघे का कारीगर न बने। वह
उसे जुलाहा नहीं बनाना चाहता। उसकी धारणा है कि जुलाहा बनकर कोई
तरफकी नहीं कर सकता। अरे बहुत होगा वह 'अंसारी' हो जायेगा और क्या ?
लेकिन बनारस का अंसारी होना भी जुलाहा होने से ज्यादा बड़ी चीज नहीं है,
इसलिए वह चाहता है कि इकबाल पढ़-लिखकर बाबू बने। बाबू यानी बलक नहीं,
बल्कि अपसर।

इन साल बारिश समय से हो गयी है, वरना कई साल तक इस मौसम में धूल
उड़ा करती थी। मतीन जिस रोज इकबाल को लेकर स्कूल गया था उस रोज तो
एक घण्टे तक बहुत तेज पानी बरसा था। स्कूल के सामने नदी बहने लगी थी।
यही हाल इधर हनुमान फाटक का था। लोग कमर-कमर तक पानी में हिलकर
आ-जा रहे थे।

आज सुबह मे ही बंदरी घिरी हुई है। रात में बेहद गर्मी थी। सगता है, फिर पानी बरमेगा। मतीन को बगीर के यहाँ जाना है, लेकिन मोगम इतना घराब है कि बाहर निकलने की हिम्मत नहीं पड़ रही।

अभी मतीन यह सोच रहा था कि वह बाहर निकले या नहीं, कि लतीफ टपक पड़ा।

मतीन के पास वह अपने बियाह के पक्कर में आया था। कमरन को जब से छोड़ा है, परेगान रहना है। कई दफा तो उसने यही फैसला किया कि फिर बुलाकर उगे रमेगा, लेकिन शरीअत आड़े आ जाती है। जब तक उसका 'हलाक' न हो जाय, दुबारा सतीफ के साथ वह नहीं रह सकती। अब तो यही एक उपाय है कि कमरन का निकाह किसी और से हो जाय और वह एक रात अपने साथ रखकर उसे तनाक दे दे। तब जाकर फिर सतीफ के साथ उसका निकाह हो सकेगा। इस शरीअत में भी बड़ा झंझट है। ये भी कोई बात हुई कि अपनी ही बीबी को आप दुबारा सिर्फ इसलिये नहीं रख सकते कि आपने तीन बार उसके सामने 'तलाक' सपुज का इस्तेमाल कर दिया है। हुँह !

सतीफ परेगान है, लेकिन मतीन के पास इसका क्या हल हो सकता है ? अब तो बस यही रास्ता है कि कहीं कोई सड़की-सड़की ठीक करके वह दूसरी शादी कर ले। या फिर हिम्मत हो तो कमरन को बुलाकर रखे।

“तोरा का राय है म्या ?”

सतीफ दबी आवाज में मतीन से यह सवाल करता है तो वह बरबस ही कह उठता है, “हमरा तो राय है कि तू कमरन के बोलाय के रख्यो।” इस पर लतीफ घामोश रहता है। मतीन उसके चेहरे को गौर से देखता है और मुस्कराता है। वह जानता है कि सतीफ ऐसा नहीं कर सकता।

“तोच लेव अब अउर हम का कहें !” मतीन मोड़ा गम्भीर होकर बोलता है और घड़ा हो जाता है।

“हममें सद्गा बगीर के हियाँ जाये के है।”

इतना कहकर वह अपना अकड़ा हुआ बदन तोड़ता है और बाहर की ओर हाँककर बादलों का जायजा सेने लगता है। इस बीच लतीफ भी घड़ा हो जाता है और दोनों साप-साप बाहर निकल जाते हैं।

अलीमुन आँगन में बैठकर बर्तन माँजने लगती है। बादल-बूंदी में बज्र का पता ही नहीं चलता। और ये इकबाल के अम्मा हैं कि इन्हें अपनी मुसाइटी से ही पुनंत नहीं है। घर में क्या है, क्या नहीं, इसकी फिकर ही नहीं रह गयी है। जब गये हैं बगीर किये। इतने टैम में तो चार बित्ते का काम हो गया होजा --

अचानक पछपड़ाकर बूँदें पड़ने लगती हैं। सबक पर चलनेवाले तोप भाग-भागकर छज्जों के नीचे छड़े हो गये हैं। अलीमुन उठकर भाँते-भाँते धौन रनी

१। बगलवारी नदी में जो मकान है उसके छज्जे के नीचे भी कई लोग उड़े हैं। वह गिरफ़ी से एक नज़र झाँककर देखती है और फिर अपने काम में लग जाती है। नीचे कोई बोल रहा है—

“बड़ी ज़बर्दी बुन्नी पड़े थी।”¹

पानी बकना है तो अलीमुन छत पर निकलती है और गली की ओर देखती है—जायद मतीन आता हो, लेकिन वह नहीं दिखायी पड़ता। हाँ इकबलवा अलबत्त आता हुआ दिखायी पड़ता है। लगता है बारिश-बूंदों की बजह से जल्दी छुट्टी हो गयी है। लेकिन इसका चेहरा उतरा हुआ क्यों है? कहीं मार-बार खाकर तो नहीं आ रहे हैं। इस्कुलिया के मास्टर भी तो बड़े हुरामी हैं। अलीमुन चिन्तित हो जाती है और जैसे ही वह इकबाल का हाथ पकड़ती है, घबरा उठती है।

लड़के को बुझार है। बदन तबे की तरह जल रहा है। अब इसी बात पर उसका जी जलता है। न जाने कहीं जाकर बइठ गये हैं। इनकी हमेशा की यही आदत है कि जहाँ जाते हैं वहीं के होके रह जाते हैं। लड़के को कहीं लेकर जाय वह? डाक्टर अंमारी के यहाँ जाने के लिए तो कम-से-कम तीन रुपिया चाहिए। और यहाँ रुपिया-डेढ़ रुपिया से ज्यादा है नहीं डिब्बे में। वह सोच में पड़ जाती है। क्या करे? तभी उसे खयाल आता है कि क्यों न वह बुनकर अस्पताल चली जाय। यहाँ पच्चीस पैसे के पुर्जे में ही काम चल जायेगा। और वह जल्दी-जल्दी नकाब छालकर इकबाल की बाँह पकड़े हुए कोठरी में ताला लगाकर बाहर निकल जाती है।

अस्पताल के अहाते में उसने देखा कि हाजी मतिजल्ला और मुंशी सुल्तान बकील पड़े हैं। पता नहीं क्या राय-बात कर रहे हैं। वह नकाब सँभालती हुई बगल से होकर दाहिनी ओर मुड़ जाती है—जहाँ पुर्जा बनता है। पुर्जा बनवाकर वह अस्पताल के बरामदे में पड़ी एक बेंच पर बैठ गयी।

दवा मिलने में काफी देर हुई। उनका नम्बर काफी बाद में आया। अब तक गलीब-गलीब सारी भीड़ छंट चुकी थी। इस बीच एक बार और पानी बरसा था और अब मौसम कुछ साफ हो गया था। वह इकबाल को अपने नकाब में छुपाये हुए थी और दिल-ही-दिल में घबरा रही थी। कोठरी में ताला बन्द है। इसके अन्धा आये होंगे तो कहाँ होंगे? अभी तक पेट में कुछ गया भी नहीं है...

और दवा मिलते ही वह तेजी के साथ घर की ओर चल पड़ी। लेकिन अभी थोड़ी ही दूर पहुँची थी कि रास्ते में नजबुनिया दिखायी पड़ गयी। नकाब का पल्ला

1. बहुत बड़ी-बड़ी बूँदें पड़ रही हैं।

दुगुन पड़ने जाता है, काफ़ी है। ब्लास टीचर तो कही रहे हैं कि घबराने की कोई बात नहीं है। बस, चाय-पान कराते जाओ।

हाजी अमोल्ला का हुक्म है कि घर आते ही विजनेस के काम में लग जाओ ! और इसी हुक्म के अनुसार जमरुद्दीन को पेटी लेकर गोलघर जाना है और शरफुद्दीन को रेगम के तिलसिले में बात करने के लिए सेठ गजाधर प्रसाद के घर !

नागता-बास्ता करके, लुंगी-टोपी पहनकर, बगल में पेटी लेकर जमरुद्दीन तो गोलघर जाने के लिए तैयार हो गया, लेकिन शरफुद्दीन सो गया।

हाजी साहब को मालूम हुआ कि शरफुद्दीन सोया हुआ है तो बहुत झल्लाये और नीचे गद्दी पर बैठे-बैठे ही उसे गरियाने लगे।

तभी अंसारी स्कूल के अंग्रेजी मास्टर वहाँ पहुँच गये, कोई फरियाद लेकर और हाजी साहब थोड़ी देर के लिए सहज हो गये।

“बाओ मट्टर साब बढ्ठो ? कइसे चलेव ?”

उन्होंने मास्टर साहब का स्वागत किया और एक लड़के को बाज़ार से चाय-पान लाने के लिए कहा। लड़का कोने में से अल्मूनियम की केतली उठाकर चलने लगा।

“देव बड़िया लिबइवे। इस्तेसल।”

उन्होंने लड़के को फिर हिदायत दी और शरफुद्दीन को वहाँ से बुलाने लगे—

“कवे शरफुआ अभई उट्ठे के नाहीं !”

लेकिन कोई उत्तर नहीं मिला तो वे फिर चीखे, “शरफुवा ! सुनेते के नाहीं वे ?”

लेकिन फिर भी कोई जवाब नहीं आया तो हाजी साहब बोखला छठे। वे चीयने लगे, “कवे भोतड़ियावाले सुनेते काही नाहीं वे ! तोरी का करों मैं। पढ़ेतेन बनवरसीटी में भोसड़ी के अउर अक्कल बुरचोदी के छटांक-भर नैहि ने ! घर क एकंठे काम नाहीं कर सकेतेन। देवो मट्टर साब, जोलहा क लड़का म्याँ एत्तर के सोए त कइसे काम चलिए ? तुं ही बोलो मट्टर साब, का हम झूठ कहीते ?”

लेकिन शरफुवा नहीं उठा तो नहीं उठा। मास्टर साहब ने जब देखा कि हाजी साहब का मूढ़ घराब है तो थोटी चापलूसी की बातें करने लगे और हाजी साहब का ध्यान बाज़रू ब्रंट गया। तब तक चाय भी आ गयी थी और हाजी साहब चाय पानेवाले लड़के को यह समझाने में व्यस्त हो गये थे कि अरब से जो कप-प्याली आयी है उसी में चाय उढ़ेलकर लाये वह। चाय भले बाज़ारू हो मगर कप-प्याली दम्पोटेंट होनी चाहिए। घर में चाय बनवाने का रिवाज हाजी साहब के यहाँ नहीं है !

मास्टर साहब को बिदा करने के बाद हाजी अमीरुल्ला खुद चल पड़े सेठ गजाधर प्रसाद के यहाँ—चेतगंज ।

शाम का वक़्त करीब था और बिनेसरगंज में जाम लग गया था । एक ट्रक बीच गड़क पर बँधे-बँधे खड़ा हो गया था जिससे इधर की ट्रैफिक इधर, और उधर की उधर ही रह गयी थी । रिक्शेवाले आगे जाने के चक्कर में एक-दूसरे के पीछे न गड़े होकर एक-दूसरे के बगल में खड़े हो गये थे । साइकिलवाले उनकी दरारों में नै निबलने के चक्कर में दाँतों के बीच में मोस्त के रेशों की तरह यहाँ-वहाँ फँस गये थे । नतीजा यह हुआ कि हाजी साहब का रिक्शा भी एक जगह अँइस गया । उनकी मल्लाहट और बढ़ गयी । कह रहे थे शरफुवा बुरचोदीवाले से कि पने जामो तो मुनायी ही नहीं पड़ा । अरे स्कूटर से निकल गये होते बाली-वाला । द का करेगे अपनी जिन्दगी में समझ में नहीं आता !...

और हाजी साहब ज़िग बक़्त चेतगंज पहुँचे, अँघेरा हो गया था । एक गली के मुहाने पर रिक्शा रुकवाकर वे उतर पड़े और भीतर प्रविष्ट हो गये । थोड़ी देर तक एक गली में दूसरी गली में घुसते-घुमाने जब वे सेठ गजाधर प्रसाद की कोठी पर पहुँचे तो यहाँ काला अन्धकार छाया हुआ था । बिजली गायब थी । पता चला कि बस में गयी हुई है, अभी तक नहीं आयी । कम्प्लेण्ट उसी वक़्त निचवा दिया गया था, लेकिन कोई मुनवायी नहीं । अब जाकर हड़काना पड़ेगा तभी काम चलेगा ।

हाजी अमीरुल्ला अँघेरे में ही बैठ गये और सेठ गजाधर प्रसाद से व्यापार-वार्ता करने लगे ।

सेठ गजाधर प्रसाद के यहाँ रेशम का व्यापार आज से नहीं हो रहा है । यह उनका पुर्ननी है । घंने सेठजी इस घन्घे में अब काफी असन्तुष्ट हो गये हैं । अब हमने नम्बर दो का काम होने लगा है । असली क्या है और नकली क्या है, आप बता गही सवते, जबकि उनके बाप-दादा के जमाने में सारा काम एकदम पेवर (प्योर) होता था । रेशम तो इस तरह बटा जाता था कि कोई सुने तो दंग रह जाये । घर में आठ-आठ, दस-दस पहसवान पले हुए थे, जिनकी जाँघो पर एक बाल नहीं था । एकदम धिबना ! जरा-सा भी बास जगता कि 'बाससफा' साबुन से साफ कर दिया जाता । वे सोच मुबह से लेकर शाम तक अपनी जाँघों पर रेशम बटा करते थे । एकदम महीन । इतना महीन कि क्या बतायें ? फिर उम पर इतनी सफाई से सोने-चाँदी का तार चढ़ाया जाना था कि देखनेवाले दाँतों तले उँगली दबा लें । तभी न पाँच-पाँच तोले की साड़ियाँ बनती थी ! और असली सोने के कामवाली ! अब तो सब काम मशीनी हो गया है ।

हाजी अमीरुल्ला बहुत देर तक सेठ गजाधर प्रसाद से व्यापार-वार्ता करते रहे, फिर उठे और बाहर आ गये । बाहर गली में भी काफी अँघेरा था और रास्ता मुनायी नहीं पड़ता था । वे किसी तरह टो-टोकर सड़क तक पहुँचे और इधर-उधर

कोई खाली रिक्शा देयने लगे, लेकिन दूर-दूर तक कोई रिक्शा उन्हें नहीं दिखायी पड़ा। वे भीतर-ही-भीतर बहुत चिखलाये और फिर पैदल ही चल पड़े। आज का दिन बुरचोदी के खराब है...!

23

सावन का मेला शुरू हो गया है। सोमवार के रोज इधर मृत्युंजय महादेव पर और उधर मानस मन्दिर पर बड़ी भीड़ होती है। सुना जाता है कि पहले सावन-भर बनारस में मेला रहता था। तीज के दिन का तो कहना ही क्या है। एक दिन पहले रात-भर रतजगा होता था और स्त्रियाँ रात-भर कजरी गाया करती थीं। दूसरे दिन ईश्वर गंगी और शंखू धारा पर गौनहारिनों का मेला लगा करता था, जहाँ स्त्रियाँ कजरी गाती हुई जाती थीं और नगर के छँले इनाम बाँटते थे। अब कहाँ वह काशी है और कहाँ वह बहार है?

रामभजन दलाल लँगोट के ऊपर गमछा लपेटे दतीन कर रहा है और आँगन में घूम रहा है। कभी-कभी एक कजरी के बोल वह गुनगुना लेता है—

चार गुण्डा आगे चलें

चार गुण्डा पीछे चलें

बिचवा में चला लू उतान साँवर गोरिया

तुझे बाटू नोये क जबान साँवर गोरिया...

रामभजन बलिया जिले के एक गाँव का रहनेवाला है। गाँव में खेती-बाड़ी थी तो खरूर, पर मर-मुकदमा में सब कुछ बिला गया और रामभजन चला आया बनारस।

तैसे तो बलिया के लोग लण्ड नहीं होते, पर रामभजन लण्ड था। वह कभी-कभी अपनी नण्डई के किरने रस ले-लेकर सुनाया करता है। हनिफवा से उसकी बहुत पटती है। जाने-बीने की दोस्ती है। पहले तो रामभजन नहीं पीता था, पर अब ऐसी आदत हो गयी है कि 'सराब' नहीं मिलता तो चैन ही नहीं मिलता। पहले उसका काम सिर्फ भाँग से चल जाया करता था। यहाँ उसकी दोस्ती नरेश नामक एक मूर्तिकार से हो गयी थी जो संगमरमर की मूर्तियाँ बनाया करता था और विगनाथ गली में उसकी एक छोटी-सी दूकान दूखा करती थी। दूकान में राम, कृष्ण, हनुमान, शिव और दुर्गा की अनेक छोटी-बड़ी मूर्तियाँ रखी होतीं और नरेश

उनके शीश में बैठकर मायने में आने-जानेवाली सड़कियों और हिप्पियों को समान भाव में देखा करता था। नरेण को सड़कियों के स्तन और हिप्पियों के बांस बहुत पसन्द थे। वह उनकी तरह-तरह में उड़माएँ दिना करता था और रामभजन उसकी अतिरिक्त प्रतिभा में चमकृत हो जाता था।

रामभजन की ज्यादातर शामें वहीं बीतती थीं। तब वह कोई स्थायी काम नहीं किया करता था और उसके दिन बहुत परेशानों में गुजर रहे थे। ऐसी स्थिति में नरेण के पास पहुँचकर उसे बहुत प्रान्ति मिलती थी।

नरेण बहुत मनमौजी प्राणी था। वह दिस का बहुत साफ था और तबीयत का नेक। वह बिचकार भी बहुत अच्छा था। हमेशा घोड़ी और सिल्क का कुर्ता पहनता तथा नंगविंदों में तरह-तरह की अँगूठियाँ। चरमा वह शौक के लिए लगाया करता था। उसने कई-कई हिप्पियों से दोस्तीवाँ कर रखी थी और अक्सर उनकी दूबान पर कोई-न-कोई हिप्पी बैठा रहता था। वह हिप्पियों को भाँग प्रियाना और बीड़ी पिलाता। कभी-कभी उधर काँजी-बराबाला गुजरता तो बीड़ी-बराबाला पियाता। धुँबी ये हिन्दी नहीं समझते थे इसलिए बीच-बीच में उन्हें गूढ़ हिन्दी में वह गालियाँ भी दे लेता था। मादा हिप्पियों का वह बहुत मजाक उड़ाता था। जब भी कोई मादा हिप्पी किसी किरम का नयरा करती वह कह उठता, "हज़रू पढ़न छत्रुहट!" और हँस पड़ता। हिणिन भी हँस पड़ती।

कभी-कभी यह मौज में आकर गुनगुनाने भी लगता था। उर्दू के कुछ बच्चे और उसकी जवान पर थे। भौका देखते ही वह उन्हें पेश कर देता था। उर्दू कहता था कि बनारस में तैग अली नाम के एक ऐसे शायर हुए हैं जिन्होंने बने बनारसी में गेर बहे हैं। उनका एक प्रसिद्ध गेर इस प्रकार है—

गरमिटाव कइली ह रहिसा चवाय के।

भैबन घपल बा दूध में घासा तोरे बदे।¹

नरेण हमेशा गूढ़ बनारसी में बोला करता। उसकी शायरी का प्रयोग बहुत होता। रामभजन को देवकर कभी-कभी वह गूढ़ शायरी बोलने लगता, "आई-आई यइठी। खवा के वहाँ बज बजो रे रे गिरम उठता।

वहाँ जाने पर रामभजन के दुहरे उद्देश्य साफ़ हो जाते हैं। दोनों भी हँसता था और नरेण का मुख सदा के लिए मुस्कुराता रहता। पड़े भाँग का प्रभाव मिलता तो अन्य। लेकिन नरेण के लिए यह

1. यानी हमने जो पना चवाकर बाला जिन के बालों में दूध भर दिया था (मिठाई भिगीकर रख छोड़ी है। नरेण के लिए यह था भार)।

नहीं मिलती ।

रामभजन ब्रह्माघाट में रहता है । कई-कई तंग गलियों और उन तंग गलियों में बाड़े-बैड़े बँठी कई-कई बग़ल गायों को पार करते हुए गंगा के किनारे पहुँचने पर एक निहायत पुराने ढंग की लम्बी-चौड़ी जो इमारत दिखायी पड़ती है, रामभजन उसी इमारत में रहता है । इमारत के सामने सड़क पर ही एक सरकारी नल लगा है, जिस पर मुहल्ले की स्त्रियाँ आकर अपने बर्तन माँजती हैं, कपड़े धोती हैं और कभी-कभी नहाने के साप-साय लड़ भी लिया करती हैं । बगल में ही एक ढोठ किन्म का साँड़ बँठा रहता है, जिसका गोबर नल के पानी में मिलकर पूरी गली में बहता रहता है ।

नल के पास ही इमारत का द्वार है, जिसके भीतर पहुँचते ही पता चल जाता है कि दूर से ही जिस मन्दिर का कलश दिखायी पड़ रहा था वह इसी इमारत के आँगन में है । मन्दिर बहुत पुराना है और पत्थरों का बना हुआ है । उसके भीतर एक काफी बड़ा शिवलिंग रखा हुआ है, जिसके अरधे पर हमेशा कोई-न-कोई फूल चड़ा रहता है ।

इस मन्दिर के पीछे पहुँचकर बाईं ओर मुड़ जाने पर एक सँकरा-सा गलियारा है जिसे पार करते ही एक सीढ़ी मिलती है, जिसके बगल में ही एक निहायत पतली परिधि का कुआँ बन्द पड़ा है, जिसकी गढ़ारी सबसे ऊपरी मंजिल में लगी हुई है । अब इसकी जरूरत ही नहीं पड़ती ।

रामभजन सीढ़ी के ऊपरवाले कमरे में रहता है—अपनी पत्नी और बच्चों के साथ । पत्नी दोनों वक्त शिवजी की पूजा किया करती है और अपने पति की दलाती में उन्नति के लिए शंकर भगवान से आँचल फँलाकर भिक्षा माँगा करती है । बड़ा लड़का यामिनी संस्कृत पाठशाला में संस्कृत पढ़ रहा है ।

पहूँ पूरी-की-पूरी इमारत एक पण्डे की है, जिसके बारे में प्रसिद्ध है कि उसने एते किसी पुराने रईस से हड़प लिया है । पण्डा कभी-कभी ही उस तरफ आता है ।

हनिपया जिग बहुत सीढ़ी चढ़कर ऊपर पहुँचा, रामभजन की टेक समाप्त हो रही थी और वह गमछे के भीतर हाथ ले जाकर लेंगोट की कसावट दुरुस्त कर रहा था । भीतर चन्दन छाप अगरवत्ती की सुगन्ध भरी हुई थी और एक तस्वीर के नामने उसकी पत्नी हाथ जोड़े खड़ी थी ।

"नमस्कार !"

"नमस्कार ! का हो हनीफ, हालचाल ठीक है न ?"

"हाँ ठीक है ।"

तब तब एक सड़का उधर निक्कल आया तो राममजन ने उसे चाप-शान के लिए धेड़ दिया।

“ए बकरी, नईसा गिरधारी के ईहा में दुइठे इपेनल चाप जा के नियाया त। अउर बन्सू के ईहा में दुइठे पानी से लिहै। माघ में ‘हत्तबल’ पत्नी। बहे तनी बेइया ममाने!”

और सड़का दोड़ता हुआ मीठियाँ उतर गया।

इस बीच हनोट को प्यास सम आयी थी। उसने पानी माँगा तो सँगोठ टीक कान्हे-कारते राममजन ने उसे एक चौकी की ओर इजारा कर दिया जिस पर पानी से भरा हुआ एक दिसाम रखा हुआ था।

“रिया, फाँचा हो। अबहिसेय रगमो है।”

सभी कोई सड़का छत पर खींचा, “हाय रजा इ बटनी!”

और एक बैंगनी-नी पतंग बटवर राममजन के आँगन में आ गिरी। राममजन झप्पा उठा।

“एकरी बहिन के... सरबा रात-दिन उहै पतंग उहै पतंग! एकरी बिटिया क पूत मारी, हरमेसा पतंग...”

सड़का पतंग लेकर भाग गया।

हनिय्या ने अब अपने आने का मकसद बताया कि हाजी अमीरुल्ला के लिए बाहरी माहब टीक करने हैं जो मीघे हाजी माहब के घर पहुँचें और बजाय मार्केट में मान्ग गरीबने के उनकी गद्दी पर ही मान्ग गरीबें।

इस समझा पर थोड़ी देर तक विचार होना रहा, फिर दोनों वहीं से बाहर भागे और एक रिक्के पर बैठकर मानम-मन्दिर की ओर चल पड़े भावन का सिगार देगने। एक पंच हुई काज। घरम-कारज भी हो जाय और आँख भी सेंक लो जाय!

रेहाना को तबीयत ज्यादा बढबढ़ उठने लगी है। उसकी अम्मा को पक्का पक्कीन है कि उसकी बिटिया को किरा ने ठूँठ कर दिया है। रेहाना के मामा समिउल्ला ने ये मयदून माह, वहाँ से पाक बत्ती से आये हैं। उसे जलाकर और लोवान मुनगाकर एक दिन जब बैठेगा उन्होंने रेहाना को तो हनुमाने सगी बह। पहले तो

उमने इधर-उधर सिर को हिनाया, फिर जमीन पर दोनों हथेलियाँ दबाकर झूमने लगी। अम्मा ने पीछे से जूड़ा खोल दिया।

“खोल के है तै ?”

मामा ने पूछा तो रेहाना ने क्रोध से बाँखें तरेरीं और फिर झूमने लगी। फिर पूछा तो बोली, “हम्मै बहादुर शहीद लै चलो, वहाँ बतायेंगे।”

बहादुर शहीद का मजार कचहरी के पास है। बरना के इधर ही। वहाँ हर जुमेरात को बनारस और आसपास के गांवों की स्त्रियाँ पहुँचती हैं तथा अपने-अपने भूतों ने खेलती हैं। जुमेरात के रोज वहाँ अच्छा-ग़ासा मेला ही लग जाता है। मजार के बाहर भैंस के कीमे की पकौड़ियाँ विकती हैं और बेसन की फुलीरियाँ तथा मौसमी फल। बच्चों के लिए आइसक्रीमवाले भी अपना-अपना ठेला लेकर पहुँच जाते हैं।

रेहाना को बहादुर शहीद ले जाया गया। जुमेरात का दिन। मजार के भीतर और बाहर स्त्रियों का मेला-जैसा लगा था। तमाशा देखनेवाले पुरुष भी कम नहीं थे। रेहाना को अम्मा रेहाना को लेकर मजार पर जब पहुँची, मेला अपने शबाब पर था।

वे बगल से घूमकर भीतर पहुँचीं और सिन्नी बगैरह खरीदकर लाइन में खड़ी हो गयीं। फिर थोड़ी देर तक इतनी तरह झूमने के बाद वह अपने खुले हुए बालों को तैजी के साथ झटकारने लगी और मानो क्रुद्ध होकर वह फिर गाने लगी—

पास में ही एक अन्य नटकी अपने भूत से खेल रही थी और गा रही थी—

छोटे-बड़े भइयन से

करीले सलमिया गुरु जी,

लाल-लाल छड़िया न दियावा हो बाबा

हमें एतना संसतिया न चढ़ावा हो बाबा !

इतना गाकर वह चुप हो गयी और जमीन पर हथेलियाँ पटक-पटककर झूमने लगी। थोड़ी देर तक इसी तरह झूमने के बाद वह अपने खुले हुए बालों को तैजी के साथ झटकारने लगी और मानो क्रुद्ध होकर वह फिर गाने लगी—

तोरी तकतिया देगी हो संयद

अब की बिफइया नाही छोड़व हो संयद

छोड़व त ओही उरुसवा में छोड़व...

और देखते-ही-देखते रेहाना भी खेलने लगी। उसके मुँह से भी गीत के बोल फूट पड़े—

छोटे-बड़े भइयन से करीले सलमिया...

असीमुन को फिर धुन गया है।

नगी भर रही थी, अचानक लगा कि उन्टी होगी और वह नाबदान की ओर दौड़ी, मगर रास्ते में ही उन्टी हो गयी। चक्का-चक्का धुन !

असीमुन बेहोश हो गयी।

इकबाल गलिन लगा रहा था। अम्मा को गिरते देखा तो चौंकी पर से उटकर मोधे छन पर पड़ गयी।

'अम्मा अम्मा !'

वह धिन्नाने लगा। असीमुन के बन्धों को झकझोरने लगा, लेकिन अम्मा नहीं बोली।

वह नीचे भागा।

मतीन कारपे पर धँटा कोई धागा मुलमला रहा था।

"अम्मा पत्नी देखो, अम्मा के का हो गोवा है ? मार धुने-धुन गिरी से।"

और मतीन धागा-धागा छोड़कर सीढ़ियाँ चढ़ गया।

असीमुन को धुनमधुन देखकर वह तड़प गया। किसी तरह उसने उसे उठाकर भीतर गलियाँ पर लेटाया और इकबाल को सहेजकर डॉक्टर अंसारी के यहाँ दौड़ गया।

लेकिन डॉक्टर साहब यंगर फीम के घर आने को तैयार नहीं हुए। मतीन ने साथ मिलने की ओर साथ वादे दिये कि फीम के पैसे बाद में दे दूंगा, पर वे नहीं माने। और डॉक्टर अंसारी की छिपेगरी से बाहर निकलकर वह सड़क पर पागलों की तरह दौड़ने लगा।

"क्या भोवा भ्या ?"

बिगी ने किसी से पूछा तो सब एक-दूसरे का मुँह देखते रहे। मतीन उसी तरह दौड़ता रहा।

वह डॉक्टर गुप्ता के यहाँ गया। डॉक्टर गुप्ता उसकी दशा देखकर घबरा गये और बेचारे भागे भागे। बहुत देर तक वे असीमुन को देखते रहे। फिर दवा के लिए पुर्ना लिखकर चले गये। साथ ही छोटी-छोटी कुछ और पुर्नियाँ मतीन के हाथ में थमा दी। एकसरे कराना होगा। धुन-धुन की जाँच भी।

मतीन उदास हो गया।

इकबाल माँ के पास बैठा रो रहा था।

यद्यपि थोड़ी देर बाद ही असीमुन को होश आ गया था मगर वह लस्त-मस्त हामत में जगी तरह पड़ी थी। आस-पड़ोस के लोग जुट आये थे। 'आज अगर

नतीक की धीवी होती तो कितनी मदद करती।' अचानक मतीन को कमरून की याद आयी और वह उसके दुर्भाग्य पर सोचता हुआ बाहर निकल गया।

उमे पैसे चाहिए।

वह सीधे हाजी अमीरुल्ला साहब के यहाँ गया। एक गरीब बुनकर का उसके गिरस के अलावा भला इस जहान में और कौन सहारा है? जिस गिरस के लिए अपना घून जला-जलाकर रंग-विरंगी सुनहरी-कामदार साड़ियाँ तैयार करते हैं, जिनके बल पर गिरस का इकबाल बुलन्द होता है, मुसीबत पड़ने पर वह न काम आवेगा तो कौन आवेगा?

लेकिन हाजी अमीरुल्ला ने और ज्यादा अगता देने से इनकार कर दिया। उन्होंने उसे याद दिलाया कि अभी पिछली ईद का ही कितना कर्जा चढ़ा हुआ है उस पर! और फिर चलते-चलते एक सवाल भी उसके सामने जलते हुए लत्ते की तरह फँक दिया—

“अउर तोरी सोसइटिया का भई मतीन?”

मतीन भीतर-ही-भीतर झुलस उठा। वह बगैर कुछ बोले ही बाहर आ गया।

सड़क काफी व्यस्त थी। साइकिलों, टालियों, टेलों और पैदल चलनेवालों से उसकी सँकरी आकृति और ज्यादा सँकरी हो गयी थी। एक जगह चार-पाँच लोंठे पान खाकर स्थायी रूप से खड़े थे और उन्हें किसी की भी परवाह नहीं थी। न साइकिलों और टालियों-टेलों की, न आदमियों की। वे पता नहीं किस बात पर हँस रहे थे और अत्यन्त भद्दे इशारे कर रहे थे। मतीन किसी तरह वहाँ से निकलकर आगे बढ़ा तो हनुमान फाटक चउमुहानी पर उसे हनिफवा मिल गया। पान खाये, मुँह में पीक गलगलाते, लुंगी के टोंक में सस्ती मिल गयी सब्जी लिये, बलुवावीर की ओर में चला आ रहा था।

अनीमुन की बीमारी के बारे में हनीफ को सब मालूम था, अतः वह खड़ा होकर मतीन के प्रति हृदय की जताने लगा और बातों-ही-बातों में उसने उसे एक महत्वपूर्ण राय भी दे दी कि अपना करघा बेच दो। अरे कमाई-धमाई तो होती ही रहेगी। जब जान ही न रहेगी तो पैसा किस काम का? गिरस के घर जाकर मजूरी पर दिन लो, पर बाल-बच्चों की जिन्दगी तो सलामत रहे।

और उसके साथ ही उसने यह भी जोड़ दिया कि सोसायटी तो बना ही रहे हो, पैसा मिल जायेगा तो दूसरा करघा गाड़ लेना।

यही नहीं, हनिफवा ने आखिर में यह भी कहा कि अगर वह राजी हो इस बात के लिए तो जिनका कोई दूसरा देगा उससे वह दस रुपया ज्यादा देकर उसका करघा खरीदने को तैयार है। पैसा पूरमपूर नकद!

मतीन हनिफवा से नफरत करता था और उसकी बातों में छिपे हुए जहर को

भी समझना था, पर बीबी बी गम्भीर हासत ने उसे दग कदर बिधलित कर दिया था कि उसकी पेना कृच्छ्र हो गयी थी।

वह हनिक्वा के हाथों अपना करपा बेचने के लिए तैयार हो गया।

और देखने-ही-देखते मतीन के घर का करपा हनिक्वा के घर में गड़ गया। एक करपा और बड़ गया वहाँ।

मतीन के घर में करपे की जगह गिरफ्त एक गद्दा भेष रहा और रह गये घुदे हुए करपे के निशान। घटा-गुट की आवाज गायन हो गयी। घर एक अनन्त गन्नाटे में डूब गया।

और मतीन को लगा कि वह असमय ही युक्ता हो गया है।

अगले दिन वह हाजी अमीरुल्ला की कोठी में एक मजूर की हैसियत से गया, खानी पर बिनते-बाने बुनकर की हैसियत में नहीं। जहाँ कुछ लोग मजूर से खानी-बाने, बानी-बाने में बित्रीबाने और बित्रीबाने से 'गिरस्ता' में बदलते जा रहे थे वही मतीन था कि खानी पर बिनते-बिनते मजूर हो गया था।

हाजी अमीरुल्ला के यहाँ इधर कुछ करपे और बड़ गये थे तथा कुछ कारीगर काम छोड़कर मुबारकपुर की ओर चले गये थे। उन्हें मजूरी की जरूरत थी। मतीन की उपस्थिति से वे श्रुण हुए और गद्दी पर बैठे-बैठे ही उन्होंने एम. एस. ए. गाह्व को फोन मिलाया कि हमारा काम हो जाना चाहिए।

26

उन्नीस की रमजान का पीद नहीं दिखायी दिया, पर बनारस के अधिकांश बुनकरों ने—विशेषकर सिन्धो ने—दूसरे दिन से ही रोड़ा रखना शुरू कर दिया है। हो सकता है बही दिखायी हो पड़ गया हो। एक रोड़ा अगर छूट गया तो हजार रोड़े टूटने का गुनाह होगा।

रोड़े के साथ-साथ कारीगरों का काम भी तेज होने लगा।

ईद की तैयारियाँ अभी से शुरू हो गयी।

फरिद बाद लोग कुरान पाक की तिलावत करते हैं और फिर काम में जुट जाते हैं। मौम भी ठीक है। न ज्यादा गर्मी न ज्यादा जाड़ा। काम के कारण रोड़ा घन नहीं रहा है। प्यास भी नहीं लगती।

“अल्ला मिर्सा बी मेहरबानी है म्याँ !” लोग एक-दूसरे से कहते हैं और अपने

आपमें तल्लीन हो जाते हैं ।

शाम को चार बजे से ही चौराहों पर भीड़ लग जाती है । छित्तनपुरा चउमुहानी पर एक छोटा-मोटा बाज़ार ही लग जाता है । पटरियों पर और ठेलों पर रद्दी किस्म के केले और गले हुए अमरूद विकने लगते हैं । धनिया-मूली का तो अकाल ही है, पर एकाध जगह कभी-कभी ये चीजें भी दिखायी पड़ जाती हैं और लोग उन पर टूट पड़ते हैं । किसी-किसी ठेले पर मक्खियाँ और हड्डों (वरं) से घिरे हुए पिल-पिले खजूर भी कभी-कभी दिखायी पड़ जाते हैं और अचानक ही भीड़ उस ठेले की ओर उमड़ पड़ती है । अरब का मेवा है ! इसे हमारे रसूले अरबी ने खाया है, इसलिए यह सुन्नत है । रोज़ेदार ने अगर खजूर से अफ़तार किया तो अल्लाह ताला बहुत खुश होंगे, क्योंकि यह उनके हवीव (ह. मुहम्मद) की प्रिय गिज़ा रही है ।

सूर्यास्त होते-होते बुनकरों का एक दल बगीचों की ओर उमड़ पड़ता है—नाश्ते-दानों में घुघनी-मटर और गोस-रोटी-चावल भरे, दतून करते हुए, टोपी लगाये, शोर मचाते, एक-दूसरे को गरियाते ।

“अवे भोसड़ियावाले धीरे काहे नाहीं चलते वे ?”

“मगरिब क टेम निगचा गोवा है वे !”

“झँटहियोवाले एही त एकठे रोज़दार भयेने नोखे के !”

“तैं ओट्टिन कहाँ रुक गये वे ?”

“इ जविरवा के तनिको ढंग नहिने वे !”

और बगीचे में पहुँचकर खजूर के पत्तों की चटाइयों पर लोग बैठ जाते हैं । अज्ञान का इन्तज़ार शुरू हो जाता है ।

अफ़तार के बाद शौकीन लोग अपने साथ छिपाकर लायी गयी पवित्र ताड़ी का सेवन करते हैं और बड़े-बूढ़े तरावी (रोज़े के दिनों में पढ़ी जानेवाली विशेष नमाज़) पढ़ने के लिए मस्जिद चले जाते हैं । वच्चे सेहरी जगाने का स्वाँग करते हुए सड़क पर घमा-चौकड़ी मचाने लगते हैं ।

मतीन रोज़ा खोलने के बाद खटिया पर लेटता है तो तरह-तरह की बातें उसके दिमाग में चक्कर काटने लगती हैं ।

हमारी ये हालत आख़िर कब तक रहेगी ? क्या हम हमेशा-हमेशा तक गिरस्तों की गुलामी करते रहेंगे ? क्या हम अपने पैरों पर कभी नहीं खड़े हो सकेंगे ? मोवीन मास्टर एक रोज़ बता रहे थे कि रुस के बुनकर बहुत सुखी हैं । उनके पास जिन्दगी की सारी सहूलियतें मौजूद हैं और एक हम हैं कि...

आख़िर वह दिन कब आयेगा जब एक आम मजूर बुनकर भी एक बेहतर जिन्दगी जी सकेगा ? वह एक मजूर नहीं, बल्कि एक फ़नकार समझा जायेगा...

और ध्यान-वृत्ति की निगाह अपने मंदिर की ओर घूम जाती है, जो मंदिर के शिल्पों की मोर्चियाँ याद कर रहा है—मौ एंटी कैंट, कैंट माने बिम्बी। दो ओर ओर डाल, डाल माने कुत्ता—“मन्त्रीन देर तब इकबान की और उमकी उम बिनाब की देखता रहता है, बिम्बी भाषा बह नही समझता।

27

दो बजे रात में ही मेहरी जगानेवालों की टोनियाँ निश्चय पड़ती हैं।

“मेहरी के गानेवालों ! जागो ! मेहरी के गानेवालों—”

इस तरह की आवाजें मनी-मनी में उमगती हैं और मित्रों उठकर घूमना गुनगाने में व्यस्त हो जाती हैं। कोई रात का बचा सोम गरम करती है, कोई पराठे बनाती है, कोई हनुवा और कोई पोम्मे की नुरी नैयार करती है। थक-भड़क में बच्चे भी जाग जाते हैं और मेहरी गाने में वे भी शामिल हो जाते हैं। रोड़ा भले न रातों पर मेहरी के नाम पर बड़िया पदार्थ खा लें !

मस्जिदों के कमरों पर छोटे-छोटे बम्ब लगा दिये गये हैं जो अज्ञान के बक्ल जमा दिये जाते हैं और मेहरी का बक्ल खत्म होने ही बुझा दिये जाते हैं। पूरे रमजान-भर मस्जिदों में साठहत्तीकर भी निट रहते हैं ताकि अज्ञान की आवाज दूर-दूर तक गुनासी पड़ सके। शाम की जो अज्ञान होती है वह इस बात का संकेत है कि अब खाना-पीना शुरू कर देना चाहिए और मोर की अज्ञान इस बात की ओर इशारा करती है कि अब खाना-पीना गब बन्द।

इन साठहत्तीकरों में मेहरी के खत्म होते हुए समय की जानकारी भी दी जाती है।

“तीन बजने में पन्ना मिनट बाकी है। मेहरी के गानेवालों मेहरी खा लो।”

इस तरह की आवाज से पूरा माहौल गुँजता रहता है।

बाग़हबे रोबे के दिन, जबकि हम रोबे के बाद रोबे की एक टांग टूट चुकी थी, मेहरी के बक्ल अचानक एसान होता है—

“पुरानी बाइगी के महतो हाजी सलामतुन्मा गिरम का इन्तकाल हो गया है। कल अगिरबाद साट पर मिट्टी पड़ेगी।”

और इस एसान के साथ ही पुरानी बाइगी के ओम्में में इस बात पर बहुत छिड़ जाता है कि अदमा महतो किसे बनाया जाय ? यह बहुत महतो साहब के

इन्तज़ाम की सूचना के साथ शुरू होती है और अगले दिन तक जारी रहती है।

कन्नड़स्तान में उधर हाजी सलामतुल्ला साहब की कन्नड़ खुदती रहती है और उधर नये महंतों के प्रश्न पर बड़े-बड़ों में बहस होती रहती है।

अन्त में यह तय होता है कि हाजी सलामतुल्ला गिरस के मंडले भाई उल्ला तानीवाले को पुरानी वाइसी का महंतो बनाया जाय।

कुछ लोग उस पद के लिए उनके बड़े लड़के का नाम भी प्रस्तावित करते हैं, पर उस प्रस्ताव को बल नहीं मिल पाता। अकेले हाजी अमीरुल्ला के पिटिर-पिटिर करने में क्या होता है ?

हाजी अमीरुल्ला नाराज हो जाते हैं। उनके दामाद को महंतो न बनाया जाना उन्हें बहुत गलत है, लेकिन पंच के आगे उनकी क्या विसात ?

चहारम के बाद हाजी उल्ला तानीवाले को महंतो बनाने की रस्म अदा की जाती है।

दोने-मुहल्ले के सभी ग्राम लोग जुटते हैं। एक-से-एक हाजी और एक-से-एक संठ। उनमें एक काने हाजी साहब भी हैं, जिनका बहुत देर तक लोग अप्रत्यक्ष ढंग से मजाक उड़ाते रहते हैं, फिर सरदार के इशारे से सब घामोश हो जाते हैं।

उल्ला तानीवाले मचिया पर बैठे हैं और उपस्थित लोगों को गहरी नज़र से देख रहे हैं। भाव शायद यह है कि अब ये लोग धार्मिक और सामाजिक कार्यों में मेरी मातहतो मानने के लिए बाध्य होनेवाले हैं। बुरचोदीवाले अभी तक मुझे कुछ नहीं गमसते थे, अब देखें कि मैं क्या हूँ !

पाँचों के सरदार हाजी गलीलुल्ला हाजी उल्ला के सिर पर पगड़ी रखते हैं और घोषणा करते हैं कि ये हाजी साहब आज से पुरानी वाइसी के महंतो हुए।

चूँकि रमजान का महीना है, इसलिए वे लोग भी पान-वान नहीं प्या पाते जो रोखे से नहीं हैं। लेकिन कोई मलाल नहीं। चउमुहानी पर चलकर चाय पियेंगे। फल्लू चायवाले की दूकान पर पर्दा लटकता होगा।

28

अप्तार के बाद मीटिंग रंगी जाती है।

मीटिंग रुकक चाना के घर में होती है। नीचे, करघेवाली कोठरी में। जब

मय सोम दबड़ें हो जाने हैं और अपनी-अपनी बीड़ियाँ गुमनाकर जम जाने हैं तब मनीन मरु बरता है।

यह सोमायटी के बारे में सारी जानकारी देता है। जितने पैंगे दबड़ें हो गये हैं और जितने बीं भंभी बमो है। इगका जिफ़ करने के बाद यह सोमायटी की अहमियत के बारे में अपने विचार व्यक्त करता है और थूप हो जाता है।

"बोमो म्याँ का बहे तो?"

यहीर बी ओर से यह सवाल उठता है, जिस पर सब गामोंग रहते हैं। यह गामोशी पोही देर तक ज्यो-बी-ज्यो बरकरार रहती है, फिर रकड़ चाचा उसे तोंड़ देते हैं, "तोइए न म्याँ, घबराये से काम बनिए? सबुर करो मतीन, मय होइए।"

और मीटिंग बर्यास्त हो जाती है।

लेकिन सोमो का मन इतने से सन्तुष्ट नहीं होता। वे बाहर निकलकर तरह-तरह की टिप्पणियाँ करने लगते हैं।

"इ सोमाइटी-फोमाइटी से का होइए म्याँ?"

"मनीन का दिमाग घराय हो गोवा है अउर कुछ नहीं।"

"कहां म्याँ, बुरापोदीवासा ऊ बेंक हम्मे पदसा दइए म्याँ?"

"फिर दइए त ऊ कजाँ न होइए म्याँ?"

"अउर का, ओके फिर अदा भी त करे के होइए।"

"अउर नाही का फोकट में मिस जइए।"

"फिर एतनी आसानी से मिसिए म्याँ पइसा?"

"अरे गिरस सोमन से बचिए तब न मिसिए।"

"अउर नाही तफा।"

"क म्याँ गुमाइटी बन जइए त हमरो मास सिगापुर-बैंकक में बिकिए?"

"घुवाब ॥ देयें सेव।"

"अरे पहले त बनने मुसकिल है।"

"एम्मे बड़ा शराट है म्याँ।"

और मय बीड़ी फूँकते हुए लुगी का टोका ऊपर उठाये हुए, अपनी-अपनी राय में अपने-अपने मन में घुश होते हुए अपने-अपने घरों को चले गये।

गोसाइटी-फोसाइटी सब बेकार है।

लेकिन मतीन की धैन नहीं। यह गीधे घर नहीं गया। जो सोम मीटिंग में नहीं आये थे और जिन सोमो ने अब तक पैसा देकर दस्तखत नहीं किया था, उनसे घरों में यह गया और उन्हें सपझाने की उसने कोशिश की। लोगों ने अपने-अपने हाजी

साहब, अपने-अपने गिरस के प्रति अपना-अपना भय प्रदर्शित किया तो मतीन ने उन्हें आश्वासन दिया और अपना उदाहरण पेश किया कि मैं भी तो तुम्हो लोगों के समान हूँ।

फिर वह घन आया और लेट गया।

अलीमुन चुन्-चुन् खांसती रही और ब्रह्म सोचता रहा।

एकबाल गहरी नींद में मो रहा था।

29

एधर कई रोज से अलीमुन की तबियत टनमन हो गयी है। आज वह सुबह-सुबह हाँड़ी-चूली करके बगीचे के घर चली गयी थी और रेहनवा से देर तक बतियाती रही थी। लेकिन रेहनवा ज्यादातर ग्रामोश ही रही। लेकिन बीच-बीच में उसकी छोटी बहिन सुलतनिया उसकी हँसी भी उड़ा देती थी, पर वह कोई जवाब नहीं देती थी।

रेहनवा की माँ ने बताया कि अबकी उरुस में इसे मखदूम शाह ले जाना है। आलमपुरा के मोली साहब ने बताया है कि यह वहीं जाकर ठीक होगी। कोई खराब नहीं है।

मखदूम शाह की मजार जौनपुर से आगे फ़ैजाबाद जिले में अकबरपुर के पास पड़ती है। अलीमुन एक बार वहाँ जा चुकी है। जब पहले-पहले उसके मुँह से खून गिरना शुरू हुआ था तो एक मोली साहब ने उसे भी बताया था कि जिन का असर है। और वह रऊफ़ नाचा की बीबी के साथ गयी थी मखदूम शाह।

उस यात्रा की याद करते ही उसके रोएँ खड़े हो जाते हैं। बाप रे! इतनी परेशानी, इतनी परेशानी कि कहते नहीं बनता!

वे लोग एक रिजवं बस से गयी थी। घर से नौ बजे रात को ही मठरी-मुठरी बाँधकर सिधा-पिधान लेकर निकल पड़ी थीं। बस भदहूँ¹ पर ने जानेवाली थी। वहाँ सड़क के किनारे बँटे-बँटे रात के बारह बज गये तब जाकर वह रिजवं बस लायी। फिर उसमें इतने लोग भर गये कि साँस लेने को जगह नहीं। बस छूटी दो बजे रात। नींद के मारे आँखें झपी जाती थी, पर सोयें कैसे? कुछ लोग तो सीटों

1. बनारस का एक मुहल्ला।

के घोष जो रास्ता होता है, वहीं बिछा-बिछाकर मुड़क गये।

मुख्य करीब आठ बजे बग मगधूम शाह पहुँची। वहाँ का तो मन्त्र ही निरासा था। मन्त्र के पारों ओर घेत और घेतों में झोंकें बने हुए थे। एक-एक झोंकें का किराया गो-गो रगड़ा। कई लोग मिलकर एक-एक झोंकड़ा से रहे थे।

दोपहर होने-होते हम बन्दर भीड़ हो गयी कि या अस्ताह! मुई गिरे तो घोष में ही भटक जाय। जिनकी हनुआनेबानी औरतें उतनी ही देखनेवाली। रात-भर हो-रहना। मुख ओरत-मदें एक साथ मैदान में पाग़ाना कर रहे हैं और कोई धर्म नहीं। पारो ओर पाग़ाना-ही-पाग़ाना! पेक्षाव-ही-पेक्षाव! उफ़! बदबू से नाक नहीं आती थी।

घोड़ी दूर पर ही एक तामाव है वहाँ, जिनके पानी को 'नीर' कहा जाता है। उगी के पानी से महाना और उगी का पानी पीना। लेकिन उगमें पाँव टासने की इजाजत नहीं है। पानी बाहर से लो, फिर महामो। 'नीर' तो मगधूम शाह का है, उसे मापाक करनेवाला जल जाता है।

लोग 'नीर' का पानी पीते, अपने-अपने भूल में घेनते और गन्ना तथा लाची-दाना की मिन्न लेकर अपने-अपने घरों को वापस सौट जाते।

अलीमुन ने तो एक ही बार जाकर कान पकड़ लिये कि अब नहीं जाना है भूत हाड़वाने, लेकिन आमिना को वह मना नहीं कर सकी। रेहाना की तकलीफ़ देखी भी तो नहीं जाती।

बहु काफी देर तक रेहाना के पास बैठी रही, फिर सौट आयी। पर आकर देखा कि चौकी पर कमरन बैठी हुई है और उसका इन्तज़ार कर रही है। एकवाक़ रुक पना गया है।

अलीमुन घिस उठी, लेकिन कमरन का उतरा हुआ चेहरा देखकर अगले क्षण ही वह बुझ गयी।

कमरन ने रो-रोकर अलीमुन को बताया कि उसे सतीफ़ की और बच्चों की बहुत याद आती है। मैंके में उसका मन नहीं लगता। रह-रहकर अपना घर उसकी आँखों में साफ़ उठता है।

फिर उताने वह इच्छा जाहिर की कि सतीफ़ अगर उसे रखने के लिए तैयार हो तो वह इसी वज़न उस घर में घसी जायेगी। लेकिन अलीमुन ने उसे समझाया कि ऐसा सोचना अब बेकार है। बगैर 'हसाना' के सतीफ़ के साथ वह नहीं रह सकती। पहले किसी में समझा निगाह हो, वह कम-से-कम एक रान उम आदमी के साथ बीबी की तरह रहे और फिर वह आदमी उसे तलाक़ दे दे, तभी वह दुबारा निगाह पड़कर सतीफ़ के साथ बीबी बनकर रह सकती है—बरना नहीं! तलाक़ का नानुन ऐसा-बैसा पड़े है!

कमरन का दिस बैठ गया। इतनी जमानत के लिए धुद को तैयार करना

उनके लिए मुमकिन नहीं था।

लेकिन अलीमुन ने जब यह बताया कि सतीफ भी अब पछता रहा है और वह भी ऐसा ही कुछ सोच रहा है तो कमरन का दिल तेज-तेज धड़कने लगा। वह फिर रोने लगी।

अलीमुन ने उसे सान्त्वना दी और चूली-दुआर के पास से उसके बच्चों को दिया दिया।

अदतरनिया बर्तन माँज रही थी। कुदूस अपनी बहिनी के पास गुमसुम बैठा हुआ था और गुदवा खाली एक मैली-सी बुजट पहने नाक बहाये खड़ा था। छोटी नदकी तहरनिया धुले हुए बर्तन उठा-उठाकर भीतर रख रही थी। कमरन का दिन भर आया। उसके जो में आया कि अदतरनिया को पुकारे और पूछे कि अदवा का क्या हाल है? भइया क्या कर रहा है? लेकिन हिम्मत नहीं हुई और वह बुक्का फाड़कर रोने लगी।

अलीमुन ने उसे मेँभाता और वहीं नगोल¹ पर बैठाकर अपने दुपट्टे से उसके आँगू पोंछने लगी, “न रो कमरन न रो।”

वह समझाती जाती थी और कमरन रोती जाती थी। फिर न जाने क्या हुआ कि अलीमुन भी रोने लगी और उन्हें चुप करानेवाला वहाँ कोई नहीं बचा।

30

पाय के माय बासी रोटी ग्राकर मतीन जैसे ही काम पर जाने के लिए निकला, मागने से आता हुआ अल्लाफ दिगायी पड़ गया। मतीन का जो गुश हो गया। लगता है बाकी पैसे देने के लिए आया है अल्लाफ, लेकिन वह आया था अपने पैसे बापग माँगने। न जाने कब तक यह गुसाइटी-फुसाइटी बनेगी, कोई ठिकाना है? बिल्ला यजह उसके बीस रुपये फँसे हैं। हाजी रसीद का इतना कर्जा चढ़ गया है कि वहाँ से अब कुछ भी मिलना मुश्किल हो गया है। और काम है कि उससे होता नहीं।

मतीन ने अल्लाफ को नीचेवाली कोठरी में थोड़ी देर तक बैठाया, एक लड़के से पान मँगवाकर मिलाया और समझाया कि उसे ऐसा नहीं करना चाहिए। पैसे

बड़ी धीर नहीं है, बड़ी धीर है एक मजहद । इस मजहद के माप उस जैसे अनेक
 छोटी पुमारों का भविष्य जुड़ा हुआ है । और अगर सोमायटी बन गयी तो यह दिन
 जल्दी ही आयेगा जब हर अंतारी भाई के पास अपना करघा होगा, अपना बतान
 होगा और बिग्री भी गिरना का उस पर आगन नहीं होगा । एक गरीब मुनकर के
 मान का भी तब एकपोट हो गयेगा ।

अन्नाफ को मनीन की बातें कुछ-कुछ समझ में आयी और वह बिना कुछ सोचे
 ही उठकर पसने लगा, तब मनीन ने उससे आहिस्ता से कहा कि बाक्री पैसों का
 इन्जाम भी वह जल्दी से कर दे, ताकि इस मेक काम में देरी न हो ।

अन्नाफ चला गया ।

मनीन भी बाहर निकला, लेकिन आज पहली बार ऐसा हुआ कि उसकी
 दृष्टि काम पर जाने की नहीं हुई और वह रऊफ चपा के घर की ओर चल पड़ा ।

गलियों में टार की तानियाँ फैली हुई थी और लोग उनके घाघों को गुलझाने में
 व्यस्त थे । सनीफ भी अपने सड़के गरीफ को लेकर एक गली में तानी गुलझा रहा
 था ।

गलियों में, बाग़सानों में और हर घाली जगह में तानियाँ-ही-तानियाँ मजदूर
 आ रही थी । घागे-ही-घागे, लोग-ही-लोग । ऐसा लगता था जैसे हर मुनकर एक
 उमसा हुआ ताना बनकर रह गया है ।

मनीन उन गलियों को पार करता हुआ जब रऊफ चपा के घर के सामने
 पहुँचा तो थोड़ी दूर से ही उसने देखा, मनीन पर खड़ी नजबुनिया किमी बात पर
 हँस रही थी । उसने मफेंद रंग का इजार पहन रखा था और गुलाबी रंग की
 पेशानी । चेहरे पर एक अजीब-सी अलहदाता नाच रही थी ।

मनीन का दिग धड़-धड़ धड़कने लगा ।

'ई रऊफ चपा की पिटीया के का हो गोवा है जो द हमें देख के एसार के
 हँगेगी ।' उसने मन-ही-मन सोचा और उसकी आँखों के सामने धून की उट्टी
 बरगी हुई अलीमुन का चेहरा नाच गया ।

वह काँप उठा । कहीं ऐसा तो नहीं है कि रोगग्रस्त अलीमुन से उसका युवा
 मन लुप्त नहीं हो पा रहा है और इसलिए वह नजबुनिया की ओर आकर्षित हो
 रहा है ? उसने थोड़ी देर तक इस सवाल पर विचार किया, फिर एक दूगरा सवाल
 उसके दिमाग में उभरा कि क्या उस जैसे एक सड़के के बाप की ओर नजबुनिया
 जैसी कोई सड़की भी आकर्षित हो सकती है ? और दोनों ही सवालों में उसे कोई
 तामसेल मजदूर नहीं आया ।

तब शटके में उसने अपने गारे सवासो को परे हटा दिया और रऊफ चपा के

पाग जाकर बैठ गया ।

रऊफ चचा का भी कोई धागा उलझ गया था और वे उस वक़्त उसी को मुनझाने में तल्लीन थे ।

“कहो मतीन, खरियत त है न ? कइसे चलेव ?”

उन्होंने चरमे के भीतर अपनी आँखों को झिलमिलाते हुए और उँगलियों से धागों को गुलझाते हुए उससे पूछा तो उनने अल्ताफवाली घटना सुना दी और साथ ही नारी समस्या को उनके सामने नये सिरे से रखा ।

रऊफ चचा ने चश्मा उतारा, धागों को उसी तरह छोड़ा, आँखें साफ की और बोले, “अब देरी करना ठीक नहीं है । जो कुछ करो जल्दी करो । केतने पइसा की कमी है ?”

मतीन ने उनके सामने सारी स्थिति स्पष्ट की तो वे फौरन छड़े हो गये और मतीन से बोले कि तुम अपना काम देगो, इसका जिम्मा मेरे ऊपर ।

मतीन भी खड़ा हो गया ।

तभी सीढ़ियों पर आहट हुई और उसने देखा, नजबुनिया खड़ी है ।

“अब्बा, मतीन भइया के अम्मां बुलावे तो ।”

उसने धीरे-से यह सूचना दी और उछलती हुई-सी ऊपर चली गयी । मतीन भी धीरे-धीरे सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर चला गया ।

वहाँ वह देर तक नजबुनिया की अम्मां के पास बैठा रहा और उस पूरे समय तक वे उससे अलीमुन की हालत के बारे में पूछती रही । नजबुनिया चूली-दुआर में व्यस्त रही, लेकिन कनकरी से वह बार-बार इधर देख लेती थी ।

मतीन की उच्छा हुई कि वह नजबुनिया की अम्मां से बात चलावे, कि अब वह दूसरी शादी करने का विचार कर रहा है, क्योंकि अलीमुन से अब काम-धाम होता नहीं, उमे बढ़ी तकलीफ होती है और उसे खुद भी काफ़ी दिक्कत हो रही है । लेकिन ऐसा सोचते वक़्त वह बुरी तरह डर गया और ग़ामोश रहा ।

“अरे नजबुनिया चा-चा लियावेती के नाहीं ?” नजबुनिया की अम्मां वही से गिल्लायी तो नजबुनिया मतीन की ओर देखकर फिर हँस पड़ी और घोड़ी ही देर बाद वह काँच के एक गिलास में चाय लेकर हाज़िर हो गयी । एक हाथ से अपना दुपट्टा ठीक करते हुए उसने चाय का गिलास मतीन के पास रखा और फिर चूली-दुआर में जाकर बैठ गयी ।

मतीन का दिन फिर धड़-धड़ धड़कने लगा ।

बस ईद है। हालाँकि चाँद नहीं दिखायी पड़ा है, पर गरियों के चार सुतलों ने गवाही दी है कि ऊपरोंने अपनी भाँपों में तार के पेड़ों के ऊपर ईद का चाँद देखा है और सुतलों अस्तुन खड़ाब अंगारी ने एतान कर दिया है कि बस ईद मनायी जायेगी, लेकिन गरियों बादशाहानों की ईद परमों होगी। वे इस ऐतान को समान मान रहे हैं, क्योंकि जब चाँद दिखायी ही नहीं पड़ा तो ईद कौन ? रेहियों में भी कोई गबर नहीं है। अरे पाकिस्तान में चाँद हो जाता तो भी एक बात थी, लेकिन बड़ी में कोई एतान नहीं है। पर ज्यादातर लोग सुतली माहब के ऐतान को गरी मान रहे हैं। हदीस में यह साफ आया है कि अगर मन्न (बादल) हो या और किसी बरत में गरी चाँद न दिखायी पड़े और लो ममाबी परहेजदार लोग चाँद देखने की गवाही दें तो चाँद मान लिया जायेगा। और यहाँ चार-चार लोगों ने गवाही दी है, इसलिए एतान को न मानने का गवाह ही नहीं उठता।

और ईद की अहम-महम शुरू हो गयी है। गोमबादों और बिबियों की दूबानों में गोजन खींचनेवालों की भीड़ लग गयी है। बस तो कोई दूबान खुलेगी नहीं। जो कुछ खरीदना है, बाग में ही खरीद लो। सबसे ज्यादा भीड़ गोमबादों में है। उधर अमर्दुर का और उधर अछोदरी का गोमबाद अंगारी भाद्यों से भरा हुआ है। लोग सुगी का टोंका उठाये, टोंगियाँ मगाये, होमा निया भीड़ में खड़े हैं और बगाद्यों में हाफ रहे हैं। बिगी को दो बिनी चाहिए, बिगी को पाँच बिनी और बिगी को आठ बिनी। बिगी को माप में बनेबी भी चाहिए और बिगी को बट। भोग का एक-एक हिस्सा आज महत्वपूर्ण हो गया है।

उधर दाममन्ही के इतनी भीड़ है कि न सादबिल जा सकती है न रिक्शा। और घाते के गामनेपाँडे मेठ मुसजारीमान ने बाहर के सम्मान्य मुसलमानों को आज भागिगी रोखे की अण्णारी भी बरामी है। और मगरिब के बाद में ही भीड़ बढ़ती जाती गयी है।

दाममन्ही आज शरातपर की गरह मन्ही हुई है। इस मन्ही में दाम बभी गरी बिबो, ली रूप का ब्याहार जरूर हुआ था किसी जमाने में। अब तो मुसलमानों का घर बहूत बढ़ा बाजार हो गया है।

और तो जेमे ही अन्दर घुमिए, मन्ही हुई दूबानों में जाँचें खुँधिया उठनी हैं। ज्यादातर भीड़ सुगियों की दूबानों पर है। मारे अमारी भाई अरने लिए और अरने बन्धों के लिए सुगियाँ खरीद रहे हैं। कुछ पड़े-मिये मन्कों ने पानू फेरन के अनुसार पहने में ही बेसबाटम मिया रखे हैं। अब तो बेसबाटम पहनकर भी ममात्र पड़ी जा सकती है, मोनबियों ने इसे आपज कर दिया है। पर सुदियों की

ग्रस्त फिर भी ज्यादा है।

लुगियों की दूकानों के बाद वह भीड़ टोपियों की ओर बढ़ती है, फिर जूतों-चप्पलों की ओर। दालमण्डी की सेंकरी सड़क के किनारे-किनारे जूतों-चप्पलों की तो जैसे हमारलें खड़ी हो गयी हैं।

कुछ लोग हमाल, गंडी (बनियान) और मौजे खरीदने में भी व्यस्त थे और कुछ लोग दूध और सैण्ट की दूकानों में खड़े होकर एक-एक इत्र को उंगलियों के ऊपर रगड़कर उनका परीक्षण कर रहे हैं।

"उ का है म्यां ? उस ! उस एत्तर के होते म्यां ?"

लोग एक-दूसरे से पूछते हैं और कुछ लोग इस चक्कर में न पकड़कर यह तय करते हैं कि पीली कोठी पर चलकर तेल की दूकान से 'इत्रे मजमूआ' खरीद लें, छुट्टी।

और फिर लोग भैंस के कीमे की पकौड़ियां खाने में जुट जाते हैं।

वहाँ से निकलते हैं तो घोवा गली की ओर रुख करते हैं।

"घोवा बहुत महंगा हो गोवा है म्यां, बीस रुपिया किलो !"

कोई रास्ते में सूचना देता है तो भीड़ की चाल में और तेजी आ जाती है। वहीं और न महंगा हो जाय, वरना सब मजा फिरकिया हो जायेगा। सेवई में अगर मन-माफिक घोवा न पड़ा तो किस काम का ? फिर किमामी सेवई का मतलब ही क्या रहा ?

कुछ लोग घोवा खरीदने के बाद फिर दालमण्डी में घुस जाते हैं। सेवई की प्यालियां तो गरीबी ही नहीं गयी। पिछले सातवाली तो टूट-फूट गयी। कुछ लोग पूरा-का-पूरा गेट ही खरीद लेना चाहते हैं, पर इतने पैसे ही नहीं हैं।

मतीन एक प्राकरी की दूकान के सामने खड़ा हो जाता है। दूकानदार ने कुछ रिजर्वेट प्यालियां सड़क पर रखवा दी हैं और एक लड़का उन्हें सस्ते दामों में बेच रहा है। किसी प्याली के फूल सड़ गये हैं तो किसी प्याली का बांडर थोड़ा टूट गया है। कोई प्याली पूरी-की-पूरी चटक गयी है, पर फूटी नहीं है और कोई प्याली टेढ़ी हो गयी है। मतीन उनमें से चार प्यालियां छांट लेता है और अगल-बगल देखकर कि कोई उन्हें देय तो नहीं रहा है, उन्हें अपने झोले में डाल लेता है। फिर दस्त से पैसे देकर वहाँ से गायब हो जाता है।

राजी अमीरुल्ला ने उसे अगता देने से इनकार कर दिया है और वह मन मार-कर रह गया है। अलीमुन के लिए उसने एक सूती धोती अलघिदा' वाले दिन ही खरीद दी है और अपने लिए एक लुंगी ले ली है। कमीज पुरानी ही धल जायेगी। एकबान ने लुंगी पहनने से इनकार कर दिया, इसलिए उसके वास्ते पैजामा बना है

1. रमजान का आगिरी जुमा।

मल्लानुग के पान बनना पड़ाव डाला—उनीलिए वहाँ जो मुहल्ला बसा उसे औरंगाबाद कहते हैं—और रातों-रात मन्दिर तुड़वाकर उसकी जगह मस्जिद बनवा दी गयी। ज्ञानचन्द और उसकी बेटी बापी का ताल्लुक होने की वजह से ही यह मस्जिद ज्ञानवापी की मस्जिद बोली जाती है।”

कहा जाता है कि मन्दिर जब टूट गया और उसकी जगह मस्जिद तैयार हो गयी तो बनारस के किमी फारसी दाँ ब्राह्मण ने एक शेर कहा :

बर्बाद करामते बुतखान ए मरा ऐ शाह !

गरने गुराव नवद खान ए गुदा गरदद !

यानी, ऐ बादशाह ! मेरे बुतखाने का चमत्कार तो देखो कि यह अगर टूटता है तो गुदा का घर हो जाता है।

रक्त चना के पास इस तरह के बहुत सारे किस्से हैं, जिन्हें वे वक़्तन-व-वक़्तन गुनाया करते हैं।

नमाज पढ़ने के बाद मतीन सीधे घर लौटा और रोबई ग्राकर मुहल्ले में निकल गया। अलीमुन भी इकबाल को लेकर नजबुनिया से मिलने चली गयी। आज उसे कमगन की बहुत याद आयी और लतीफ के बच्चों को बुलाकर उसने उन्हें त्योहारी के चार-चार आने दिये। रात को लतीफ और मतीन ने एक साथ खाना खाया। खाने के बाद लतीफ ने दबी जवान से यह इच्छा प्रकट की कि वह दूसरी शादी करना चाहता है। मतीन ने आश्वासन दिया कि इस बारे में यह विचार करेगा और पान थिलाकर उसे विदा किया।

लतीफ जब चला गया तो मतीन देर तक सोचता रहा कि आग्रिइर इसकी वह अकड़ कहाँ चली गयी, जो कुछ साल पहले उसमें मौजूद थी। इसके पास अपना करणा है, अपना रोजगार है, लड़का भी माशा अल्लाह काम से लग गया है, लेकिन उसे कौन-सी कमी है कि यह भीतर से टूटता चला जा रहा है? लगता है, औरत के बग़ैर यह आदमी आधा ग़त्म हो चुका है। बिन घरनी घर भूत का डेरा।

और मतीन ईद के दिन भी हल्का-सा उदास हो गया।

32

कई दिनों की छुट्टी के बाद अंनारी स्कूल आज खुला है, लेकिन पढ़ाई-बढ़ाई नहीं हो रही है। आज मन नग़मा है।

मंगारी शुक्ल में ईद की मासकी छुट्टियाँ होती हैं। ईद में लेकर छोटी ईद तक। छोटी ईद, ईद के मासके दिन पड़ती है। इस दिन महुवाबोज में लोग तीयब माह बनासमी का जलें होता है और मेवा मयता है। इस मेले में छुट्टी पाकर ही लोग बास गानु में मरते हैं। इस बीच कुनाई का नाम भी प्रायः नहीं होता। मुरी का गढ़ती है।

अंगारी स्कूल बनारस के बुनकरों का अवेना स्कूल है, जहाँ दर्जा एक में सेकर
इच्छा तक की पढ़ाई होती है। स्कूल सम्बा-धोड़ा मैदान, भस्म इमारत, सामने गुप्त-
मोहर के देह... बनारस के बुनकर बच्चों को तामीम-यात्रा बनाने के लिए यह
स्कूल अपनी पूरी ताकत से मानो जुटा हुआ है, लेकिन सड़के हैं कि पढ़ना ही नहीं
पाठ्ये !

दश बरन भंडन मे दबका-दुबका मड़के गेन रहे हैं, बाक़ी भाग गये हैं। कुछ लोग घर और कुछ लोग यमुना टाकीड़। स्कूल के कई मास्टर बाप पीने गये हुए हैं। विभिन्न ग़ातब आगिज मे हों। चाप भेंगा मिया करते हैं। इस बरन वे चाप के माथ गरम-गरम गमोगा ग्या रहे हैं और गामने बँटें हुए मास्टरों मे बतिया रहे हैं। चाप और गर्मोगा दन मास्टरों के भागे भी मौजूद है। जहाँ किसी प्रबन्धकीय विषय पर हो रही है।

भैरान में आगगास के कुछ लड़के झुगिया पहने, हाथों में डण्डे लिए घूम आये हैं और अपने साथ गज गधे की भी लेते आये हैं। आये-आये गधा दौड़ रहा है और पीछे-पीछे लड़के। कुछ मारटर इस मनोहर दृश्य को बरामदे में खड़े होकर देख रहे हैं और कुछ मोठ आपस में खाक लेकर इमिजा (पेक्षा) करने के लिए पीछे बने चौपालय की ओर चले जा रहे हैं। बघना शायद मायब हो गया है और मिट्टी का देवा बौन जाय हुईने जबकि खाक मौजूद है।

अपानक एक गति है हुए मइवे बो मेकर कुछ सुगीधारी मइवे विविधन भाँसि
मे पहुँचने है और निवायन करते हैं कि हमे दो मइवों मे कुछे तरह स्पेय है ।

‘कदा नाम है सुम्हारा?’

जिगिरन गाढ़ बंडकर पूछने हैं तो सरका हर जगह है लेकिन रंते-जंते बड़
बगना नाम बताया है—

"इहं राम अहं मद अंसारी ।"

"कुम्हारों का क्या नाम है ?"

"बम्बू मनीन मंदारी !"

‘‘ਸੁਮਨੇ ਕਥਾ ਸੁਨੀ ਜੀ ਹੀ ?’’

"कर्मणो यमं भयं तस्मात्कर्मणो भयं न भवेत्" इति श्रुतिः

कृष्टिनः ने लिखित है....”

इकबाल आँख मलते-मलते बताता है तो वहाँ उपस्थित सभी मास्टर हँस पड़ते हैं और उसे यह कहकर भगा दिया जाता है कि कल उन लड़कों को सजा दी जायेगी।

इकबाल रोना-रोता घर चला जाता है। अलीमुन उसका मुँह घुलाती है। ईद की बची हुई मेकअप देती है और अंनारी स्कूल को चन्द गालियाँ देकर लेट रहती है।

33

‘सलामाने कुम !’

“वानेकुम मलाम ! खरियत त है न ?”

हनीफ ने लतीफ के सलाम का उत्तर देने के साथ-साथ उसकी खरियत भी पूछी तो लतीफ को झुरझुरी चढ़ गयी। मन की बात इससे कहे या नहीं, बस यही सोचना हुआ वह क्षण-भर खड़ा रहा कि हनीफ ने दूसरी गोली दाग दी, “का ऊ मतिलवा के चबत्तर में पड़े हो म्याँ ?”

और फिर लगा अपनी तरबूकी का बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन करने। बीच-बीच में हाजी अमीरुल्ला नाह्य की तारीफ भी हाँकि जा रहा था।

लतीफ के कदम थोड़ी देर के लिए डगमगाये और वह सोचने लगा कि अपनी तरबूकी का कोई उपाय क्यों न पूछ ले इससे, लेकिन फिर वह संभल गया। इसकी तरबू वह नकली साड़ी को असली बनाकर नहीं बेच सकता।

हनीफवा के बारे में यह मजहूर हो गया था कि यह नकली कतान लगाता है और गोलघर में घूम रहे कम पैनेवाले विदेशियों—विशेषकर हिप्पियों—को फँसाकर दुग्ने दामों में उन्हें बेच दिया करता था। हिप्पी इन साड़ियों को बाहर भेज दिया करते थे। इस काम में वह रामभजन दलाल की मदद भी लिया करता था। जो अगली काम की साड़ियाँ होती थी वे हाजी अमीरुल्ला की कोठी में जाती थी यहाँ में छंट्टी हुई साड़ियाँ बाहर चली जाती थी। इस तरह ‘घनारसी साड़ी’ को बदनाम करने में हनीफवा-जैसे लोग अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे थे।

1. कलम, फाउण्टेन पेन।

सतीत भी दराब में भी यह काम नहीं कर सकता। अरे, बाबा देठ ग्रावे में पर बैसानी नहीं बनेगे। मुदा के आगे मुँह दिखाना है कि नहीं?

उसने हनिरबा की बागो का हँ-हँ में जबाब दिया और बनराने मगा। तबिन बँगे बनरा मगगा या भमा? उसकी भगत में जो गाड़ीवाली देखी दबी थी, वह उसे परेशान बिसे जा रही थी। हनिरबा भी उसकी परेशानी को समझता था। सतीत की मरद दामो में गाड़ी बैसनी थी। छोटेबाँरे लड़के की लड़कीपन कई दिनों में गराब चल रही है। दवा के लिए पैसे नहीं है। बार-बार बच्ची का खर्च और लेगी महंगाई। अटलनिया भी अब बड़ी हो रही है। महमा मोचने-मोचने वह रक गया। अभी उसे दूगरी खादी बननी है। अटलनिया बड़ी हो रही है, मोचने ही वह मुद को बूझा महगूम करने लगता है। गरिष्ठा की लम्बाई देख-देखकर उसे कोलुन होने लगती है। अउने लड़के में पढ़ने हुए बागों के कारण उसने आदना देखना बन्द कर दिया है।

“सहिया बैसि हो?”

हनीक ने लजाम बिधा गो सतीत चीक पड़ा। बैसनी तो है ही गाड़ी। बह्रा बाजार में एक हुरा बाद पैसा मिलेगा। अगर हनिरबा लकड़ी देकर गरीब से तो भच्छा ही है।

और ताही उगने बैस दी। मोच रहा था वह कुछ ज्यादा ही दाम देगा, पर ऐसा नहीं हुआ। यह भी कमगहन की तरह ही बेरहम और निक्सा। तीन गो निजामकर हसेनी पर रक दिसे।

गोमपर में भीड़ बढ़ी। हो जा रही थी। रामभजन आज दिगायी नहीं पढ़ रहा था। ‘गरे’ और ‘भरहाव’ की भाषा में व्यापार चल रहा था। हनिरबा की आँखें रामभजन को बूझ रही थी। भवानक वह पाद की एक छोटी-सी दुकान पर पड़ा हुआ दिगायी पढ़ गया।

“नमस्कार!”

“नमस्कार भइया नमस्कार! कहा, सब टीक हो ना?”

“देही बइसे?”

“वा बगाई भइया, बाजार कहा मरा ही... बाय दिया, ए बच्ची एक ठे पाय अउर दिसे न... अउर मुनावा!”

“ह रकयी पहने।” बहुर हनीक ने सतीत ने गो मगी गाड़ी। रामभजन को दमा दी और फिर पुगुर-पुगुर कुछ बियाने मगा, उंगे कुछ पाद दिमाने मगा। रामभजन को छोटी देर बाद गाड़ी बाने ममम में आयी और सब वह गिन उठा।

“हम त तोहसे पहल वै कहले रह ली।” कहकर उसने मुंह का पान दूका और सड़के में चाय का पुरवा लेकर पीने लगा। हनीफ ने भी चाय ले ली।

लेकिन तभी कोई ग्राहक दिग्यायी पड़ गया और रामभजन नाली में पुरवा फेंककर दौड़ पड़ा। हनीफ चाय पीता चढ़ा रहा।

34

नजबुनिया नकाब डालकर बाहर निकल जाती है।

दरअस्त आज उसका जी घर में लग ही नहीं रहा है। सुबह कतान फेरने बैठी तो बार-बार कतान उलझने लगा और घाना पकाने गयी तो चीनी मिट्टी का एक प्याला तोड़ बैठी। अम्मा बुघार से उठी हैं, इसलिए चिड़चिड़ी हो गयी हैं। उन्होंने इस पर उसे कुछ डांट-डपट दिया तो वह उदास हो गयी। उदास होने पर न जाने क्यों उसे मतीन की याद आयी। उसका उदास चेहरा, उदास चेहरे पर जाड़े की धूप की तरह फैली हुई हँसी और उसके उलझे हुए बाल। एकवारगी उसका जी गनगना गया।

हल्की-हल्की सर्दों शुरू हो गयी है और धूप अब अच्छी लगने लगी है। छतों पर जुलाहिने कतान ले-लेकर बैठ गयी हैं और चारों ओर एक अजीब-सी चहल-पहल शुरू हो गयी है। लोगों ने अपने स्वेटर निकाल लिये हैं। औरतों ने शाल ओढ़ना शुरू कर दिया है। नादान लड़कियाँ ऊन-सलाई ले-लेकर बुनाई सीखने के लिए ट्रेण्ड लड़कियों की तलाश में निकल पड़ी हैं।

नजबुनिया ने अपनी अम्मा से बहाना किया कि भउजी के यहाँ जायेगी, लेकिन न जाने क्यों यहाँ जाने की इच्छा नहीं हुई। हालाँकि बावजूद इसके कि हनीफका यहाँ नहीं आता, नजबुनिया कभी-कभार उसके घर चली जाती है और इसके लिए उसे मना नहीं किया जाता। तो भी आज यहाँ जाने का मन नहीं हुआ। फिर उसने सोचा कि अलीमुन का हात ले आये, लेकिन अलीमुन के बारे में सोचते ही मतीन की जगन सामने आ गयी और वह एक अजीब-से अपराध-बोध में डूबने-उतराने लगी।

घोड़ी देर तक नजबुनिया यूँ ही निरुद्देश्य-सी चलती रही, फिर अचानक उसे याद आया कि रेहनवा में मिले बहुत दिन हो गये, पता नहीं उसका क्या हाल है? और बट बगौर के घर में घुस गयी।

रेहना उस वक्त मर्दान पर अपनी आँखों का ज़बरन गिर रही थी और परोस की एक महरवी को साराई में उन चँगाता गिरा रही थी।

उस महरवी को देखकर भरा बौन करेगा कि इसे भुन सदा है? गिराई घर कर में, बड़ाई हमें करा सो, बुनाई घर गिरा दे, आशिय जिस बात की बसी है हमें? क्या मुसमुस बनी रहनी है और बानी-बानी हनुषारी है, मरी न! मेकित देगा बनी होना है? हमें क्या में बर बौन-नी पस है, जिसे सोम मरी ममता पा रहे है?

मखनुनिया मेरी के साथ घर सब मोच मरी और रेहनबा के सामने पहुँचकर मकराह कमठकर मरी हो मरी।

“मर्दानां कूम !”

“बांरकुम मन्तम ! आबा बडो !”

रेहना मुकबानी। उन-मर्दानां बानी महरवी को हमें भगा दिया और मर्दान की एक ओर मरणा दिया।

मखनुनिया बँट मरी और मर्दानां आँख के अनुसार जिसगिनारर सोमने मरी, “अरे रेहनबा मनिबो मे हमें बौननी भी मरी अउर एकरी दिन तो ते हमरे घर मरी बपनी।”

“बा रे ते सो अइसा कहें तो कि मनेने तोरी सोमन औरमन है हम !”

और रेहना मर्दानां आँखें झुका लेगी है।

मखनुन की रेहना की उठागी अछी मरी मरी और घर मर्दानां घर बदम देनी है, “मरी हो हम ई सोहे मरी सा। हमरा बहे का ममन इ कि बम्बो-बम्बो परबा आबा कर !”

“देख हम का बडावे, पूरमन मियवे मरी बम्बो। मार गिरे-बनावे के रहेने अउर पडावे-ओडावे के भी रहेने, मरी मे पूरमन मरी मियनी...तोरी मर्दानां की का नाम है?”

“टीर है, अब मने की हो मदन है। सोयार मन्म हो सोबा है।”

“मोरी पूरी बडी बडिनी है, मरी मे मने रही मे?”

रेहना की इस टिप्पणी पर मखनुनिया मकरा मरी। बोली, “मक, बडिनी मरी है? मक बोली सोम तो। हमरी निहाली मक मे?”

“बा हो, हम मोरी निहाली मे बा? हमें बडी अछी मरी मे हो मे हम मरी !”

तभी रेहना की आँखें बडी जाबिज हो मरी और दोनों महरिनी धुन हो मरी।

वे दोरी देर तक मखनुन की आँखों का हान-धान घुछी रही, फिर बनी मरी। तब दोनों महरिनी में मुसुब-मुसुब बाने होने मरी। रेहना ने बहुत दुर के

साथ अपनी सखी को बताया कि घरवाले उसका ब्याह लतीफ से करनेवाले हैं। और इसना कहकर वह धीरे-धीरे मुबकने लगी।

35

शरफुद्दीन आज यूनिवर्सिटी नहीं गया है। स्टूडेंट्स यूनियन ने एडमोशन के मामले को लेकर कल बी. सी. के बंगले पर प्रदर्शन किया था और कैम्पस का माहौल तनावपूर्ण हो गया था।

पहले शरफुद्दीन भी यूनियन के कार्यक्रमों में हिस्सा लिया करता था। एक बार एनेकगन भी लड़ चुका है, लेकिन जब से उसे 'बुनकर बहवूदी फण्ड' से 500/- का बजीफा मिला है, कुछ दिनों के लिए अपनी नेतागिरी उसने त्यागित कर दी है। यह बजीफा धैसे तो गरीब बुनकर विद्यार्थियों के लिए है, पर जब उसे मिल ही गया तो इसकी लाज सां रखनी ही होगी।

यह इस वक़्त गद्दी पर बैठा है और हाजी बलीउल्ला के यहाँ फोन कर रहा है। फोन उधर से कोई लड़की उठाती है तो शरफुद्दीन को लगता है कि यह वही लड़की है जिसके साथ उसकी शादी होनेवाली है और वह हँस-हँसकर कुछ पूछने लगता है, लेकिन जल्दी ही उधर से फोन रद्द दिया जाता है और वह खिझला उठता है।

गिस्लाहट में ही उठकर वह कारीगरों के बीच आता है और एक कारीगर को बुरी तरह डाँटने लगता है।

मतीन के हाथ रुक जाते हैं। वह शरफुद्दीन को जलती हुई आँखों से देखता है और थोड़ी देर तक चुपचाप बैठा रहता है।

ऊपर पत्ता है, जिस पर साड़ी का नक़्का बना है, नीचे करघा है, करघे पर छरकी है। दरकी इस वक़्त रुकी पड़ी है। वह मतीन के इन्तज़ार में है।

मतीन तिर उठाकर एक द्वार पत्ते को देखता है, फिर अघबनी साड़ी पर 'फू' (मुँह से पानी का फुहार) देकर उठ जाता है। उसकी इच्छा होती है कि थोड़ा बाहर घूम आवे।

हाजी अमीरुल्ला रफ़माया गये हैं। कह रहे थे, बैंक में कुछ काम है। शरफुद्दीन

जानता है कि क्या काम है, इसीलिए वह बेपर्वाई के साथ उनका इन्तज़ार कर रहा है।

हाथी मिनिस्टर अभी बगीचे में गहरी सोते हैं। हथीकुम्भार मदनपुरा में है। आश्रम मदनपुरा में बहुत जाने लगे हैं। वहाँ कोई दखान हा है, उसी में बिजनेस की मेजर कोई महामुखी काम कर रही है। दखान हा अपने फाटनेर हाथी बुनर के साथ मिगजर पीस का कोई आर्डर देनेवाले है। उसने बाऊ इन्सा और हाथी खमार भी मागिग होनेवाले है। हथीकुम्भार थाहा है कि उनका भी कोई मेजर हो जाये।

मदनपुरा के हाथियों के नाम भी विविध हैं। हाथी कपूर, हाथी अमरीका, हाथी नावा, हाथी कदरमान, हाथी लक्ष्म, हाथी लुट्टे आदि। इनके अलावा कुछ बिनिष्ट लोगों के नाम भी विविध हैं, जैसे इन्साफ मन्त्री, बाने कुटुम्भ, मनीबोग, बन्धुम जनता, जतागुहीन बेल, मूखुर पेंच, मल्लू मीठा, उगमान मोदाम आदि।

मदनपुरा की देगा-देगी इधर अलहुम्बालों ने भी कुछ विविध नाम रख दिये हैं। इनमें इरादिस मिर्चा, बाऊ इन्सा और रहमपुरा बेबड़ा के नाम मशहूर हैं।

एक ऐसी भी हाथी माहक है जिन्हीं इन अद्वितीय नामों में बिड़कर सायद अपने लड़कों के नाम इस प्रकार रखे हैं—इनामल्ला, मातामल्ला, अमरमदुगिल्ला आदि।

वे सारे-वे सारे लोग अपने-की ओर लोगों की अनेका बिनिष्ट तथा मौलिक रूप में स्थापित करना चाहते हैं। धन के साथ-साथ वह सनक लोगों में बढ़नी लगी है।

हाथी अमीरुल्ला के खयाल जनाब हमीदुल्ला बनारस के पहले मुनकर हैं, जिन्होंने पहले-पहल एम. ए. किया था—वह भी अंग्रेजी में, इसीलिए उनका नाम भी दोहा बिनिष्ट हो गया—हमीदुल्ला एम। वे वही हमीदुल्ला एम। हैं जो कभी आल इन्दिआ हैरामूम बोर्ड के चेयरमैनवाने खुदाय में एमीलानाद बरनी के बन्धुनिष्ट नेता मजीरम हमन अगारी तक को पराजित कर चुके हैं। ऐसा हाथी अमीरुल्ला और उनके ध्यानदानवालों का दावा है।

मरपूरीन गहरी पर बीटा-बीटा उठ गया था। अब वह उठकर उठर जाने ही वाला था कि हाथी माहक की सुनी हालत उठी ! वह भौंकाकर बैठ गया।

हाथी माहक दोरी देर तक रिक्केवालों की ओर दृष्टिक जास करनवासी बेल-नाटियों की मागिगी देने रहे, फिर उन्होंने मरपूरीन की सूचना दी कि बेबदाता

काम हो जायेगा। साहब से बात हो गयी है।

मतीन अभी तक बाहर से नहीं लौटा था।

करघे पर मतीन को न देखकर हाजी साहब का पारा गर्म हो गया। वे शरफुद्दीन पर बमके—

“उ मतिनवा कहाँ गोवा ?”

“अभइन त रहा...”

“घस येही तरे तू अभइन-अभइन करत रही अउर सब बिजनिशिया चउपट कर दो !”

और मारे गुस्से के हाजी साहब कांपने-से लगे। उन्होंने मतीन के खाली पड़े करघे को एक बार फिर अपनी जलती आँखों से देखा और आगे बढ़कर धम्म-धम्म सीढ़ियाँ चढ़ने लगे।

पीछे-पीछे शरफुद्दीन भी ऊपर चला गया।

मतीन उस वक़्त बाहर खड़ा था। जब यह काण्ड समाप्त हो गया तो वह टहलता हुआ-ता भीतर आया और अपने करघे पर जाकर चुपचाप बैठ गया। जब अन्य कारीगर उसकी ओर देखकर मुस्कराये तो वह भी मुस्करा उठा।

36

गुबह में ही धुन्ध छापी हुई है और चिपिर-चिपिर बारिश हो रही है। सड़कों पर कीचड़ हो गया है और उन पर चलनेवाले लोगों के कपड़े धराब हो रहे हैं। हवा में धूलकी बड़गयी है।

दोपहर को घोड़ी देर के लिए आसमान साफ होता है तो झुण्ड-के-झुण्ड लोग बिनैमरगंज, गोदीलिया और लहुराबीर की ओर निकल पड़ते हैं।

बिनैमरगंज की सच्ची मण्डी में इतना कीचड़ हो गया है कि पाँव धँसने लगे हैं। यह सूचना भोला पानवाला लोगों को देता है और अपनी दूकान पर रस्ते पीतल के पान-स्टैंड की चमकाने में व्यस्त हो जाता है। मतीन की सलाह पर भोला ने पान की दूकान खोल ली है और वह चल निकली है।

बार बजते-बजते बदली फिर छा जाती है और चिपिर-चिपिर फिर शुरू हो जाती है।

समीर बड़ी बजाए गये हैं।

उपर लंगड़ा से लेकर उपर बड़ी बाजार तक सरक बहुत ही शराब हो गयी है। बीयर-ही-बीयर। चाया और बटुदारा। एक जगह बहुत पर में होना गुमा पड़ा है। बिगो का 'गायाना' शराब हो गया है, वह उसे मार गया था है।

बड़ी बाजार के दग छोर पर बिनबारी के सामानों की दुकानें दोनों ओर लगी हुई हैं। बड़ी पाने टेंग हैं तो बड़ी गाँव। बड़ी गिरबियाँ खड़ी हुई हैं तो बड़ी गवाड़े। बड़ी नदी बिज रती है तो बड़ी टरकी। ऐसा लगता है कि गागी-बी-गारी रंग-बिरंगी गाड़ियों का बाग़्याना यही गुमा हुआ है।

आगे गन्नी मन्नी है। दाहिनी ओर मछली बाजार। और आगे घमवर बुनकर मार्केट। जैंग बुनकर बागोनी निर्यंक है, उगी तरफ़ बुनकर मार्केट भी। मेरिन नाम तो है, नाम का होना भी बड़ी मान है।

बड़ी एक बेंब भी है, मेरिन बमोर को बेंब में नहीं बिके। हाथी रहमान में बर्न भेगा है।

रेहनवा की बग़ जाली है।

त्रियों का बग़ा है कि जग़ रेहनवा में पानी में गाना घाया है, इसीलिए हमने बिगाह में बाग़ि हो रही है।

रेहनवा के बारे में लोगों और मज़े भग़ूर हो गया है कि इसे ज़िन्न लगा है, मज़े कोई अच्छा सहवा मिल नहीं रहा था। बमोर बहुत परेमान थे। उम्र बढ़ती जा रही थी। इसी बीच उन्हें मामूम हुआ कि गरीब दूगरी जादी करने के लिए हफ़ाक़ है। और उन्होंने तय किया कि रेहनवा को वे मनीक के साथ ही ब्याह देगे।

पहले तो घर में बड़ा विरोध हुआ कि पाँच बच्चों के बाद, एक अच्छे आदमी के साथ पूरा-जैगी लटकी का ब्याह नहीं किया जा सकता। मेरिन मत्रपूरियो ने उन्हें हमला बमज़ोर कर दिया था कि यह विरोध अधिक देर तक नहीं टिक सका और बान तय हो गयी।

रात गली होने ही बमोर के घर में आम-गहोग की त्रियों की भाँट लग जानी है। उनमें जुगाहिने भी है और दूगरी मुमिम त्रियाँ भी। जादी-ब्याह में आगे-आगे रहनेवासी मगीकुन बुआ के टाट ही नहीं मिल रहे हैं। उन्हें दग बाउ में कोई मेना-देना नहीं है कि जादी बुड़े को हो रही है या खवान की। वे तो बम माहोन को रग़दार बनाना जानती हैं। दग़भम में बहुत दिनों तक इसाहावाद ज़िने के एक

देहात में रह आयी है, इसलिए अपने को 'फारेन रिटर्न' समझती हैं और खासतौर से गाने-बजाने में आगे-आगे रहती हैं।

नसीबुन बुआ चन्द औरतों को लेकर पसाड़ा मारकर बैठ गयी हैं और उनकी रागिनी शुरू हो गयी है—

गुन मोरी अम्मा हो ना रुनखुन होइ गय !

गुन मोरी अम्मा

टीका के ऊपर टोना

हिलाय लय झराय लय फुंकाय लय टोना...

और कुछ औरतें ठट्टा मारकर हँस पड़ती हैं। इस पर नसीबुन बुआ थोड़ा नाराज होती हैं, लेकिन जल्दी ही वे फिर शुरू हो जाती हैं—

बाबुल होसियार खड़े रहियो रे...

बाबुल तेरे नाजों के टीका चाहिए

अउर लुमका के सरंजाम देहो रे

बाबुल...

"तै काहे नाँही गयती रे?" एक औरत नजबुनिया को छोड़ती है तो वह लजा जाती है, लेकिन बार-बार कोंचने पर वह गला साफ करके बिल्कुल नये अन्दाज में एक गीत शुरू करती है—

बन्नी अउर बन्ना की पहली मुलाकात है

क्या मजे की बात है, क्या मजे की बात है

बन्नी कहे हम को टीका बनवा दो

दोनों में शतं लगी क्या मजे की बात है

बन्नी अउर बन्ना की पहली मुलाकात है।

औरतें और लड़कियाँ गीत गाने में मगन हैं। एक औरत ढोलक बजा रही है और एक औरत मुरादाबादी लोटे को अठन्नियों से पीट-पीटकर मंजीरे की धुन निगलाने की कोशिश कर रही है। सभी लोग मीज में हैं। छोटी-छोटी बच्चियाँ अपनी-अपनी अम्माओं या अपनी-अपनी भाभियों से अपने-अपने वालों में अफशा के घेल-बूटे बनवाकर तितलियों की तरह फुदक रही हैं। किशोरियाँ अपनी-अपनी ओढ़नियाँ सँभालती, अपने उभर रहे शरीरों से लापरवाह, एक-दूसरे को धकियाती हुई हिरनियों की तरह उछल रही हैं। बच्चे भीतर से पान झटक-झटक कर खा रहे हैं और घमा-चाँकड़ी मचा रहे हैं। जवानी की दहलीज पर जिनके पाँव अभी हाल ही में पड़े हैं, ऐसे लड़के-लड़कियों को बड़ी प्यासी निगाह से देख रहे हैं और किसी तरह भीतर पहुँचने का बहाना ढूँढ़ रहे हैं। जो इस उद्देश्य में कामयाब हो गये हैं वे अपने को बहुत ही व्यस्त प्रदर्शित कर रहे हैं। कभी भीतर जा रहे हैं, कभी बाहर आ रहे हैं। कभी किसी चाचा या घालू से कुछ पूछ रहे हैं तो कभी किसी चाची या घाला

या रत्नों-रत्नों में डालते जाते हैं। यह पैसा दोनों पक्षों के नाइयों और धोवियों के बीच बाँट में बाँट दिया जाता है।

अभी देलबट्टा हो ही रहा था कि रेहाना के बहनोई 'सिन्नी' लेकर आ पहुँचते हैं। एक किनो मोठा और साथ में पचीस दोस्त ! जोर मच जाता है कि सिन्नीवाले आ गये। और रेहाना के बाप उनकी खातिरदारी में लग जाते हैं। दामाद साहब ने मोठा लेकर उन्हें एक बर्तन बतौर नेग दिया जाता है और सबके आगे पान का ट्रे पेश किया जाता है। सिन्नीवाने पान खाते हैं और हँसी-ठट्टा में मशगूल हो जाते हैं।

फिर अक़द होता है और उसके बाद विदाई।

विदाई से पहले सामनेवाली कोठरी में सरदार-महतो बैठ जाते हैं और दहेज का एक-एक सामान उठाकर लतीफ के चचा इदरीस मियाँ को धमाते जाते हैं—
पाँच कटोरा, दसतीस रुपये नकद, कुरान शरीफ, रेहल, जानभाज, तशरीफी अर्थात् पाँच गज मलमल और ग्यारह बीड़े पान।

फिर लड़की को कुरान पढ़ानेवाली मौलानी की ओर से आता है एक लोटा और साथ में ढाई रुपये नकद।

भीतर विदाई की तैयारी हो रही है।

नसीबुन बुझा गा रही हैं—

काहे को दिया है विदेस रे

अरे लपिया बाबुल मोरे

भइया के दिहे बाबू आपन देहरिया

हमके दिहेउ परदेस रे

एक बन गइली दुसर बन गइली

तिनरे में लागी पियास

मियाना' क परदा उलटि के जो देप ली

न बाबुल न बाबुल के देस रे...

और नसीबुन बुझा रो पड़ती हैं। उनके साथ सारी स्त्रियाँ रोने लगती हैं। नजबुनिया और रेहाना की अम्मां घामोश हैं। वस आँखों से टपर-टपर आँसू जारी हैं।

सबको मालूम है कि रेहाना न कहीं परदेश जा रही है, न विदेश, पर सब जानते हैं कि इनका आज भाग फूट गया है। न जाने किस हुरामी ने इसे क्या कर

1. टोली।

दिया कि बेचारी फूल-जैसी बच्ची पर ज़िन्न का आमेब हो गया, बरना क्या यह सनीफ के ही घर जाती ?

साग्रियों-महेसियों ने रेहाना को दुन्हन बना दिया है। बड़ी-बूढ़ियों ने उसके भाँवस में आछत भर दिया है। सवा रपया, पाँच गाँठ हन्दी, दूब और सवा पाव चावल। पाँच सेर चावल की गठरी असग बँधी रखी है, साथ जायेगी।

दरवाजे पर घटोले की बनी हुई डोली आकर लगती है और रेहाना उममें बँटास दी जाती है। तब उमका छोटा भाई मुनुवा बुसाया जाता है। बड़ी-बूढ़ियाँ उगे कुछ समझानी हैं और वह अपना नन्हा-मा हाथ बढ़ाकर मियाना का पर्दा गिरा देता है। भाई की जिम्मेदारी भी खतम !

डोली चल देती है।

37

अलईपुर स्टेशन। मऊ की ओर में कोई पैसँजर गाड़ी आकर रुकी और एक डिब्बे में अस्ताफ उतरा। सुगी पहने, टोपी लगाये, पान घाये। प्लेटफार्म पर उतरकर वह डिब्बे में से किमी चीज को ज़ार लगाकर खीच रहा था। वह चीज एक मजबूत रस्ती में बँधी हुई थी। थोड़ी देर बाद देखा गया कि उस रस्ती में बँधी हुई तीन मरघिल्ली-गी बकरियाँ प्लेटफार्म पर गिरी और अस्ताफ उन्हें जबर्दस्ती खीचता हुआ स्टेशन के चोर दरवाजे की ओर बढ़ चला, जिधर से प्रायः डब्बू, टी. बाले निकला करते थे।

अस्ताफ उन बकरियों को लेकर सीधे बेनियाबाग की ओर बढ़ चला। इस बग्न अगर हाजी रसीद की निगाह उस पर पड़ जाय तो बगैर गरियाये वे मारने नहीं।

“बिनकारी करते गाँड़ फटती है, अब सँटहियोवाले बने हैं बकरी-बकरा बेचें ?”

बकरीद करीब आ गयी है। अलईपुर और मदनपुरा के इलाके में घटल-गहल काफी बढ़ गयी है। कुर्बानी के लिए जानवरों की खरीददारी शुरू हो गयी है। इधर कच्ची बाग, बड़ी बाजार, छित्तनपुरा और पठानी टोला की तरफ सड़को पर भँतें-ही-भँतें

नजर आ रही हैं। कभी-कभी कोई देहाती बकरी-बकरियों का रेवड़ लिये भी गुजर जाता है। चक़रों पर बँडे हुए लोग उस देहाती को रोकते हैं, जानवर के कान-पंछ देखते हैं कि कहीं कोई त्रुटि तो नहीं है, वरना जरा-सा कटा-फटा होने से कुर्बानी नाजायज़ हो जायगी—बमर को मुट्ठी में भरकर गोश्त का अन्दाजा करते हैं और मोल-भाय करके छोड़ देते हैं।

फिर वे चूल्हें झाड़ते हुए उठते हैं और लुंगी का टोंका उठाकर किसी चायखाने की ओर चल देते हैं।

बक़रों का बहुत बड़ा मार्केट बेनिया बाग में लगता है। शहर में कोई नेता आये तो बेनिया पार्क में ही उसका भाषण होता है—इन्दिरा गांधी यहाँ कई बार भाषण दे चुकी हैं—नरेंद्र आये तो बेनिया पार्क में ही उसका तम्बू गड़ता है और बकरीद के दिनों में यही बेनिया पार्क बक़रों का बहुत बड़ा बाजार बन जाता है। यहाँ का पूरा माहौल ही बकरियाहिन-बकरियाहिन महकने लगता है। सड़कों पर नैड़ियाँ-ही-नैड़ियाँ नजर आती हैं।

बनारस के सबसे बड़े रईस अंसारी जनाव लाट स्वालेह ने इस साल शायद एक बकरा ढाई हजार में खरीदा है। हाजी अमीरुल्ला को यह बात अच्छी नहीं लगी और उन्होंने भी एक बकरा डेढ़ हजार में खरीद लिया। हर साल उनके यहाँ दो भैंसें कुर्बान होती थी, इस साल एक बकरे की भी कुर्बानी होगी। और जब बकरा ही कुर्बान करना है तो तीन-चार तो का क्या करें !

बक़रों की कुर्बानीवाला यह रोग बाहर से आकर बने मिल्कियों पठानों ने ज्यादा लगा दिया है, वरना अंसारी भाइयों को तो भैंस के गोश्त के आगे बटेर का गोश्त भी अच्छा नहीं लगता। लेकिन जब बकरे की कुर्बानी में ही शान है तो बुर-बांदी के हम किसी से पीछे क्यों रहें ?

चाक़ई यह जान ही की बात है कि जब हाजी रगीद ने अपने बेटे को हैदराबाद भेजा पढ़ने को तो हाजी अमीरुल्ला ने भी अपने पोते को हैदराबाद भेज दिया। यही नहीं, उन्होंने जब अपने लड़के के लिए ट्यूशन लगाया तो उन्होंने भी अपने भतीजे के लिए एक मास्टर रंग लिया। मानूम हुआ कि वे अपने मास्टर को पचहत्तर रुपये देते हैं तो उन्होंने अपने मास्टर को अस्सी रुपये देना शुरू किया। हम किसी से पीछे रहने म्याँ ! इस साठ स्वानेह से ही बकरे की खरीद में नहीं बढ़ सके ? निमित्त अल्ला बरक़त कब्बो बढ़ने म्याँ !

हाजी अमीरुल्ला के यहाँ बकरे की कुर्बानी उनकी बूढ़ी माँ के नाम से होगी। ऐन बकरीद के रोज़। दूसरे दिन बड़ीवाली भैंस की कुर्बानी होगी, जिसका आधा हिस्सा रिश्तेदारों को भेजा जायेगा और आधे में से थोड़ा-बहुत खाकर शेष भाग को घृष में मुग़ा लिया जायेगा—भविष्य के लिए। तीसरे दिन पड़वा कटेगा। उस दिन ग़ान-ग़ान रिश्तेदारों को दावन होगी। पड़वे का गोश्त पकेगा और मंसूरी

बाबल का पुसाव । चमड़े सब जायेंगे यतीमघाने में ।

शहर में जितने मदरसे हैं, सबके उस्तादों की द्यूटी लगी है—चमड़ा इकट्ठा करने की । मदनपुरा में एक मदरसा है मज्जीदिया, जिसके सेक्रेटरी हैं डॉक्टर रहम-तुल्ला अंसारी । उन्होंने अपने मदरसे के सभी उस्तादों को अभी से तालीद कर दिया है कि यफरीद के दिनों में उनकी कोई छुट्टी नहीं है, दसवीं को फजिर बाद से लेकर बारहवीं को अंसिर के वक़्त तक जितनी भी कुर्बानियाँ होंगी—उनमें से अधिकांश चमड़े मदरसे में आने चाहिए, बरना सबकी तनहवाह रोक ली जायगी ।

हाज़ी साहब ने अपने सभी कारीगरों से कह रक्खा है कि वे अपने यहाँ का चमड़ा उनके यतीमघाने में ही दें, एक भी चमड़ा कहीं और नहीं जाना चाहिए । रिश्तेदारियों के चमड़े तो आयेंगे ही । कोशिश कर रहे हैं कि इस बार कैंट के चमड़े भी उनके यतीमघाने में ही आयें । चमड़ों में काफी मुनाफा है ।

कैंट की कुर्बानी इस साल सनेमपुरा में भी होगी । अरब में भैंसें तो होती नहीं, वहाँ या तो भेड़ों की कुर्बानी होती है या कैंटों की । सो बिरादरीवालों ने नगर-प्रशासक से अनुमति लेकर शहर में तीन स्थानों पर पहले ही कैंटों की कुर्बानी आरम्भ कर दी थी । इस साल चौथी कुर्बानी की इजाजत भी मिल गयी है ।

इकबाल ईदुल-अजहा की कहानी पढ़ रहा है :

“हज़ुर (हज़रत मुहम्मद) से भी पहले एक पैगम्बर हुए हैं, हज़रत इब्राहीम । उनके एक ही लड़का था—इस्माईल । एक बार उन्हें ब्याब में दिखायी पड़ा कि अस्नाह त आता उनसे उनकी सबसे प्यारी चीज़ की कुर्बानी माँग रहा है । उन्होंने राखेरे अपनी सारी भेड़ें राहे-यूदा पर कुर्बान कर दी, लेकिन दूसरी रात फिर वही द्वाब दिखायी पड़ा और मुबह उन्होंने अपने सारे कैंट कुर्बान कर दिये । लेकिन तीसरी रात फिर उन्हें वही ब्याब दिखायी पड़ा । तब उन्होंने अपने बेटे इस्माईल को बुलाया और कहा—बनो, एक दाबत में बसते हैं । मैं ने उसे नहना-घुलाकर साफ कपड़े पहनाये और वह बाप के साथ बल पड़ा । हज़रत इब्राहीम ने दोनों में रस्सी और छुरी छिया ली ।

“वे अपने बेटे को लेकर उस जगह गये जहाँ जानवर काटे जाते थे । तब बेटे को शक हुआ और उसने पूछा कि अब्बा जान मुझे आप कहीं से आये ? इस पर इब्राहीम ने सही बात बता दी और बेटे से कहा कि तुम यहाँ लेट जाओ, मैं तुम्हें राहे-यूदा पर कुर्बान करूँगा । हज़रत इस्माईल ने फरमाया कि राहे-यूदा पर मेरे-जैसे गो इस्माईल कुर्बान हो जायें तो मुझे कोई डर नहीं, मगर हे अब्बा जान, आप अपनी आँखों में पट्टी तो बाँध लीजिए, बरना ऐन वक़्त पर कहीं आपकी ममता न आ जाय ।

“और जैसे ही हजरत इब्राहीम अपनी आंगों में पट्टी बांधकर घेरे को जिवह करने के लिए तैयार हुए, फरिश्तों ने खुदा के तय्यार का पाया पकड़ लिया और बोले कि या अल्लाह त आना, हजरत इब्राहीम का अब कितना इम्तहान लिया जायगा? और अन्त में एक फरिश्ता फर्श पर उतरा, जिसने इस्माईल की जगह एक दुम्बा लिटा दिया।

“दुम्बे की गर्दन पर जब छुरी चली तो वह बें करके चिल्लाया, जिससे डल्लाकर हजरत इब्राहीम ने अपनी छुरी हवा में उछाल दी। उस छुरी से आसमान पर उड़नेवाली टिट्टियाँ फट गयीं और वह छुरी जब जाकर समन्दर में गिरी तो भारी मछलियों के गनफड़े फट गये। तभी से कुर्वानी फर्ज (अनिवार्य) हुई और तभी से टिट्टियाँ और मछलियाँ हलाल हुई। इन्हें दुवारा हलाल करने की जरूरत नहीं।”

उधर अलीमुन और मतीन इस बात पर विचार कर रहे थे कि इस साल कुर्वानी कैसे होगी? मतीन का विचार था कि कुर्वानी न की जाय, क्योंकि कर्जदार पर कुर्वानी जायज नहीं है, पर अलीमुन अड़ी हुई थी। एकट्ठे तो लड़का है, यह किनका मुँह जोहेगा? मतीन ने लाख समझाया कि इफरात गोश्त मिलेगा—जगह-जगह में हिस्सा आयेगा, लेकिन अलीमुन कुछ भी सुनने को तैयार नहीं हुई। उसने अपना बस्ता ग़ोला और उसमें से चालीस रुपये निकालकर मतीन के सामने रग दिये। उन रुपयों में मुहल्ले में किमी की भैंस में एक हिस्सा ले लो। एक भैंस में अगर सात लोगों तक के शामिल होने की मुविधा न होती तो गरीबों का मजहब कैसे जिन्दा रहता?

मतीन इस सवाल का जवाब नहीं जानता। अलीमुन भी नहीं जानती। दक़्काल भी नहीं जानता।

तनफ़्फ़ा की हालत इस इलाके के सभी निम्नवर्गीय कुनकरों ने अच्छी है, लेकिन उसने कभी कुर्वानी नहीं करायी। इस साल पता नहीं क्या सोचकर उसने भी एक पड़वा मरीद लिया है। कह रहा है, इसमें किसी भी बाहरी आदमी का कोई हिस्सा नहीं होगा। वह अकेले पूरे पड़वे की कुर्वानी करेगा। एक-एक हिस्सा घर के हर सदस्य के नाम और जो कहेगा वह ग़रे हुए दादा-दादी के नाम।

तनफ़्फ़ा के मड़के बिना उसने इस बात का प्रचार पूरे मुहल्ले में कर दिया और अब पन्द्रह-गोना तो गया है और लुंगी पहनकर चबूतरों पर बैठा है।

आज वह हनुमान फाटक की ओर में आ रहा था कि गली में उसे सतीश की सड़की अलारनिया दिखायी पड़ गयी। वह एक सम्बी-भी मुतनी लेकर उसके आर-पार कूद रही थी और आम-भाग छूटे बच्चे घिस-घिसा रहे थे। अलारनिया के बदन पर पीले रंग का गूट गूब पत्र रहा था और जब वह झटके में उछलती थी तो उसकी छोटी-छोटी छातियाँ चिनक-चिनक हिल उठती थीं।

बिराहिम उसके पास पहुँचकर खड़ा हो गया। थोड़ी देर तक वह उसका उछलना देखता रहा, फिर बोला, "एना पारी हमरेव ईहाँ कुम्बानी होद ए। कुम्बानी देगे आद्यों। पढ़वा आवा है।"

और अलारनिया ने उछलना बन्द कर दिया। उसने बिराहिम को मुँह बिड़ाया और भीतर घुस गयी।

38

बदलू ! भयंकर बदलू !

बकरीद बीत गयी है, पर उसकी गन्ध हवा में भिनी हुई है अभी तक। सड़को पर जगह-जगह कूड़ों के ढेर सगे हैं और कूड़ों पर कुर्बान हुई भैंसों की मन-मन-भर साद पड़ी सड़ रही है। कही उनकी मोटी-मोटी अंतड़ियाँ गिज-गिजा रही हैं तो कही फूटी हुई साद में भीतर का सड़ा हुआ भत बाहर निकल आया है। कही किसी पड़वे के घुर पड़े हैं तो कही किसी भैस की निकसी हुई आँखें।

पूरा माहौल गिज-गिजा रहा है।

रेहाना पबरा रही है।

अभी-अभी वह सतीश के छोटे लडके गुट्टू-बा की लेकर बुनकर अस्पताल गयी थी। दवा लेकर आयी है, लेकिन तबीयत संभल नहीं रही है। उल्टी-वर-उल्टी हुई जा रही है। वह रात को मना कर रही थी कि इस मोस्त को मत छाओ, इसमें बदलू आ गयी है। मगर मांगा ही नहीं। अब हासत एकदम पस्त है। घुदा जाने क्या होगा ? सतीश कतान लेने गया है। अभी तक सौटा नहीं।

रेहाना नवाब डाक्टर अपने नइहर खली जाती है, अम्मा को बुलाने। बच्चे को अलारनिया के पास छोड़ देती है। गरिफवा नीचे बिन रहा है। बार-बार कटाने

पर भी ठहर नहीं आया है। रेहाना की बात तो वह मुनता ही नहीं। अम्मा भी नहीं कहता उसे। न जाने क्या बात है कि भीतर-ही-भीतर रार मानता है। यही व्यग्रनिया है जो ठीक ने बोलती-चालती है, लेकिन बस उसका इस पर भी नहीं है। बड़ी घिसंदिन है।

उधर अनीमुन की हालत भी बिगड़ रही है। उसने भी गोश्त खा लिया है। डॉक्टर ने उसे भैंस के गोश्त से परहेज बताया है, लेकिन अपने घर में कुर्बानी हो और उसका गोश्त न खाया जाय, ऐसा भला कभी हो सकता है? गुनाह न होगा! फिर यह भी विश्वास है कि कुर्बानी का गोश्त नुकसान नहीं करता, चाहे जितना खाओ।

लेकिन अनीमुन की हालत रात से हो बिगड़ गयी है।

मतीन झल्लाया हुआ है। इस औरत को लाख समझाओ, मगर कोई बात मानती ही नहीं।

और झल्लाहट में ही उठकर वह रुकफ चचा के घर चला गया है।

एकबलवा स्कूल जाते-जाते रुक गया है। अपनी अम्मा के पास बैठकर वह रो रहा है।

अचानक नतीफ के घर में रोहा-रोवट शुरू हो गयी है। बच्चा मर गया है।

घोड़ी ही देर में वहाँ भीड़ लग जाती है।

नतीफ बापन लौटकर रेहाना पर उगड़ गया है। इसी डाइन ने मेरे बच्चे को मार डाला है। इसके पेट का नहीं है न, इसीलिए! मेरे बच्चों से तो इसे जैसे नफरत हो गयी है। न जाने कहीं मे जिन-जिन्नात लेकर इस घर में चली आयी है।

रेहाना चुप है। आँगों से आँसू बह रहे हैं, पर मुँह चामोश है। केवल उसके पतले-पतले होठ धरधरा रहे हैं।

बाहर नतीफ को लोग समझा रहे हैं। रोने-धोने से अब क्या बचता? एक दिन सबको वही जाना है। कफ़न-दफ़न का इन्तजाम करो।

सभी लोग देखते हैं कि एक ओर मे कमरन छाती पीटती रही है।

मतीन हाजी अमीरुल्ला के करघे पर बैठा हुआ तंछर्द पर एक फून काढ़ रहा है। अभी-अभी ऊररी पयुड़ियों का एक हिस्सा पूरा हुआ है। बगल में उसे एक हरी पत्ती बनानी है। वह सान रंग का धागा छोड़कर हरे रंग का धागा पकड़ लेता है। मतीन की आँखें पस पर अटकी हुई हैं। दरकी तानी पर धामू होने के लिए तैयार जहाज की तरह रंगी है। अगल-बगल के कारीगर घटाघट करघे घना रहे हैं।

अधानक एक सड़का वहीं दोड़ा-दोड़ा आता है और मतीन को सूचना देता है कि रऊफ पचा की तबीयत कुछ गड़बड़ हो गयी है।

मतीन धागा छोड़कर घड़ा हो जाता है।

“कहाँ चलेय?” शरफुद्दीन अत्यन्त सज्ज सहज में उससे गवाश करता है और अपनी कूर आँखें मतीन के चेहरे पर टिका देता है।

“आइते !” जवाब में मतीन सिर्फ इतना ही बोमता है और बाहर निकल जाता है।

साइक सूनी है। सिर्फ इसके-दुक्के लोग ही आ-जा रहे हैं। मतीन तेज-तेज कदम बढ़ाते हुए भागा जा रहा है। उसके पाँव में प्लास्टिक के जो जूते हैं, वे फट गये हैं। एक जूता ऐड़ी की ओर और दूसरा सामने की ओर काफी दूर तक कट-सा गया है। दो बार मोपी ने सिमसा चुका, मगर न जाने कैसा धागा सगाना है कि हफ्ता-भर भी सिमसाई नहीं चलती। जूते में से पाँव उसके निकले जा रहे हैं, मगर उसकी वास धीमी नहीं हो रही है।

वह अपने घर के पास पहुँच गया। वहाँ उसे कुछ शोर-मारावा सुनायी पड़ा। किमी के रोने की आवाज आयी। कौन हो सकता है? कहीं अलीमुन तो इकबलबा को मार-मार नहीं रही है? लेकिन वह तो स्कूल में होगा। उमाही इम्तहान हो रहा है उसका।

“भूतिन ! जिन्नानिन ! निकल हिया में अभी ! निकल !”

तो सतिक्बा है यह ! रेहाना को मार रहा लगता है। रात में भी सड़ाई हो रही थी। घर सटा होने से साफ़ सुनायी पड़ता है। रेहनबा तो एक रोज़ अलीमुन से कह रही थी कि रोज़ सड़ाई होती है। अब वह बहुत पीने लगा है। रोज़ रात में वह झुमता हुआ आता है और अण्ड-बण्ड बकने लगता है। रेहनबा को मोचने-घसोढ़ने लगता है। गामियाँ ऊपर से।

रेहनबा का शरीर झुगता जा रहा है। उसकी हासत खो पहले से भी ज्यादा पुराव हो गयी है। चेहरा एकदम कासा पड़ गया है। उसकी अम्मा हर जुमेरात को उसे बहादुर महीद से जाती है, पर कोई फायदा नहीं हो रहा है। अब लोग

नय दे रहे हैं कि कछोहिं शरीर न जाओ। मगर घर की जब वही हालत रहेगी तो कौनो शरीर न जाओ, क्या होनेवाला है? मतीन की दृष्टि होती है कि जाकर छुड़ा दे रेखा को, लेकिन नतिकवा की बदतमदियों का ख्याल करके दरादा बदल देता है। उसका क्या दिवाना? मतीन को ही कुछ कह दे!

और वह जल्दी-जल्दी आगे बढ़कर रऊफ चचा के द्वार पर खड़ा हो जाता है। कन्पेवासी कोठरी में कोई नहीं है। वह सीढ़ियों की ओर बढ़ता है और दबे पाँव ऊपर चढ़ने लगता है।

उस वक़्त रऊफ चचा अपनी गड़िया पर चुपचाप लेटे हुए थे और नजबुनिया की अम्मा उनके सिरहाने बैठी हुई थी। वे उनके बालों में तेल मत रही थी और नाप-नाप नजबुनिया के बारे में सोचें जा रही थी। जिस रोज़ पीली कांठी के पास कल्लान के किनारे एक मरा हुआ नवजात शिशु देखा गया है, उस रोज़ से नजबुनिया की अम्मा नजबुनिया को लेकर कुछ ज्यादा ही चिन्तित हो गयी हैं। वे कोई भी काम कर रही हों, ध्यान उनका नजबुनिया पर ही रहता है...

नजबुनिया आँगन में बैठी कोंहड़ीरी टालने के लिए उड़द की दाल पीस रही थी।

मतीन को देखकर वह जरा-सा मुस्करायी, फिर लजा गयी। उसने अपना बुझा टीक किया और नाक पर उड़ रही एक लट को कुहनी से हटाने लगी।

मतीन भीतर जाकर रऊफ चचा के पैराने बैठ गया।

"तू आ गए मतीन! देखो हमरा सगा लड़िका हनीफ, बिमारी की खबर पाके भी नहिं आया।" रऊफ चचा बड़ी मुश्किल से इतना बोलें और रोने लगे।

"घबराओ नहीं चचा, हम अभी डाक्टर अंसारी के हिया जाइते।" मतीन ने उन्हें ढाँढ़न बँधायी और धीरे-से उठकर बाहर निकल गया। दस बज रहे हैं। हाँ, अमागी अभी मिल जायेंगे।

40

वक़्तवाद में ही मुहर्रम की तैयारियाँ शुरू हो गयी हैं। उधर कोयला बाज़ार में पाकड़ के तीन 'शहीद बाग' के पास और उधर छित्तनपुरा में इमाम चौक के पास अयाहों के रिहसैन शुरू हो गये हैं। उस तरह के रिहसैन कच्ची बाग, बड़ी बाज़ार और बाकराबाद आदि मुहर्रम में भी शुरू हो चुके हैं।

बनकर दस दिनों तक एक विशेष वेग में सड़कों पर दौड़ते रहते हैं। लुंगी-कमीज के ऊपर गर्दन में बगल से काली-सफेद धारियोंवाली रस्सियाँ फँसाये, नंगे पाँव, दुलकी चाल से चलते हुए वे 'पायट' दूर-दूर का चक्कर लगा आते हैं। इस साल बिराहिम भी निकला है 'पायट' बनकर। उसने आम लड़कों से अलग हटकर अपना बाना बनाया है—सिर पर एक बड़ा-सा सफेद रुमाल काले कपड़े से बाँधकर गुद को सफेदी अरबियन प्रदर्शित करने की कोशिश उसने की है। इमाम साहब से उसकी बस एक मिन्नत है कि लतीफ की बिटिया अब्दुलनिया से उसका विवाह हो जाय।

नवी की शाम से ताजियों की चहल-पहल शुरू हो जाती है। जगह-जगह इमाम चौक पर ताजिये बँठाये जाते हैं और उन्हें देखने के लिए झुण्ड-की-झुण्ड औरतें, लड़कियाँ, लड़के और बूढ़े सड़कों पर निकल पड़ते हैं। रंग-रंग के ताजिये। पहने उधर लत्तापुरा में रंगी का और इधर छित्तनपुरा में लकड़ी का ताजिया ही मगहूर था, लेकिन अब तो कई तरह के ताजिये बनने लगे हैं। एक ताजिया पेवर (प्यार) कागज का बनता है। बाँस-बाँस का नामोनिशान नहीं उसमें। कोयला बाजार में घास का ताजिया मगहूर है। रुई के ताजिये पर कोई मसाला लगाकर तेज़ी से उगनेवाली घास के दाने उस पर चिपका दिये जाते हैं और चन्द दिनों में ही इमाम साहब पर हरी-हरी घास लहराने लगती है।

लेकिन ताजिया ही अगर देखना है तो भाई लँगड़े उमर का देखो। नगीना का ताजिया। इस ताजिये के बारे में कहा जाता है कि इसमें जापान का कोई मसाला लगा है और ईरान की कला। सिफ़्रानग ही बनारस के हैं। लागत ढाई लाख रुपये ! पूरा-का-पूरा ताजिया पत्यर के नगीने से बनाया गया है और इसे अकेले लँगड़े उमर हाफिजों ने कई बरसों में बनाया है। इस ताजिये को विदेशी लोग भा देख चुके हैं और इसकी तारीफ़ कर चुके हैं। इस साल तो 'आज' अखबार में इसका एडवर्टाइज भी निकला है !

नगीना का यह ताजिया पठानी टोला में लँगड़े उमर के बाड़े में नवी की रात को रखा दिया जाता है—एक सजे हुए शामियाने के नीचे। और दसवी के बाद भी तीन दिनों तक लोगों के दर्शनार्थ यह वही रखा रहता है। इस ताजिये को देखने के लिए दूर-दूर के हिन्दू-मुसलमान यहाँ आते हैं और अपनी आँखों को धन्य करते हैं।

यह ताजिया किसी परीलोक के राजमहल-जैसा लगता है। मालूम होता है जैसे जादू का कोई मोहमहल है जिसकी दीवारें, छिड़कियाँ और दरवाजे सब सपनों के बने हैं और भीतर काँच की कन्दीलें जल रही हैं। शामियाने में लटक रहे बल्बों की रोशनी में नगीने का यह ताजिया दिप्-दिप् बरता रहता है और देखनेवाले स्त्री-पुरुष मन्त्रमुग्ध-से खड़े रहते हैं।

संगठे उमर हाजिगी ने यह साबित कर दिया है कि पन बा तात्सुक आरमी के इन घुरदुरे हाफों में ही है, बाहे बहु रेफम बा पन हो या नमीने का ।

नवी की रान ममीदो की रान है । कहने हैं कि दमाम हुसैन को मलीदा बहुत प्रिय था, दमनिए रोड उनवी दादी उन्हें बामी रोटी गुड़ के माघ मलवार धिताया करती थी । सो, यहाँ ग्यात्र के लिए तरल-नरह के मलीदे बनते हैं । मतीन के यहाँ रोटी का मलीदा बना है, हनीफ के घर सूजी-मँदे का और हाजी अभीरस्ता के यहाँ शीरमान का ।

नमीमुन बुआ आज गुबह-गुबह नञनुनिया से मितो, फिर रेहाना, अलीमुन और अन्य कई म्त्रियों के पाम गयी और उन्होंने बताया कि आज रात उनके 'फारेन' बाने देहान में औरनें दाहा गाती हैं । जब ताजिया उठता है तो ये ताजिये के पीछे-पीछे चलती हैं और मर्दों का मरसिया खरम होते ही अपना नौहा शुरू कर देती हैं । लेकिन उनवी बान को बिनी ने मद्दत नहीं दिया, इसलिये वे बाचई समगीन हो गयी हैं और इस वक़्त अपने ही दाहा गुनगुना रही हैं । दर्द में डूबी उनकी आवाज़ सड़क पर चल रहे लोगो के मोर-गराबे से छनकर बाहर आ रही है और आस-पास के बानावरण को एक मीठी-मीठी उदासी में डुबो दे रही है ।

नमीमुन बुआ गा रही हैं—

छिकतै हसन मियाँ त घोड़वा पलानै
बघेइवा पलानै
छिकतै भये हैं अमवार रे हाय
घोड़े का लगाम धरि समझावै ओनकर दादी
समझावै ओनकर अम्मी
दूरि सड़इया मत जायउ हो
दूरि कद सड़इया दादी हम सड़ि अउवै
कतल होइ जावै
सहिद होइ जावै
यहि रे उम्मनिया कद घातिर हो
दूरि कद सड़इया भदया छुरिया चसायो
कटरिया पलायो
थमथम पलै बरछी भसवा रे हाय
दूरि कद सड़इया बहिनी हम सड़ि अउवै
कतल होइ जावै
सहिद होइ जावै

बहि रे उम्मति कइ छातिर हो...

बगीच की बीबी निकली बी नकाब ओढ़कर ताजिया देखने के लिए। यह दर्द भरी आवाज सुनी तो नसीबुन बुआ के घर में घुस गयीं। बुआ उन्हें देखकर चामोश हो गयी, जैसे उनकी एकान्त साधना में किसी ने बाधा डाल दी हो !

“फाट्टे अउर गुनावां बुआ !” बशीर की बीबी ने बुआ से अनुरोध किया तो उन्होंने दुपट्टे से अपनी आँखें पोंछीं और आहिस्ता-आहिस्ता किसी अल्प प्रवाही सरने की तरह फिर गाने लगी—

तू त चलत सइयद रन कइ लड़इया

जंगल कइ लड़इया

सुघरी रनियवा केके सोंपिउ हो

सुघरी रनियवा दादी तोहइ के सोंपव

तोहइ के सोंपव

रनियवा महल भीतर राखेउ रे

तू त चलत सइयद रन कइ लड़इया

जंगल कइ लड़इया

तोहरी मूरत कइसे बिसरे हो

हमरी मुरतिया दादी अठई के देखेय

नवई के देखेय

दसई सहिद होइ जाये रे

जोने हुसन के मैं दुधवा से पालेवें

मलिदवा से पालेवें

उनही क मुरतिया कइसे बिसरे हो...

और नसीबुन बुआ बुक्का फाड़कर रो पड़ीं ! बशीर की बीबी भी सुबकने लगी !

मतीन इकबाल की जंगली पकड़े, घड़ा-घड़ा लेंगड़े उमर का ताजिया देय रहा था कि अचानक एक लड़की ने अपना नकाब उलटा और उसके भीतर पनचक्की-जैसी कोई चीज चलने लगी।

नजबुनिया धुस्करा रही थी। उसके गौरवर्णी गालों पर लाल-पीले नगी की रोशनी पड़ रही थी और ये लाल-पीले गुलाबों की तरह दमक रहे थे। मतीन के पाँव धरकराने लगे। वह इकबाल को लगभग घसीटता हुआ बाहर आया और पठानी टोला की उस भीड़ भरी सड़क पर इस तरह चलने लगा जैसे कर्पूरग्रस्त

मुनमान हमारे में चला जा रहा हो ।

दुखवान को यह अच्छा नहीं लगा, पर वह ग्रायोस रहा ।

जैसे लोग घर पहुँचे तो अनीमुन जाग रही थी और अनी मटिया पर पड़ी-पड़ी गों-गों ग्राँग रही थी । मनीन ने धीरे-से उमरे भाँचे को छूँआ और थोड़ी देर तक उनी तरह झुका-झुका उमरे चेहरे को देखता रहा, फिर अनी चारपाई पर आकर बैठ गया ।

लेकिन रात-भर उसे नींद नहीं आयी ।

दुखी के रोड घरों में जितना गन्नाटा रहा, बाहर उतना ही गोर ! स्त्रियों ने झूठे नहीं लगाये, झाड़ नहीं लगायी, बानों में तेल नहीं डाला । ये दक्खों को मनीना गिमा-गिसावर बह्याती रही और सड़कों पर 'या हमाम हुमैन' के नारे लगते रहे ।

दोपहर बाद जब कबला के लिए नाज़िये निपने तो नवयुवकों के दल छाती पीट-पीटकर मानम करने हुए आगे-आगे चले ! गुम की उत्सव की तरह मनाने-पाने में नीत्रवान यह दिया देना चाहते थे कि हुमैन की हत्या का अगामी गुम बम हमी को है । गिमा युवकों में तो स्नेह में अपने मीनों पर धीरे लगा रक्के थे और उनमें गुन की धूँँ छनक रही थी । अनेक युवक लोहे की सिक्कियों से अपनी पीठ पर षोट कर रहे थे । दम तरह बनारस के कुनकरी का यह मुण्ड हनुमान फाटक के पास इकट्ठा होकर 'हुम्म-हुम्म' करता हुआ कबंसा की ओर धीरे-धीरे बढ़ा जा रहा था ।

हनिहवा ने किसी अम्माई से एक तसवार से ली थी और उसे कंधे पर रख-कर चल रहा था । सनीफ का भड़का गरिफवा आगे-आगे बढ़कर बनैनियाँ भाँज रहा था । रक्त चचा मूंगी-टोरी से लैस भीड़ से थोड़ा हटकर कमर मुकाये धीरे-धीरे चले जा रहे थे । मनीन हनुमान फाटक पर थोड़ी देर तक पड़ा रहा था, फिर इकबाल को सड़कों के साथ छोड़कर घर लौट आया था । उसे कुछ हिमाच-किताब करना था ।

औरतें चिचड़ा पकाने की तैयारी में जुट गयी थीं । जो की गुरी, चने की दास और गेहूँ का दलिया, मगाने, मैस का मोरत — भव बिनाकर चिचड़ा पकेगा । आगिर मुड के बाद तो बचे-गुचे अन्न को इसी तरह न एक में मिलाकर पकाया गया होगा !

1. कबंसा में घरी तात्पर्य उस स्थान में है, जहाँ नाज़ियों को दफन किया जाता है ।

नमीचुन हुआ वनन माँज रही है और साय-साय गुनगुनाये भी जा रही हैं।
 उनका मोक बसो सुप्त नहीं हुआ है। वशीर की बीबी बताती है कि यह हुसैन का
 ग्रम नहीं है, बल्कि इनका खुद का ग्रम है। इनका एकलौता लड़का दस साल का
 होकर अभी मुहर्रम के महीने में खुदा को प्यारा हो गया था।

नो, नमीचुन हुआ का ग्रम कल रात से ही भड़क उठा है। वे इस वक्त भी गा
 रही हैं—

हमन क दादी चउक धरि रोवें
 चउक धरि रोवें
 जरें मोर जमिन असमनवा रे हाय
 अगिया जी लागत जल से बुझवतेवें
 दुध से बुझवतेवें
 कोखिया अगिन के बुझावें रे...

और नमीचुन हुआ फिर फूट-फूटकर रो पड़ी।

उधर, रेहाना को अचानक दौरा पड़ा और वह बेहोश हो गयी।

41

रुकक घचा लाठी टेकते हुए मतीन के घर आये और नीचेवाली कोठरी में बैठ गये।
 उन्होंने अपनी लम्बी सफेद दाढ़ी को मुट्ठियों में पकड़कर दूहा, नाक सुड़की और
 बोले, "बैकिया के बजे गुले ते?"

"दन बजे।" मतीन ने जवाब दिया और इकबाल को वहाँ से आवाज
 लगायी।

इकबाल धड़-धड़-धड़-धड़ नीचे उतरा और रुकक घचा को सलाह करके खड़ा
 हो गया।

"दुइठे पाय ले आ त दलद के! चढ़िया बनवाये। जउर पान भी ले लेवे।
 भोना किये से। हलचल गुरती डला लेवे।"

इकबाल पैसा लेकर चाय-पान लेने बाहर चला गया।

रुकक घचा और मतीन मसाह-मसावरे में डूब गये।

मोगामटीचान कागज पर तीन लोगों के हस्ताक्षर हो गये हैं और पूरा पैसा
 इकट्ठा हो गया है। बस बँक जाकर उमे जमा-भर करना है। इधर तर-तेवहार की

बज्र में जाना नहीं हो सता, पर अब बिना की कोई बात नहीं है। भगनी वाम तो हो ही चुका है।

मतीन का चेहरा धुने हुए रेशम की तरह चिना हुआ है और दिम में पुगहरी-सी उठ रही है। जल्दी ही उसके स्वप्न साकार हो जायेंगे थब। दंडे गिरानों की कोई मुहताजी नहीं रहेगी। जोशों में निजान मिलेगी।

पाय-गान करके ये लोग उठ जाते हैं और बगीर के घर में सभी मेम्बरों को मुनावर एक मीटिंग करने है जिनमें सबके साथ सी जाती है कि गोमाट्टी का बेयर्भन किसे बनाया जाय? सभी लोग एक स्वर में मतीन का नाम प्रस्तावित करते हैं, लेकिन वह इनकार कर देता है। वह रऊक बचा का नाम प्रस्तावित करता है और लोग उनके प्रभाव को स्वीकार कर लेते हैं। रऊक बचा बहुत ना-नुकुर करने है, लेकिन कोई भी आदमी उसकी कुछ भी मुनने को सैवार नहीं होता। अन्त में रऊक बचा घामोश हो जाते हैं।

फिर इस बात पर विचार-विमर्श शुरू होता है कि रययात्रा कौन-कौन जायेगा? कुछ लोग कहते हैं कि सभी मेम्बरों को चलना चाहिए। लेकिन अल्ताफ इस प्रस्ताव की आलोचना करता है और मसाह देता है कि सिर्फ रऊक बचा और मतीन चले जायें। लेकिन दबी खवान से इस प्रस्ताव की आलोचना सतीफ करता है और खुद भी जाने की इच्छा प्रकट करता है। इस पर ज्यादातर लोग उपाड़ जाते हैं।

“दशौटहियों के जाके का करेंगे उँही? गाँव धोवें क सहूर नहीं, जायेंगे सुर-घोदी के धँक के मनीजर से मिलें!”

और अन्त में बगीर अपना निर्णय मुनाते हैं कि रऊक बचा और मतीन ही चले जायें धँक, ज्यादा लोग जाने क्या करेंगे? अरे कोई रयया मिलना है आज?

और मतीफ: घामोश हो जाता है। जब सब की यही राय है तो यही अवेमा फीप-फीप करके क्या कर लेता। लेकिन बड़ी बेईमानी हुई सब वह पूछेगा लोगों से। पान्दे में गाड़ी बमाई का पैसा लगा है, मजाक नहीं है!

धँक में बड़ी भीड़ है। काउण्टरों पर साइनें लगी हैं। किसी काउण्टर पर रयया मिया जा रहा है तो किसी पर दिया जा रहा है। मोहे की मजबूत जानियों के

सीधे गो-गो, पचास-पचास और दस-दस, बीस-बीस के नोट गिने जा रहे हैं। गड़ियों तैयार की जा रही हैं। दरवाजे पर बन्दूकधारी सन्तरी खड़ा है। गन्दे कपड़ों में निरस्ते हुए भिखमंगों-जैसे व्यापारी आते हैं और कमर से बसनी घोलकर काउन्टर के भीतर नोटों की गड़ियों झहरा देते हैं, गोया कपड़े में बने हुए उस पाइप में जादू ने नोट बन गये हों !

भीतर चमकवाली एक तेटी रजिस्टर पर झुकी न जाने क्या-क्या जोड़-घटा गयी है। दगम में 'दोस्त' बाबू चक बगैरह का काम देख रहे हैं। छोटे-छोटे बलक लोग जनता से निपट रहे हैं और सबने भीतर कई दरवाजों के पार, मैनेजर साहब अपनी भूविग बेयर पर बैठे नगर के बड़े-बड़े सोंठों से हँसी-ठट्ठा करम में व्यस्त हैं।

रऊफ चचा का दिल धड़-धड़ धड़-धड़ धड़क रहा है। इ मतिनवा कहाँ ले आया यहाँ ? जहाँ बड़े-बड़ों की कोई गिनती नहीं वहाँ भला हमें कौन पूछेगा ?

लेकिन मतीन निडरता के साथ भीतर घुस गया और एक टेबुल के सामने गड़ा हो गया। उनके पीछे काँपते हुए-से रऊफ चचा भी खड़े हो गये। कहीं कोई सिद्धक न दे।

"कहो ?" टेबुल के पार बैठे एक अघड़े-से आदमी ने गर्दन ऊँची की तो मतीन ने उसके नामने अपनी दरखास्त और तीस मेश्वरों के दस्तखतों से युक्त एक कागज रग दिया। दरखास्त पर नीचे रऊफ चचा ने उर्दू में अपना हस्ताक्षर किया था।

"यह क्या है ?" उस आदमी ने फिर एक सवाल ठोंका तो पीछे खड़े रऊफ चचा घबरा उठे। यह बैक है या कचहरी ? अरे बाप रे ! इतनी जिरह !

मतीन ने सोसाट्टी के चारों में विस्तार से उस आदमी को सब बताया और याद दिलाया कि यह एक बार पहले भी उनसे मिल चुका है और उन्हीं के कहने से उसने यह सोसाट्टी बनायी है। अब अपनी दरखास्त लेकर वह आया है और साथ में पूरे पैसों भी। इस पर थोड़ी देर तक वह आदमी कुछ सोचता रहा, फिर बोला, "लेकिन इसे फानपुर भेजकर वहाँ से अप्रूव भी तो कराना होगा, उसमें भी तो कुछ खर्चा लगेगा। उसका इन्तजाम किया है या नहीं ?"

यह सुनकर मतीन का दिल बैठ गया। गुदा-गुदा करके तो इतने रुपये उसने जमा किये हैं, अब सोनायटी को अप्रूव कराने का खर्च कहाँ से लाये ? न जाने कितना खर्चा लगेगा इसमें ?

अभी वह यह सब सोच ही रहा था कि दोस्त बाबू अपनी सीट से उठकर उन साहब के पास आये और बोले, "इसे क्यों पोरेशन कोरता है पाण्डे, बेचारा गोरीब खोदमी हय। इसे मैनेजर साहब के यहाँ क्यों नौई बेज देता ? क्या नाम है सोमारा ?"

दोस्त बाबू मतीन की ओर मुग़ातिब हुए तो मतीन ने अपना नाम बता दिया।

उन्हें। उसे लगा कि दोन बाबू के जरिए उसकी परेशानी समाप्त हो सकती है। मुमकिन है बगैर खर्च-बर्च बिचे ही सोमादटी अद्रुब हो जाय। और वह टुकुर-टुकुर उनका मुँह ताकने लगा। रऊक खचा का तो क्या ही मुख्य क्या था।

‘मोतीन बाबू, तुम मैनेजर साहब से मिलो। ये सोमादटी-सोमादटीबाना काम यो ही बोलता हय। जाओ। पान्हे, तुम क्यों हर बान में अपना टाँग पुकेड़ता?’

दोस बाबू ने पान्हे बाबू का बग्या दबाया और पान्हे ने मर्दान की दरख्वास्त मनीन के हवाले कर दी। अब वह अपना कामठ-गत्तर लेकर साहब के बेबिन में प्रवेश कर गया। हालाँकि रऊक खचा की हिम्मत नहीं पट रही थी, पर चूँकि वे सोमादटी के पैपरमैन मनोनीत बिचे गये थे, इसलिए उन्हें भी पोंछे-पीछे जाना पड़ा। इ मनिनवा आज जो न करा दे।

ये लोग पोरी देर तक वहाँ यूँ ही खड़े रहे, इन्जबार बगठे रहे कि कुमियों पर बैठे हुए बड़े लोग सब बाहर आयें और सब उन्हें मौका मिले; फिर मैनेजर साहब के इशारा करने पर बाहर निकल आए।

मैनेजर साहब ने धन्दी बजायी। भीतर एक चररागी पहुँचा, जिसने उन्हें बुलाया, “सोगो से बनी कि पूछकर ही अन्दर आयें और तुम यहाँ दरबाजे पर खड़े क्यों नहीं रहते?”

मर्दान की अपनी गमती का एहसास हुआ और वह मन-ही-मन पछताने लगा। बाबई उसे पूछकर ही भीतर जाना चाहिए। अंगारी स्मूम में भी नबाब मास्टर साहब ने एक बार बताया था कि अन्दर जाने समय पूछकर जाना चाहिए—उगे या बान तो भूम हो गयी थी। और “कोई बात नहीं। गमती इमान में होनी है। भूल-बुझ खुदा माफ करेगा।

वे लोग बहुत देर तक बाहर एक बेंच पर बैठे रहे। रऊक खचा तो दीवार से पीठ टिकाकर पोरी देर के निग सो भी गये। फिर अचानक पण्डी बजी और भीतर में मौटकर चररागी ने उन्हें अन्दर जाने का हुक्म सुनाया।

बड़े लोग आ चुके थे।

“खच्चा उट्टी!”

मनीन ने रऊक खचा को टोंकारा दिया और वे भीतर जाकर मैनेजर साहब के सामने खड़े हो गये।

मैनेजर साहब ने उन्हें कुमियों पर बैठने का इशारा दिया तो रऊक खचा बेच्य मज्जिन हुए। इन कुमियों पर तो बड़े-बड़े लोग बैठते हैं, वे कैसे बैठें? लेकिन जब देखा कि मनिनवा बेमिस्तक एक कुर्मी मरकावर बैठ रहा है तो महमने-महमते वे भी एक पुगानी-गी कुर्मी पर बैठ गये।

मनीन ने काण्डाल मैनेजर साहब के सामने रख दिये।

मैनेजर साहब टूटी-फूटी हिन्दी में निब उन काण्डों को छोर से देखते रहे,

हिन अपना चपमा उतारकर उन्होंने टेबुल पर रखा और मतीन के सामने अपना चेहरा धनुष की तरह तान दिया—

"नाम क्या है?"

"अधुन मतीन अंसारी!"

"फाट करना चाहते हो?" वे गरजे।

लेकिन उनकी गर्जना का अर्थ मतीन की समझ में नहीं आया। रक्त चचा हिलने लगे।

"क्या माह्व?"

"तुम सोच एक साथ कितनी सोसायटियाँ बनाना चाहते हो? क्या तुम सोचते हो कि सरकार इतनी बेवकूफ है। बाज़ूई रह गये तुम जुलाहे के जुलाहे। वह मुहावरा है न कि 'जुलाहे बेगुनाहे पचास जूता' सो ठीक ही है। थोड़ी कमाई क्या करने लगे, चाहते हो कि सरकार को भी चारा चरा दो। वह देहाती मसल ठीक ही है, 'गगनिये अनाज, जोनहर्वे राज!' किसी ने तुम लोगों को 'उल्टी खोपड़ी' का कहा है तो ठीक ही कहा है..."

मतीन को उम्मीद नहीं थी कि उसका स्वागत इस तरह किया जायगा। मैनेजर साहब को एक साथ ही जो इतने सारे मुहावरे याद आ गये हैं और गालियों की जो इन्होंने सटी लगा दी है तो इनको इसका मुंहतोड़ उत्तर मिलना ही चाहिए। अरे सरकार देती है, इसलिए लेने आये हैं, कोई आपसे भीय नहीं मांग रहे हैं। मतीन को अच्छा हुई कि मैनेजर साहब को कस-कसकर मुना दे और बाहर निकल जायें, लेकिन इसके परिणाम का ध्यान आते ही उसका खोलता हुआ गून ठण्डा हो गया। उमने एक बार कुर्सी में बीमार भुगों की तरह दुबके हुए रक्त चचा पर अपनी भोगी हुई निगाह डाली, फिर मैनेजर साहब से अत्यन्त सहज भाव से बोला—

"साहब, हम नमशे नहीं। कुछ गलती हो गयी का साहब?"

मैनेजर साहब ने चपमा उठाकर पहन लिया और टेबुल की दराज में कुछ खोजने लगे। फिर एक कागज निकालकर उसके सामने रख दिया जिस पर हिन्दी अक्षरों में ऊपर कुछ लिखा हुआ था और नीचे उर्दू में कुछ हस्ताक्षर बने हुए थे तथा कुछ अंगूठे लगे हुए थे। कुछ हस्ताक्षर हिन्दी में भी थे।

"यह कागज भी तो तुम्हीं लोगों की तरफ से आया है। इसमें जिन तीस बुनकरों के हस्ताक्षर हैं उनमें तुम्हारा नाम भी है। तुम्हारे अलावा लतीफ, अल्ताफ, रक्त, बगीर बगीरह बहुत-से जुलाहों के हस्ताक्षर इसमें हैं। तुम्हीं लोगों ने न राजी अमीरुल्ला साहब को अपना चेयरमैन बनाया है? अभी कुछ दिन हुए राजी साहब यहाँ आये थे और रुपया जमा कर गये हैं। उनकी सोसायटी के अप्रूवल के लिए सारे कागज कानपुर भेजे जा चुके हैं। जैसे ही वहाँ से अप्रूवल आयेगा

हाजी साहब को सरकार द्वारा स्वीकृत धनराशि दे दी जायेगी। फिर ये तुम लोगों को उममें से बराबर-बराबर बाँट देंगे। समझ में आया? अब क्या चाहते हो कि तुम भी असल से एक सोमापटी बनाओ और उसके तुम चेयरमैन हो जाओ और अपने साधियों को मूर्ख बनाकर सरकार में जो खपया मिने उमे अकेले ही गड़प कर जाओ? तो जनाब अब्दुल मतीन अंसारी साहब, यह नहीं हो सकता। समझे?"

"लेकिन साहब इस कागज पर हम सोमन से तो दमघत करावा नहीं सोया!"

"तो क्या इतनी मारी दस्तखतें मैंने कर दी हैं?"

मैनेजर साहब ने परमा फिर टेबुल पर रख दिया और अपनी आँखें इन प्रकार बाहर निकाल सी जैसे अगले ही क्षण वे कोई छतरनाक करतब दिधानेवाले हों!

रऊफ ज़्यादा अब बहुत ज्यादा डर गये थे। वे घड़े हो गये। मतीन की इच्छा हुई कि फिर कुछ बोले, लेकिन तब तक मैनेजर साहब ने पट्टी बजायी और तेजी में भीतर घुमे हुए चपरासी को आदेश दिया कि दस्त बाबू को भीतर भेजो। फिर वे अपनी जगह घड़े हो गये और मजबूरान मतीन को भी उठ जाना पड़ा। मैनेजर साहब घड़े-घड़े हो फिर बोले, "जनाब अब्दुल मतीन अंसारी साहब, जाइए और चुपचाप अपनी साड़ी बिनिये। फाड़ करना बहुत बड़ा जुर्म है।"

मतीन ग़ामोश रहा। वह गिर झुकाने केबिन से बाहर चला आया।

उमे लगा कि वह हार गया है और हाजी अभीरत्ता जीत गये हैं। और उसे लगा कि यहाँ दाग है, यहाँ मत्ती है, यहाँ छीर है, यहाँ...

मतीन भूल गया कि उसके साथ रऊफ ज़्यादा भी हैं।

वह रफ़ाया खडमुहानी पर आकर बायीं ओर मुड़ गया और किसी बीमार व्यक्ति की तरह सड़क पर चलने लगा।

वह कहाँ-कहाँ गया, किस सड़क से चलकर किस सड़क पर निकला उसे कुछ भी नहीं मालूम।

और अन्त में वह मसदहिया की ओर से घूमकर सहाराबीर खडमुहानी पर पहुँच गया। वहाँ चहल-पहल काफी बढ़ गयी थी। सड़को पर धीरे-धीरे शाम उतरने लगी थी।

मतीन ढोड़ी देर तक उन सड़कों को देखता रहा। फिर आगे बढ़ गया।

आगे कबौर भट था।

मठ में बसियाँ जल गयी थी और भीतर से किसी के गाने की आवाज़ आ रही थी। मतीन वहीं खड़ा हो गया। कोई साधु कबौर की एक रमैनी गुनगुना रहा था—

मुनि मुनि रोवें कबीर की माई
 ऐ बारिक कैसे जीवहि रघुराई
 तनना बुनना सब तज्या है कबीर
 हरि का नाम लिखि लिये सरीर
 जब लग तागा बाहुन बेही
 सब लग बिसरै राम सनेही
 ओछी मति मेरी जाति जुलाहा
 हरि का नाम लखो मैं लाहा
 कहन कबीर मुनहु मेरी माई
 हमरा इनका दाता एक रघुराई ।

“मतीन !”

मतीन चौंक उठा । रऊफ चचा का बूढ़ा, लेकिन चौड़ा मजबूत पंजा उसके कंधे पर ढरकी की भाँति रखा हुआ था और उसका पूरा जिस्म निर्माणाधीन वस्त्र की तरह तना हुआ था ।

“सब गुदा मालिक है बेदा, सधुर करो । चलो !”

और उन्होंने देखा, आकाश पर चाँद आज कुछ जल्दी ही निकल आया है, पर उसका रंग पीला, मटमैला और उदास है । गोया किसी ने उसे बता दिया हो कि इस आसमान पर एक सूरज भी रहता है जो तुमसे पहले ही चमक गया है ।

43

मतीन घर से बाहर नहीं निकल रहा है । काम-धाम सब ठप है । एकचलचा को भेजकर हाजी अमीरुल्ला के यहाँ से उसने अपना हिनाब मँगवा लिया है और हाजी अमीरुल्ला ने बगैर कोई तरुं-वितरुं किये उसका हिसाब साफ कर दिया है ।

सतीफ, अल्ताफ, बशीर, कल्लू, जमील आदि सभी लोग जानते हैं कि मतीन क्यों नहीं बाहर निकल रहा है । वे यह भी जानते हैं कि जो कुछ हुआ है उसमें मतीन का कोई दोष नहीं है । उन्हें यह भी मालूम है कि हाजी अमीरुल्ला की उस फर्जी सोमायटी में उनके भी फर्जी हस्ताक्षर हैं । लेकिन वे कुछ नहीं कर सकते । उन्हें इसी बनारस में रहना है और यही काम करना है । वे इस तथ्य से भी भली-भाँति परिचित हैं कि इस फर्जी सोमायटी को पचास-साठ हजार की जो सरकारी

धनराशि मिनेगी वः गोमापटी के चेरमैन की हैमियन मे हाजी अमीरन्ता का ही मिनेगी और उगधनराशि पर उन्ही का एकाधिकार होगा। उन जैसे किसी गरीब कुनकर को कानी कौड़ी भी नहीं मिनेगी। लेकिन हाजी अमीरन्ता का वे कुछ नहीं बिगाड़ सकते। उनके हाथ बड़े सभ्ये है।

वे गब जानते है, पर यह नहीं जानते कि मनीन को कैसे समझाया जाय ? अतः वे गामोश है और अपने-अपने काम में तल्लीन है। गलियों में छानियाँ फँसी हुई है। छतों पर औरतें और सहकियाँ नगी भर रही है। रेशम के घागे गुलझाये जा रहे है। करपों की घटाघुट एक बिगन सय के गाय पासू है और मुगो-टोपी पहनें, सबी हुई दाढ़ियों और महलाई हुई झुर्रियोंवाले लोग महडो में पाँव ढाले ढरबियों का गेय देख रहे है—कि किस तरह दुनिया की यह पादरबिनी जा रही है और बिग तरह बन्द लोग इसे मँली किये दे रहे है।

अर्थात् छितनपुरा से लेकर कच्ची बाग तक और मदनपुरा से बजरहीहा तक सारा कार्य-व्यापार पहने की तरह ही बदस्तूर चल रहा है। यही नहीं, मेमरा, बहादुरपुर, लोहना, सहतरारा, पाण्डेपुर, हरदुमा, चौबेपुर और आसपास के गांवों का कार्य-व्यापार भी बूबंभत् चल रहा है। गाँव-देहात के साड़ी कुनकर, जिनमें हिन्दू भी है और मुसलमान भी, रोज मुकह-सवेरे काशी नगरी में आते हैं और किसी-न-किसी गिरस्ता के बरफे पर बैठकर चन्द रुपयों के बदले अपना पसीना बेचकर पने जाते है। गिरस्ता लोग गुन होकर उन्हें 'आगिरी बुध' और 'दीवाली' के रोज मिठाईयाँ बाँटते है। मरी गी बर्फी और गोंये के सहडू लोग बत्पना करते हैं कि वे गुन हैं।

मनीन पारपाई पर पड़ा-पड़ा सोचे जा रहा है और कानी पड़ती हुई छत को घूरे जा रहा है।

“उठी माग्ना कर मेब !”

अमीमुन गोंगनी हुई आती है और मनीन के पास खड़ी हो जाती है।

मनीन उगे देखता है—एक दुबली-पनमी काया, बरफई रंग की सूती धोती और जगकर मे ढकी हुई। मिर के दो-तीन बाल सफेद हो गये हैं, चेहरा गूमे हुए बेर की तरह मुग्गाया हुआ है।

मनीन की आँखें डकडका आती है। वह कपरी में अपना मुँह गड़ा देता है।

देज की राजनीति में कुछ भी उलट-फेर हो जाय, कितनी ही महत्वपूर्ण मोर्तें हो जायें, कंसी भी दिल हिलानेवाली घटनाएँ घट जायें, दुनिया में चाहे कोई ईमानदार आदमी हार जाय या वेईमान आदमी जीत जाय, पर सामाजिक कार्य चलते रहते हैं। वे बन्द नहीं होते; जैसे हर साल में धरती पर दूब उगती है और रेशम के कीड़े शहतूत के पत्ते खा-खाकर मुलायम, चमकदार और वेशक्रीमती धागे बनाते रहते हैं।

रऊफ चचा ने नजबुनिया का ब्याह ठीक कर दिया है और दिन-तारीख भी पक्की हो गयी है।

नजबुनिया का गिल-गिल करना बन्द हो गया है।

लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि पूरा बनारस ही गिलघिलाना बन्द कर देगा। किंगी का ब्याह होता है तो हुवा करे। कोई गम करता है तो किया करे! यहाँ तो इमाम हुसैन का गम भी ऐसा है कि पचास-साठ रोज तक त्यौहार-जैसी हलचल मचाये रहता है।

आज 'पचासा' है। यह पर्व 'सफ़र' महीने की उन्तीस तारीख को मनाया जाता है। सुबह से ही चहल-पहल बढ़ गयी है। सड़कों पर एक बार फिर 'या इमाम हुसैन' के नारे गूँजने लगे हैं। छोटे-छोटे बच्चे 'हुस्ते-हुस्ते' कर चारों ओर दौड़ रहे हैं।

दोपहर होते-होते ताजियों का जुलूस पूरे मुहरंमी तामझाम के साथ लाट भैरव की ओर चल देता है। लोग एक बार फिर जोश में आ जाते हैं।

लाट भैरव पर मेला लगा हुआ है। जगह-जगह भैंस के गोशत से पकौड़ियाँ बन रही हैं और भाई लोग दूकानों पर टूट पड़ रहे हैं। छोटे-छोटे बच्चे गुब्बारों और याँत की सारंगियों के लिए मचल रहे हैं। औरतें तथा लड़कियाँ नकाब उलटे फरस्तानवाली मस्जिद के पास खड़ी हैं और 'मलाई बरफ' चूसने में तल्लीन हैं। कुछ लड़कियों ने अपने भाइयों से भैंस के कीमेवाली पकौड़ियाँ भी मँगा ली हैं और मुँह फेरकर उन्हें खा रही हैं।

नजबुनिया को मेले में नहीं आने दिया गया है।

'पषागा' और 'गाटा' के मेले भीत गये हैं। 'साटा' के रोड चौहट्टा में लागड़ा होने से बचा। यह त्योहार रबीउल अख्यर की गान तारीख का मनाया जाता है और इसका मेला 'चौहट्टा साग छा' में मगता है। लोग कहते हैं कि पुरानी काशी का यही चौक था और बिन्ही सात छा साहब ने बताया था। चौहट्टेवालों का अपनी बदमाशियों पर बड़ा गर्व है। 'गाटा' के रोड बिगी मनषसे ने एक सड़की का मजाल उमट दिया था और उसके गाम को या पठा मही कित्त खोज को मसल दिया था और लागड़ा हो गया था। शमङ्गे में अल्ताफ और सतीफ भी शामिल थे। अगर रऊफ बचा बीष-बषाव न कर देते तो गून-घर्रर जरूर हो गया होता।

मजबुनिया इन मेले में भी नहीं आयी थी।

रऊफ बचा करण पर बैठे-बैठे कुछ सोच रहे हैं।

मतीन को क्या हो गया है आखिर? इन खरा-सी बात को लेकर वह इतना परेशान क्यों है? अरे नहीं बनी मोगामटी तो कौन-या पहाड़ टूट गया? जैसे इतने दिनों तक रहते आये है उसी तरह बाकी जिन्दगी भी काट देंगे। जुमाहा क्या होगा, क्या राज होगा?

उनकी बीबी ऊपर तागा-भरनी कर रही हैं और मजबुनिया घाना बनाने जा रही है। आज जुम्मा होने की वजह से मोसबाड़ा बन्द है, अतः घाने में तरकारी बनेगी। वह कहूँ काट रही है।

अचानक मजबुनिया को लगा कि मतीन आ गया है और उसने पूछ रखा है, 'तोरा बियाह कब होइए?' वह सज्जा जाती है। "भक्क।" वह बोलती है और उदास हो जाती है।

"का है रे?"

अम्मी पूछती है तो वह शौक उठती है।

उमके भीतर घुबुर-घुबुर होने लगती है और वह जल्दी से दब्बा-बब्बा, बर्तन-बर्तन उठा-उठाकर दधर-उधर रखने लगती है।

"मर्मावाले बुम।"

यह स्वर लोड़ियों से ही गुंजता हुआ ऊपर आता है और मजबुनिया बाहर निश्चमकर सीधे जाती है। ये तो उमकी होनेवासी गाम आ रही है; वह पहचानती

देश की राजनीति में कुछ भी उलट-फेर हो जाय, कितनी ही महत्वपूर्ण भीतें हो जायें, कंसी भी दिल हिलानेवाली घटनाएँ घट जायें, दुनिया में चाहे कोई ईमानदार आदमी हार जाय या वैईमान आदमी जीत जाय, पर सामाजिक कार्य चलते रहते हैं। वे बन्द नहीं होते; जैसे हर साल में धरती पर दूब उगती है और रेगम के कीड़े गहतूत के पत्ते खा-खाकर मुलायम, चमकदार और वेशक्रीमती धागे बनाते रहते हैं।

रऊफ चचा ने नजबुनिया का ब्याह ठीक कर दिया है और दिन-तारीख भी पक्की हो गयी है।

नजबुनिया का खिल-खिल करना बन्द हो गया है।

लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि पूरा बनारस ही खिलखिलाना बन्द कर देगा। किसी का ब्याह होता है तो हुआ करे। कोई ग्रम करता है तो किया करे! यहां तां इमाम हुसैन का ग्रम भी ऐसा है कि पचास-साठ रोज तक त्योहार-जैसी हलचल मचाये रहता है।

आज 'पचासा' है। यह पर्व 'सफ़र' महीने की उन्तीस तारीख को मनाया जाता है। सुबह से ही चहल-पहल बढ़ गयी है। सड़कों पर एक बार फिर 'या इमाम हुसैन' के नारे गूँजने लगे हैं। छोटे-छोटे बच्चे 'हुस्से-हुस्स' कर चारों ओर दौड़ रहे हैं।

दोपहर होते-होते ताजियों का जुलूस पूरे मुहरंमी तामझाम के साथ लाट भैरव की ओर चल देता है। लोग एक बार फिर जोश में आ जाते हैं।

लाट भैरव पर मेला लगा हुआ है। जगह-जगह भैंस के गोश्त से पकौड़ियाँ बन रही हैं और भाई लोग दूकानों पर दूटे पड़ रहे हैं। छोटे-छोटे बच्चे गुब्बारों और वांग की सारंगियों के लिए मचल रहे हैं। औरतें तथा लड़कियाँ नकाब उलटे फग्नस्तानवाली मस्जिद के पास खड़ी हैं और 'मलाई बरफ' चूसने में तल्लीन हैं। कुछ लड़कियों ने अपने भाइयों से भैंस के कीमेवाली पकौड़ियाँ भी भोगा ली हैं और मुँह फेरकर उन्हें खा रही हैं।

नजबुनिया को मेले में नहीं आने दिया गया है।

‘दधाना’ और ‘गाटा’ के मेले बीत गये हैं। ‘गाटा’ के रोब चौहट्टा में लागड़ा होने से बचा। यह त्योहार खीउम अध्वन की साठ तायेय का मनाया जाता है और इसका मेला ‘चौहट्टा माग घा’ में मगता है। सोम कहते हैं कि पुरानी कामी का मही चोब का और बिन्ही माग घा साहब ने बनाया था। चौहट्टेघासी की अरनी बड़मागियों पर बढ़ा गये हैं। ‘गाटा’ के रोब बिगी मनचने ने एक सड़की का मचाव उलट दिया था और उसके गाम को था पठा मही बिग चौब को मगल दिया था और लागड़ा हो गया था। इसके में अल्लाक और मनीक भी शामिल थे। अगर रऊक बचा बीच-बचाव न कर देते तो गून-गुब्बर जरूर हो गया होता।

मजबुनिया इस मेले में भी नहीं आयी थी।

रऊक बचा करण पर बैठे-बैठे कुछ मोच रहे हैं।

मतीन को क्या हो गया है आधिर? इस जरा-सी बात की लेकर यह इतना परेशान क्यों है? अरे मही बनी गोमापटी तो कौन-ना पहाड़ टूट गया? जैसे इनने दिनों तक रहने भाये हैं उसी तरह बाकी जिन्दगी भी बाट मेंगे। जुनाहा क्या मेगा, क्या राज मेगा?

उनकी बीबी ऊपर तागा-भरनी कर रही है और मजबुनिया घाना बनाने जा रही है। आज जुम्मा होने की वजह से गोमबाडा बन्द है, अन्न: घाने में तरकारी बनेगी। यह बहू बाट रही है।

अचानक मजबुनिया की मया कि मतीन आ गया है और उसने पूछ रहा है, ‘तोरा बिवाह कब होए?’ यह सज्जा जाती है। “मरक।” यह बोसनी है और उदाग हो जाती है।

“का है रे?”

अम्मा पूछी है तो वह चौंक उठती है।

उसके भीतर घुबुर-घुबुर होने लगती है और वह जल्दी में दब्बा-दब्बा, बर्तन-सर्तन उठा-उठाकर दफर-उपर रखने लगती है।

“गमावाने कुम।”

यह घर सीड़ियों में ही मूँजवा हुआ ऊपर आता है और मजबुनिया बाहर निजमवर मीबे झाँकती है। ये तो उसकी होनेवासी गाम आ रही हैं; वह पहचानती

है और दुपट्टा ठीक करती हुई रसोईघर में घुस जाती है।

नजबुनिया को अम्मा अपनी समधिनि के सलाम का जवाब देती हैं और खड़ी होकर उनका स्वागत करती हैं।

“आओ हो, बइठो हो...अरे नजबुनिया, मछिया-ओछिया लियो तो रे!”

वे वहीं से नजबुनिया को मचिया लाने के लिए पुकारती हैं, लेकिन तब तक उनकी समधिनि वहाँ बिछे खटोले पर ही बैठ जाती है।

“अरे का होइए मछिया-ओछिया, मत मंगाओ हो, यही खटोलवा पर बइठ जाइला।”

“नाहीं हो मछीवा पर बैठो ने!”

वे ज़िद करती हैं और नजबुनिया के हाथ से मचिया लेकर समधिनि को उस पर जबर्दस्ती बैठा देती हैं।

वे स्वयं नीचे बैठ जाती हैं और रऊफ चचा को बाजार भेज देती हैं। रऊफ चचा थोड़ी देर बाद मिठाई और पान लेकर आते हैं, जिन्हें तामचीन की तश्तरियों में रखकर नजबुनिया की अम्मा अपनी समधिनि के सामने पेश करती हैं।

थोड़ी देर तक दोनों समधिनों में बातचीत होती रहती है, फिर शादी के बारे में अन्तिम वार्ता करके नजबुनिया की सास अपना नकाब उठाती हुई खट्ट-खट्ट सीढ़ियाँ उतर जाती हैं।

नजबुनिया रसोईघर में गुमसुम बैठी रहती है।

46

दीवार और छत के बीच जो दरार है उसमें गोरियों ने अपना घोंसला बना लिया है। इन दिनों घोंसले में चोंच निकाले दो छोटे-छोटे बच्चे सदैव चीं-चीं करते रहते हैं और उनके माता-पिता अपनी-अपनी चोंच में दाने लेकर घोंसले में आया करते हैं और बच्चों की चोंच में दाना पकड़ाकर फुरं से उड़ जाते हैं।

अलीमुन कथरी सिलने के साथ-साथ गोरियों के घोंसले को भी देखे जा रही है और न जाने क्या-क्या सोचे जा रही है।

इकबाल आज जल्दी ही स्कूल चला गया है।

मतीन चारपाई पर टांग सिकोड़े बैठा है और अलीमुन की उँगलियों को देख रहा है। वह आज टनमन है। दरअसल जब से उसने मरु जाने का निर्णय लिया है

तभी में उगने मन का बंधन छूटने लगा है। असीमुन में उगने लगा दिया है कि वह अब बनारस में काम नहीं करेगा, मऊ जायेगा। अन्नास बना रहा या कि नहीं आगामी ज्ञाता है। ऐहानुम का काम है और मजूरी यहाँ की बनिबन के गुनी पड़नी है। अरे यहाँ जंगल पनायेने बड़ी रखा मिलेगा। यहाँ बनारस में कोई गुर्पाव के पर तो मने नहीं है। दबबनबा भी अब बड़ा हो गया है, पर वो देव-भान कर लेगा। फिर बनारस में मऊ है ही बिगनी दूर। दो घण्टे का रास्ता। जब जो पाहा घने भाये, जब जो पाहा घने मये। कोई मौनरी तो कर नहीं रहे है कि छुट्टी देने की संज्ञा होगी। अरे अपना काम है, जब चाहेंगे करेंगे, जब चाहेंगे नहीं करेंगे।

उगने इस पैमाने में असीमुन को पौड़ा तो जरूर पड़ेंगी, पर विरोध उगने नहीं दिया। अरे नहीं भी रहें, गुण तो रहें ये। बचपन से ही तो दुष्ट संस रहे हैं। जो भी गणना देखा पूरा नहीं हुआ। और इस हार ने तो भीतर तक साँझकर गद्य दिया है। भाग हो ऐसे गिरस्ता का। पूरे गानदान के लिए मुनिकर-नकीर (यमदुत) आवें। बिता जायें हरमिये सब।

मन-ही-मन असीमुन ने हाजी अमीरस्ता के सात पुस्तों को बोगा और घामोश रही। गिराँ दबी जवान में एक सपान पूछा कि जब जाओगे, जंगके उत्तर में मोड़ी देर तक मगीन चुप रहा। फिर बताया कि जस्टी ही जाने का बिचार है। और साथ ही यह ताकीद भी की कि अगर तबीयत-बबीयत अभी ज्यादा घराब हो तो किसी से खबर कहनाकर खुशवा लेना। यहाँ के बहुत-से लोग मऊ जाते-आते रहते हैं।

असीमुन ने आग्रह मन से सबकुछ स्वीकार कर लिया और मतीन को मगा कि उताने ठीक ही निर्णय लिया है। इस जहानुम से निकल चलना ही बेहतर होगा। फिर मऊ में अगर ठीक से कमाई-घमाई हो गयी तो उगने बाद देखा जायेगा। बैसे बनारस में अब वह तभी अपना काम जमायेगा, जब अपना करपा और रेगम-भर को अपनी पूँजी उतारके पास हो जायेगी। यहाँ के गिरस्तों के यहाँ न तो अब वह मजूरी पर बिनेगा और न बानी पर।

और उगने मन-ही-मन तय किया कि अगले इतबार को वह मऊ के लिए रवाना हो जायेगा।

बी। बी।

गौरवा के बर्षों ने शापद आपस में कोई जानधीन को और मतीन को चारपाई के पास पास का एक सम्बा-ना तिनका आ गिरा। वह मुकराया। बर्षे अच्छे हो मगत हैं, चाहे वे आदमी के हो या बिड़िया के। वे भीतर के दुष्ट को मते हैं और ओंछों पर पबित्र मुश्कान छाप देते हैं।

“अलीमुन, ऐ अलीमुन !”

अचानक सीढ़ियों पर किसी के चढ़ने की और अलीमुन को पुकारने की आवाज आयी तो मतीन चौंका। यह तो रऊफ चचा की बीवी की आवाज है।

“सलांवाले कुम !”

मतीन और अलीमुन दोनों ने साथ-साथ सलाम किया।

रऊफ चचा की बीवी ने अपनी फूल-कढ़ी सफेद चादर को दोनों हाथों से समेटा और चप्पल उतारकर जमीन पर बैठ गयीं। अलीमुन ने कयरी लपेटकर उसे एक ओर सरका दिया और दीवार से टिककर बैठ गयी। कमर में दर्द होने लगा था।

“जीव ठीक है ने ?”

नजबुनिया की अम्मा ने एक ही सवाल से पति-पत्नी दोनों की खरियत का पता लगाया और फिर जल्दी ही अपनी मुख्य बात पर आ गयीं।

“देखो लड़की क बियाह है। आज अबटन लगिये, चार बजे। बुध के रज्जगा है। अंगरेजी बीस तारिक के बरात अइए। घर-भर क दावत है। आवे के है। जरूर से। तनिक्की फरक न पड़े।”

अलीमुन खिल गयी। लड़की के व्याह की खबर से टोले-मुहल्ले की स्त्रियाँ अवसर ही प्रसन्न हो जाती हैं। उसने वादा किया कि आज अबटन के बखत वह जहर आयेगी और यह भी कहा कि शादी के रोज़ सभी लोग आयेगे। बिटिया का बियाह है, भला इसमें भी कोई शामिल न होगा ?

और नजबुनिया की अम्मा चली गयी। अलीमुन रसोईघर में जाकर खटर-पटर करने लगी। इकबलवा आज खाकर नहीं गया है। दोपहर का आयेगा तो आते ही खाने के लिए छैला जायेगा। जल्दी से कुछ पका-बका ले। संझा को रऊफ चचा के हिंया भी जाना है।

नजबुनिया का बियाह हो रहा है। होना ही चाहिए ! क्यों न हो भला ?... मतीन ने सोचा और भीतर-ही-भीतर बरसाती नदी की तरह बिखरने लगा।

नहीं, इस प्रवाह को वह रोक नहीं सकता।

वह लेट गया और अपना चेहरा उसने शुतुरमुर्ग की तरह कयरी की रेत में गाड़ लिया।

उसकी आँखों से वाढ़ का पानी भचर-भचर बहने लगा।

‘भक् !’

अचानक एक शब्द उसके कानों में ठक्-से आकर लगता है और वह चिह्नुक उठता है।

वह घड़ा हो जाता है। लुंगी के टोंके से अपनी आँखें पोंछ लेता है और कमरे

में टहलने लगता है। फिर वह मूँटी में एक झोला उतारता है और उसमें अपने कपड़े-बाड़े भरने लगता है। वह आज ही मऊ जमा जायेगा।

अमीमुन उसके जिया-जमाओं को देखनी रहती है; बीनती कुछ नहीं। जब से बेकबानी पटना पड़ी है मनीन कुछ भी करता है, वह घामोस रहती है। दरअसल वह डरती है कि उसकी कोई बात वहीं और न दुग पढ़ेंथाने उसे।

मनीन झोला मेजर बाहर निबल जाता है।

अमीमुन अपनी शानी-शामी आँखों में तब तक अपने मोहर को देखनी रहती है जब तक वह मनी के मोड़ पर पहुँचकर ओझल नहीं हो जाता।

मऊ की ओर जानेवाली पैमेंजर ट्रेन एक घण्टा सेट है। मनीन अलईपुर स्टेशन के प्लेटफार्म पर अपना झोला भिजे इधर-उधर टहल रहा है उसके अन्तरतम में धौबनी-झैती कोई चीज खल रही है।

स्टेशन की दीवारों पर तरह-तरह के पोस्टर लगे हुए हैं—‘सावधानी हटी कि गारा हुआ!’ ‘मैं तुमसे तेरे आँगन की!’ ‘ठगों से सावधान’...

कुछ भिद्यमेंगे बच्चे बिगी फिल्म का गाना गा रहे हैं और एक छोटी-सी बच्ची हाथ मटका-मटकाकर नाच रही है। चापबाला उन्हें दूर भगा रहा है।

तभी भटनी की ओर से एक गाड़ी आती है और उसमें से कुछ ऐसे देहाती स्टेशन पर उतरते हैं जो शक से ही आप्पारिमिक लग रहे हैं। उन्हें देखते ही कन्धे पर गमछा डालने, घुटनों तक की धोती पहने एक आदमी उनकी ओर मदक पड़ता है और उनमें से गुरुर-गुरुर बलियाने लगता है। तब तक एक दूसरा गमछाधारी व्यक्ति भी वहाँ पहुँच जाता है, जिसे पहला व्यक्ति मुफ्त भाप में हाँटकर भगा देता है, जैसे बिगी साग को घा रहा कोई कुत्ता दूसरे कुत्ते को भौंककर वहाँ में हटा देता है।

भटनी में जानेवाली गाड़ी कंष्ट की ओर खाना हो जाती है। मनीन की गाड़ी कंष्ट से अभी तक नहीं आयी।

मनीन अब तक की सारी घटनाओं को भूल जाना चाहता है—अपनी सोसायटी को भी और मजबुनिया को भी। सैबिन बार-बार उसकी आँखों के सामने बैक पैमेंजर का पेहरा और मजबुनिया के गिस-धिस करते हुए दाँत घूम जाते हैं। बीच-बीच में अमीमुन की बचरी गिलती हुई उँगलियाँ और इकबाल को धँसो-धँसो-सी आँखें भी उसकी आँखों में नाचती हैं और वह सरपराने लगता है।

अचानक वह तय करता है कि बापम सौट चले और अपनी बिन्दगी से समझौता कर ले, मेहनत उसके पाँव गेट की ओर नहीं बढ़ते और वह झोला भिजे-भिजे टहलता रहता है।

तभी उसकी गाड़ी आ जाती है और एक डिव्हे में घुसकर वह बैठ जाता है ।
गाड़ी पांच मिनट तक अलईपुर स्टेशन पर रुकती है, फिर चल देती है ।

मतीन अपनी गोद में झोला लिये, सिर झुकाये बैठा रहता है । जब सारनाथ
स्टेशन आता है तो थोड़ी देर के लिए वह बाहर की दुनिया में खुद को ले जाता है
और स्टेशन पर लिखी इवारत को अटक-अटककर पढ़ने लगता है—

बुद्धं शरणम् गच्छामि

धम्मं शरणम् गच्छामि

संघं शरणम् गच्छामि ।

कैप्ट !

हिन्दी में आनेवाली बागी बिस्वनाथ एक्स्प्रेस गाड़ी बाराचनी के कैप्ट स्टेशन पर मुबहू गवा छः बजे के करीब पहुँचनी है ।

धमा हो पं. कमलारवि त्रिपाठी का जिन्होंने अपने रेल मंत्रित्व-काल में इतनी भ्रष्टी-भ्रष्टी गाड़ियाँ बसायी और बनारस को हिन्दुस्तान की हर महत्वपूर्ण जगह में जोड़ दिया । स्टेशन की इमारत भी नयी बनवा दी । उन्होंने और बहूनी ने मिलकर बितने बेघारों को रेल विभाग में नौकरियाँ भी दिसवा दी ।

हाजी अमीरुन्ना 'बागी बिस्वनाथ' में उतरकर यही सब सोचते हुए स्टेशन में बाहर आये और रिक्शा ढूँढ़ने लगे ।

गूरज अभी नहीं निबला था, लेकिन उन्नासा बापी हो गया था । बाहर घटम-घटम भी बढ़ गयी थी । रिक्शेवाने पात्रियों के पीछे टूटे पड़ रहे थे । लेकिन हाजी अमीरुन्ना के पास कोई भी रिक्शावाला नहीं आया था । दरअसल माने-के गार रिक्शेवाले या तो ट्रिपियों के पीछे पड़े हुए थे या गया-स्नान करनेवालों के, नाबि उनमें अचोरीने खसूम बिने आ सकें । हाजी अमीरुन्ना की सुपी-टोरी देखकर ही वे समझ गये थे कि वे स्थानीय आदमी हैं और इनके पीछे समय में कोई पायदा नहीं है ।

हाजी अमीरुन्ना बहुत परेशान हुए । एक रिक्शावाला मैयार भी हुआ तो लगा पाँच रुपये माँगने । हाजी ताहब तीन रुपये में शुरू होकर चार तक पहुँच गये लेकिन बट टग-मं-मग नहीं हुआ । और वे दूसरे रिक्शेवाने के पास पहुँचे, लेकिन अब बनी गलतफहमी नहीं मिली तो फिर उसी रिक्शेवाने के पास पहुँचे और पाँच रुपये ही देने को तैयार हो गये । मगर उसने इनकार कर दिया और अपना रिक्शा लेकर आगे बढ़ गया ।

तब हाजी अमीरुन्ना थोड़ी देर तक वहीं गुमसुम गये रहे, फिर अचानक उठाकर पैदल ही चल पड़े । थोड़ा आगे जान पर एक रिक्शावाला सामने में आया हुआ उन्हें दिखायी पड़ गया जिसे रक्का बरके बनेर कुछ बट-कुने हो बट ८ के

गये और बोले, “चलो।” हाजी साहब का यह सीमाव्य ही था कि उस रिक्शेवाले ने कोई चूँ-चपड़ नहीं की और चुपचाप चल पड़ा।

हाजी अमीरुल्ला हैदराबाद गये थे रेशम का भाव-ताव देखने। वहाँ से दिल्ली होते हुए लौटे हैं। उनकी सफेद लुंगी याया के कारण बहुत गन्दी हो चुकी है और कुर्ते पर तरह-तरह के दाग लग गये हैं लेकिन उन्हें कोई गम नहीं है। बड़े लोग अपने वेश-विन्यास पर ज्यादा ध्यान नहीं देते। इसी में उनका बड़प्पन है। वरे इनके बड़े भाई हाजी मतिउल्ला तो लुंगी पहनकर विदेश भी जा चुके हैं। फ्रांस और अमेरिका की यायाएँ उन्होंने लुंगी में ही की हैं। कौन भोसड़ियावाला क्या कहेगा? विदेश जा रहे हैं तो क्या अपना तहजीबो-तमद्दुन (सभ्यता और संस्कृति) छोड़ दें? उनके घर के लड़के आज भी लुंगी पहनकर स्कूटर चलाते हैं, फिल्म देखते हैं, सारनाथ घूमते हैं।

रिक्शा अचानक रुक गया। चैन उतर गयी थी। रिक्शेवाले ने चैन चढ़ायी और फिर चल पड़ा।

सड़क बेहद खराब थी। जगह-जगह गिट्टियाँ निकल आयी थी और गड्ढे बन गये थे। जब किसी गड्ढे में रिक्शे का पहिया पड़ता तो हाजी अमीरुल्ला को लगता कि अब उलट जायेंगे और वे भयभीत हो जाते। लेकिन रिक्शा फिर सँभल जाता। वे फिर मुतमइन हो जाते और सोचने लगते।

रेशम बहुत महँगा हो गया है। कारोवार कैसे चलेगा? जब से हाजी अमीरुल्ला ने अपना कारोवार बढ़ाया है तब से बस यही एक चिन्ता उन्हें खाये जा रही है कि कारोवार कैसे चलेगा?

हाजी अमीरुल्ला ने करघों का काम अब कम कर दिया है और उनके स्थान पर पावरलूम्स बैठा लिये हैं। ‘सोसायटी’ को सरकार से जो सत्तर हजार रुपये मिले थे, हाजी साहब ने उनका सदुपयोग पावरलूम्स बैठाने में ही किया है। हालाँकि लतीफ-बतीफ ने थोड़ी चूँ-चपड़ की थी, मगर शरफुद्दीनवा ने ऐसा भभका दिया कि एक ही सटके में खामोश हो गये। फिर किसी की हिम्मत नहीं पड़ी। पावरलूम्स लग जाने से बड़ी आसानी हो गयी है। यही नहीं, अब इस कोआपरेटिव सोसायटी के माध्यम से चूँकि उनका माल सीधे एक्सपोर्ट होने लगा है, इसलिए माल भी ज्यादा तैयार कराना पड़ता है। वैसे एक साड़ी को एक बुनकर कम-से-कम चार दिनों में तैयार करता था, अब एक पावरलूम—अगर बिजली रही तो—एक दिन में चार साड़ियाँ तैयार करता है। हालाँकि इन साड़ियों में वैसी कारीगरी और नक़्काशी नहीं होती, पर आमदनी ज्यादा है। ‘बनारसी साड़ी’ के आम गुरोददार तो होते नहीं अब—और इन साड़ियों को हर आमो-खास गुरोद लेता है। लेकिन करघे पूरी तरह ग़त्म नहीं हुए हैं। कुछ करघे अभी भी चल रहे हैं। दूकान में हर तरह का माल होना चाहिए। बल्कि शरफुद्दीन को एक नया कारोवार भी

उन्होंने शुरू कर दिया है। बट अरने धानी यज्ञ में छाने की सादियाँ तैयार करवाता है और भेंटियों में सगनेवाले लोगों का बारोबार भी अब शुरू करनेवाला है।

बनारस में बिहर देखिए उधर ही अब पावरमूम-ही-पावरमूम मजदूर आते हैं। हर छोटे-बड़े गिरग ने अरने यहाँ पावरमूम मगा रखा है। दुनिया बड़ी तेजी से गरबरी कर रही है। मुनबर्गी की गलियों में रात-रात-भर पावरमूम पत्ता करते हैं। घटर घटर...घटर घटर...घटर घटर...जैसे कोई अन्तहीन रेलगाड़ी चली जा रही हो।

हाजी अमीरुल्ला के यहाँ इस पावरमूम मगे हुए हैं। हाजी मतिउल्ला, हाजी मिनिस्टर और हबीबुल्ला ने भी अरने-अरने घरों में पावरमूम बैठा लिये हैं। उधर हाजी अमीरुल्ला के भाबी समधी हाजी बमीउल्ला गिरग के यहाँ तो पहले से ही कई पावरमूम थे, उधर और आ गये हैं और वे गिने-चुने रईस अंतारियों में अब अपना महारवपूर्ण स्थान बना चुके हैं। अपने को वे अनईपुरा इलाके के साठ खासेह (बनारस के एक रईम अमागी) समझते हैं। हाजी रगीद, हाजी मलामकुल्ला, हाजी गनीर और बाऊ इब्ना आदि ने भी अपने-अपने यहाँ पावरमूम बैठा लिये हैं। इस प्रकार पूरे इलाके में अब एक अन्तहीन रेलगाड़ी निरन्तर चलानी है और शुरूआतों की मोद हराम बिपा करती है।

मेकिन हाजी अमीरुल्ला को इसमें क्या सेना-देना है? उनकी तो पहली महारवपूर्ण बिपा यह है कि रोज़ का भाव कैसे नीचे गिरे? इसके लिए उनके सद्बचानों ने पिछले दिनों बनारस, मऊनाप बजन और मुबारकपुर के अनेक मुनबर्गी ने इत्ताफ भी कर दी थी और उनकी हामत और धस्ता हो गयी थी। मेकिन कोई याग गहं अभी नहीं पडा है। इस मामले को लेकर सगद में सवाल उठाया जानेवाला था, पता नहीं क्या हुआ? अगर कारोबार ठीक-ठाक जम गया तो इस माम दो काम करने हैं। हबीबुल्ला को हज के लिए भेजना है और शरफुद्दीन का ब्याह करना है...

अभी वे कुछ और भी सोचने, मेकिन रिक्ता उनके दरवाजे पर पहुँच गया और वे उतर पड़े। उतरते बसा उनकी भुमी रिक्ता में कही फेंककर गरने पट गयी। कोई बात नहीं।

घर के बच्चों ने हाजी माहब को रिक्ता में उतरते हुए देखकर थोड़ी देर तक और बिपा, फिर आगरेवाला पेठा खाकर ग्रामोस हो गये।

हाजी माहब पछाना गये। वहाँ देर तक बैठे-बैठे कुछ सोचते रहे। फिर बाहर निबलकर उन्होंने स्नान किया और नाश्ता करके गद्दी पर आ बैठे। शरफुद्दीन ने उनके सामने कई दिन के अग्रवार रख दिये। 'आज', 'दैनिक आगरण' और 'कौमी एजडा'।

गये और बोले, “बत्तो।” हाजी साहब का यह सीमान्य ही था कि उस रिक्शेवाले ने कोई चूँ-चपड़ नहीं की और चुपचाप चल पड़ा।

हाजी अमीरुल्ला हैदराबाद गये थे रेशम का भाव-ताव देखने। वहाँ से दिल्ली होते हुए लौटे हैं। उनकी लफेद लुंगी यात्रा के कारण बहुत गन्दी हो चुकी है और कुर्ते पर तरह-तरह के दाग लग गये हैं लेकिन उन्हें कोई गम नहीं है। बड़े लोग अपने वेश-चिन्दास पर ज्यादा ध्यान नहीं देते। इसी में उनका बड़प्पन है। अरे इनके बड़े भाई हाजी मतिउल्ला तो लुंगी पहनकर विदेश भी जा चुके हैं। फ्रांस और अमेरिका की यायाएँ उन्होंने लुंगी में ही की हैं। कौन भोसड़ियावाला क्या कहेगा? विदेश जा रहे हैं तो क्या अपना तहजीबो-तमद्दुन (सभ्यता और संस्कृति) छोड़ दे? उनके घर के लड़के आज भी लुंगी पहनकर स्कूटर चलाते हैं, फिल्म देखते हैं, सारनाथ घूमते हैं।

रिक्शा अचानक रुक गया। चेन उतर गयी थी। रिक्शेवाले ने चेन चढ़ायी और फिर चल पड़ा।

गड़क वेहद खराब थी। जगह-जगह गिट्टियाँ निकल आयी थीं और गड्ढे बन गये थे। जब किसी गड्ढे में रिक्शे का पहिया पड़ता तो हाजी अमीरुल्ला को लगता कि अब उनट जायेंगे और वे भयभीत हो जाते। लेकिन रिक्शा फिर सँभल जाता। वे फिर मुतमइन हो जाते और सोचने लगते।

रेशम बहुत महँगा हो गया है। कारोबार कैसे चलेगा? जब से हाजी अमीरुल्ला ने अपना कारोबार बढ़ाया है तब से बस यही एक चिन्ता उन्हें खाये जा रही है कि कारोबार कैसे चलेगा?

हाजी अमीरुल्ला ने कर्घों का काम अब कम कर दिया है और उनके स्थान पर पावरलूम्स बैठा लिये हैं। ‘गोसायटी’ को सरकार से जो सत्तर हजार रुपये मिले थे, हाजी साहब ने उनका सदुपयोग पावरलूम्स बैठाने में ही किया है। हालाँकि लतीफ-बतीफ ने थोड़ी चूँ-चपड़ की थी, मगर शरफुद्दीनवा ने ऐसा भभका दिया कि एक ही झटके में गामोण हो गये। फिर किसी की हिम्मत नहीं पड़ी। पावरलूम्स लग जाने से बड़ी आमानी हो गयी है। यही नहीं, अब इस कोआपरेटिव गोसायटी के माध्यम से चूँकि उनका माल सीधे एक्सपोर्ट होने लगा है, इसलिए माल भी ज्यादा तैयार कराना पड़ता है। यैमे एक साड़ी को एक चुनकर कम-से-कम चार दिनों में तैयार करता था, अब एक पावरलूम—अगर बिजली रही तो—एक दिन में चार साड़ियाँ तैयार करता है। हालाँकि इन साड़ियों में वैसी कारीगरी और नक़्क़ाशी नहीं होती, पर आमदनी ज्यादा है। ‘बनारसी साड़ी’ के आम खरीददार तो होते नहीं अब—और इन साड़ियों को हर आमो-ग़ास खरीद लेता है। लेकिन कर्घे पूरी तरह ग़त्म नहीं हुए हैं। कुछ कर्घे अभी भी चल रहे हैं। दूकान में हर तरह का माल होना चाहिए। बल्कि शरफुद्दीन को एक नया कारोबार भी

उन्होंने शुरू करा दिया है। वह अपने खाली वक्त में छापे की सादियाँ तैयार करवाता है और अँगूठियों में लगनेवाले नगों का कारोबार भी अब शुरू करनेवाला है।

वनारम में ज़िघर देखिए उधर ही अब पावरलूम-ही-पावरलूम नज़र आते हैं। हर छोटे-बड़े गिरम ने अपने यहाँ पावरलूम लगा रखा है। दुनिया बड़ी तेजी से तरक्की कर रही है। बुनकरों की गलियों में रात-रात-भर पावरलूम चला करते हैं। छटर छटर...छटर छटर...छटर छटर...जैसे कोई अन्तहीन रेलगाड़ी चली जा रही हो।

हाजी अमीरुल्ला के यहाँ दस पावरलूम लगे हुए हैं। हाजी मतिउल्ला, हाजी मिनिस्टर और हवीबुल्ला ने भी अपने-अपने घरों में पावरलूम बँठा लिये हैं। उधर हाजी अमीरुल्ला के भावी समघी हाजी बलीउल्ला गिरस के यहाँ तो पहले में ही कई पावरलूम थे, इधर और आ गये हैं और वे गिने-चुने रईस अंसारियों में अब अपना महत्वपूर्ण स्थान बना चुके हैं। अपने को वे अलईपुरा इलाक़े के ताट स्वालेह (बनारस के एक रईम अंगारी) समझते हैं। हाजी रमीद, हाजी सलामतुल्ला, हाजी नजीर और बाऊ डब्बा आदि ने भी अपने-अपने यहाँ पावरलूम बँठा लिये हैं। इस प्रकार पूरे इलाक़े में अब एक अन्तहीन रेलगाड़ी निरन्तर चला करती है और मुहल्लेवालों की नोद हराम किया करती है।

लेकिन हाजी अमीरुल्ला को इसमें क्या लेना-देना है? उनकी तो पहली महत्वपूर्ण चिन्ता यह है कि रेशम का भाव कैसे नीचे गिरे? इसके लिए उनके सद्प्रयामों में पिछले दिनों बनारस, मऊनाथ भंजन और मुबारकपुर के अनेक बुनकरों ने हड़ताल भी कर दी थी और उनकी हालत और खस्ता हो गयी थी। लेकिन कोई ख़ाम फर्क अभी नहीं पड़ा है। इस मामले को लेकर संमद में सवाल उठाया जानेवाला था, पता नहीं क्या हुआ? अगर कारोबार ठीक-ठाक जम गया तो इस साल दो काम करने हैं। हवीबुल्ला को हज़ के लिए भेजना है और शरफुद्दीन का ब्याह करना है...

अभी वे कुछ और भी सोचते, लेकिन रिक्शे उनके दरवाजे पर पहुँच गया और वे उतर पड़े। उतरते वक्त उनकी सुगी रिक्शे में कहीं फँसकर परे-में पड़ गयी। कोई बात नहीं।

घर के बच्चों ने हाजी साहब को रिक्शे से उतरते हुए देखकर थोड़ी देर तक भोर किया, फिर आगरेवाला पेठा खाकर खामोश हो गये।

हाजी साहब पखाना गये। वहाँ देर तक बैठे-बैठे कुछ सोचते रहे। फिर बाहर निकलकर उन्होंने स्नान किया और नाश्ता करके गद्दे पर आ बैठे। शरफुद्दीन ने उनके सामने कई दिन के अखबार रख दिये। 'आज', 'दैनिक जागरण' और 'कौमी एकता'।

गये और बोले, "बली।" हाजी साहब का यह सौभाग्य ही था कि उस रिक्शेवाले ने कोई चूँ-चपड़ नहीं की और चुपचाप चल पड़ा।

हाजी अमीरुल्ला हैदराबाद गये थे रेशम का भाव-भाव देखने। वहाँ से दिल्ली होते हुए लौटे हैं। उनकी सफेद लुंगी बाया के कारण बहुत गन्दी हो चुकी है और कुर्ते पर तरह-तरह के दाग लग गये हैं लेकिन उन्हें कोई गम नहीं है। बड़े लोग अपने वेश-विन्यास पर ज्यादा ध्यान नहीं देते। इसी में उनका बड़प्पन है। वरे इनके बड़े भाई हाजी मतिउल्ला तो लुंगी पहनकर विदेश भी जा चुके हैं। फ्रांस और अमेरिका की यात्राएँ उन्होंने लुंगी में ही की हैं। कौन भोसड़ियावाला क्या कहेगा? विदेश जा रहे हैं तो क्या अपना तहजीबो-तमद्दुन (सभ्यता और संस्कृति) छोड़ दें? उनके घर के लड़के आज भी लुंगी पहनकर स्कूटर चलाते हैं, फिल्म देखते हैं, सारनाथ घूमते हैं।

रिक्शा अचानक रुक गया। चैन उतर गयी थी। रिक्शेवाले ने चैन चढ़ायी और फिर चल पड़ा।

सड़क बेहद खराब थी। जगह-जगह गिट्टियाँ निकल आयी थीं और गड्ढे बन गये थे। जब किसी गड्ढे में रिक्शे का पहिया पड़ता तो हाजी अमीरुल्ला को लगता कि अब उलट जायेंगे और ये भयभीत हो जाते। लेकिन रिक्शा फिर संभल जाता। वे फिर मुतमइन हो जाते और सोचने लगते।

रेशम बहुत महंगा हो गया है। कारोबार कैसे चलेगा? जब से हाजी अमीरुल्ला ने अपना कारोबार बढ़ाया है तब से बस यही एक चिन्ता उन्हें खाये जा रही है कि कारोबार कैसे चलेगा?

हाजी अमीरुल्ला ने करघों का काम अब कम कर दिया है और उनके स्थान पर पावरलूम्स बैठा लिये हैं। 'सोसायटी' को सरकार से जो सत्तर हजार रुपये मिले थे, हाजी साहब ने उनका सदुपयोग पावरलूम्स बैठाने में ही किया है। हालाँकि लतीफ-वतीफ ने थोड़ी चूँ-चपड़ की थी, मगर शरफुद्दीनवा ने ऐसा भभका दिया कि एक ही झटके में ग्यामोश हो गये। फिर किसी की हिम्मत नहीं पड़ी। पावरलूम लग जाने से बड़ी आनानी हो गयी है। यही नहीं, अब इस कोआपरेटिव सोसायटी के माध्यम से चूँकि उनका माल सीधे एक्सपोर्ट होने लगा है, इसलिए मान भी ज्यादा तैयार कराना पड़ता है। वैसे एक साड़ी को एक बुनकर कम-से-कम चार दिनों में तैयार करता था, अब एक पावरलूम—अगर विजली रही तो—एक दिन में चार साड़ियाँ तैयार करता है। हालाँकि इन साड़ियों में वैसी कारीगरी और नज़रानी नहीं होती, पर आमदनी ज्यादा है। 'बनारसी साड़ी' के आम घरीबदार तो होते नहीं अब—और इन साड़ियों को हर आमो-ग़्रास घरीब लेता है। लेकिन करघे पूरी तरह खत्म नहीं हुए हैं। कुछ करघे अभी भी चल रहे हैं। दूकान में हर तरह का मान होना चाहिए। बल्कि शरफुद्दीन को एक नया कारोबार भी

उन्होंने शुरू करा दिया है। वह अपने घाली वस्तु में छापे की साड़ियाँ तैयार करवाता है और अँगूठियों में लगनेवाले नगों का कारोबार भी अब शुरू करनेवाला है।

बनारस में जिधर देखिए उधर ही अब पावरलूम-ही-पावरलूम नजर आते हैं। हर छोटे-बड़े गिरस ने अपने यहाँ पावरलूम लगा रखा है। दुनिया बड़ी तेजी से तरक्की कर रही है। बुनकरों की गलियों में रात-रात-भर पावरलूम चला करते हैं। खटर खटर...खटर खटर...खटर खटर...जैसे कोई अन्तहीन रेलगाड़ी चली जा रही हो।

हाजी अमीरुल्ला के यहाँ दस पावरलूम लगे हुए हैं। हाजी मतिउल्ला, हाजी मिनिस्टर और हबीबुल्ला ने भी अपने-अपने घरों में पावरलूम बैठा लिये हैं। उधर हाजी अमीरुल्ला के भावी समझी हाजी बलीउल्ला गिरस के यहाँ तो पहले से ही कई पावरलूम थे, इधर और आ गये हैं और वे गिने-चुने रईस अंसारियों में अब अपना महत्वपूर्ण स्थान बना चुके हैं। अपने को वे अलईपुरा इलाके के लाट स्वालेह (बनारस के एक रईस अंसारी) समझते हैं। हाजी रसीद, हाजी सलामतुल्ला, हाजी नजीर और बाऊ इब्बा आदि ने भी अपने-अपने यहाँ पावरलूम बैठा लिये हैं। इस प्रकार पूरे इलाके में अब एक अन्तहीन रेलगाड़ी निरन्तर चला करती है और मुहल्लेवालों की नोद हराम किया करती है।

लेकिन हाजी अमीरुल्ला को इससे क्या सेना-देना है? उनकी तो पहली महत्वपूर्ण चिन्ता यह है कि रेशम का भाव कैसे नीचे गिरे? इसके लिए उनके सद्प्रयासों से पिछले दिनों बनारस, मऊनाथ भंजन और मुबारकपुर के अनेक बुनकरों ने हड़ताल भी कर दी थी और उनकी हालत और खस्ता हो गयी थी। लेकिन कोई खास फर्क अभी नहीं पड़ा है। इस मामले को लेकर संसद में सवाल उठाया जानेवाला था, पता नहीं क्या हुआ? अगर कारोबार ठीक-ठाक जम गया तो इस सास दो काम करने हैं। हबीबुल्ला को हज के लिए भेजना है और शरफुद्दीन का ब्याह करना है...

अभी वे कुछ और भी सोचते, लेकिन रिक्शा उनके दरवाजे पर पहुँच गया और वे उतर पड़े। उतरते वस्तु उनकी लुगी रिक्शा में कहीं फँसकर गँरे-से फट गयी। कोई बात नहीं।

घर के बच्चों ने हाजी साहब को रिक्शा से उतरते हुए देखकर थोड़ी देर तक शोर किया, फिर आगरेवाला पेठा खाकर खामोश हो गये।

हाजी साहब पछाना गये। वहाँ देर तक बैठे-बैठे कुछ सोचते रहे। फिर बाहर निकलकर उन्होंने स्नान किया और नाश्ता करके गद्दी पर आ बैठे। शरफुद्दीन ने उनके सामने कई दिन के अखबार रख दिये। 'आज', 'दैनिक जागरण' और 'कौमी एकता'।

“कमरवा कहाँ गोया वे ?”

“गंगाजी गोया है, नहाये।”

हाजी साहब अपने सवाल के उत्तर से थोड़ा असन्तुष्ट हुए और एक-एक बख्खार उठा-उठाकर मरसरी तीर पर देखने लगे। हाजी साहब को हिन्दी बहुत कम आती है, पर काम-चलाऊ पढ़-पढ़ा लेते हैं। अचानक ‘दैनिक जागरण’ में छपे एक समाचार पर उनकी दृष्टि कील की तरह गड़ गयी। वे उस समाचार को गौर के साथ अटक-अटककर पढ़ने लगे—

‘वाराणसी के रेशमी वस्त्र के बुनकरों के संकट की चर्चा’

‘नयी दिल्ली, 28 नवम्बर। केन्द्र सरकार ने स्वीकार किया है कि उत्तर प्रदेश में वाराणसी के हृण्डलूम सिल्क उद्योग को रेशमी धागों के मूल्य में हुई असाधारण वृद्धि के परिणामस्वरूप संकट का सामना करना पड़ा है। यह स्वीकारोक्ति कल लोकसभा में कांग्रेस (ई) के जैनुल बशर (गाजीपुर) के प्रश्न के उत्तर में केन्द्रीय वाणिज्य राज्यमन्त्री गुर्शोद आलम खाँ ने की है।

श्री खाँ ने बताया कि कच्चे रेशम की कीमत में अनेक कारणों से वृद्धि हुई है, जैसे एक ओर तो सूरों की स्थिति और ऊर्जा संकट की वजह से कर्नाटक में उत्पादन में कमी और दूसरी ओर कचकरघा तथा विद्युत करघा क्षेत्रों में कच्चे रेशम की मात्रा में वृद्धि वर्तमान स्थिति का सामना करने के लिए भारत सरकार ने केन्द्रीय रेशम बोर्ड के माध्यम से 250 मीट्रिक टन रेशम का आयात करने का निश्चय किया है। इसके साथ ही सम्बन्धित राज्य सरकारों के विभिन्न विकास-कार्यक्रमों के अन्तर्गत आनेवाले महीनों से ऊर्जा-संकट को कम करने तथा उत्पादन बढ़ाने के लिए कदम उठाये जा रहे हैं।

श्री खाँ ने प्रश्नकर्ता को यह भी बताया कि केन्द्र सरकार ने छठी पंचवर्षीय योजनावधि में रेशम उद्योग के विकास को प्रोत्साहन प्रदान करने हेतु उत्तर प्रदेश सरकार को नौ करोड़ रुपये की केन्द्रीय सहायता उपलब्ध कराने का निर्णय किया है।¹

हाजी साहब का दिल गुंश हो गया। भला बशर साहब ने यह प्रश्न उठाया तो संसद में। उन्हें तो नही विश्वास था कि जुलाहों के मसले को एक मिल्की उठायेगा इस तरह ! अरे मिल्कियों का क्या भरोसा ? मिल्की कहे न दिल की ! फिर जुलाहों से तो इन्हें दिली नफरत है। अरे एक जमाना था कि गांव के जुलाहे इनके यहाँ द्वारों पर चिलमें चढ़ाया करते थे और अब एक जमाना यह आ गया है कि बनारस के जुलाहे चाहे तो मिल्कियों को अपने यहाँ नौकर रख लें। भला कैसे बर्दाश्त होगा यह सब ? लेकिन भई हाँ, कहना होगा कि बशर साहब बहुत आला

1. दैनिक जागरण, 29-11-81 से साभार।

आदमी हैं।

हाजी अमीरुल्ला ने मन-ही-मन गाजीपुर के एम. पी. जैनुल वशर की तारीफ की और 'आज' के अंक देखने लगे। उन्हें 'आज' में भी इसी तरह की एक खबर मिल गयी और वे उसे भी अटक-अटककर ध्यानपूर्वक पढ़ने लगे—

'बुनकरो की दयनीय स्थिति की राज्यसभा में चर्चा'

'नयी दिल्ली, 2 दिसम्बर ! भारतीय जनता पार्टी के सदस्य श्री बलराज मिश्र ने आज राज्य सभा में विशेष उल्लेख नियम के अन्तर्गत वाराणसी, मुबारकपुर तथा आसपास के लगभग साठे पाँच लाख बुनकरों की दयनीय स्थिति पर सरकार का ध्यान आकृष्ट करते हुए अनुरोध किया कि रेशमी सिल्क धागे के मूल्यों में बेतहाशा वृद्धि होने के कारण इस क्षेत्र के साठ हजार हथकरघों पर प्रभाव पड़ा है।

श्री मिश्र ने कहा कि पिछले मास पाँच लाख बुनकरों ने हड़ताल की थी, जिसके कारण उनके सामने जीवन-यापन की समस्याएँ गम्भीर हो गयी हैं। यह स्थिति रेशमी सिल्क धागे का मूल्य एकाएक साठ रुपये प्रति किलोग्राम से बढ़कर आठ सौ पचास रुपये से लेकर नौ सौ रुपये तक हो जाने के कारण हुई।

उन्होंने कहा कि कर्नाटक राज्य से रेशमी सिल्क यार्न की खरीद होती थी तथा जिसका क्रय-विक्रय निर्धारित डिपो के माध्यम से होता था, जिसके कारण बुनकरों को किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती थी, किन्तु सरकार ने इस समय एकाधिकार वादी मनोवृत्ति से प्रेरित होकर नीलामी-प्रणाली के माध्यम से कर्नाटक में रेशम खरीदना शुरू कर दिया।

कर्नाटक में रेशम का सर्वाधिक उत्पादन होने के कारण सरकार ने उक्त तरीका अपनाया, जिसके कारण कुछ पूंजीपतियों ने रेशम खरीदकर इकट्ठा कर रखा है। परिणामस्वरूप इसके मूल्य में वृद्धि हुई है।¹

समाचार पढ़कर हाजी अमीरुल्ला प्रसन्न हुए। पक्ष और विपक्ष दोनों ओर से सबाल उठ रहे हैं, जल्दी ही इसका फायदा होगा—उन्होंने सोचा, भाग्यवस्तु हुए, फिर गद्दी से उठकर ऊपर गये और तैयार होकर सेठ गजाधर प्रसाद के यहाँ जाने के लिए सीढ़ियाँ उतरने लगे।

1. 'आज' 3-12-81 से साभार।

लतीफ साड़ी की पेटो दबाये गोलघर की ओर भागा जा रहा है। इस बार बहुत दिनों के बाद उसका रेजा पुजा है। बीच में पेचिंग पड़ने लगने से सारा काम ही टप पड़ गया था। जैसे ही करघे पर बैठता, पेट में बुरी तरह ऐंठन शुरू हो जाती और उठकर पाखाने की ओर भागा जाता। दिन में दस-दस, बारह-बारह टट्टियां। घिरला अस्पतालवाले बंदगी की दवा खायी नव जाकर ठीक हुआ। लेकिन कमजोरी अब भी है। शरीर बुरी तरह टूट गया है।

इस बीच काल भी काफी हो गया है। उल्ला तानीवाले को तानी का पूरा पैसा चुकाना है, वरना अब वे तानी नहीं देंगे। तानी भी बेहद महंगी हो गयी है। सुनते हैं यह महंगायी कर्नाटक नामक किसी जगह से चली है और यहां बनारस आते-आते बहुत खतरनाक हो गयी है। जब से रेशम महंगा हुआ है, लतीफ जैसे लोगों की साड़ियां ये गिरस्ता लोग रारते में ही अब नहीं क्षपटते और मजबूरन इन्हें गोलघर के नेठों की मरण में जाना पड़ता है।

लतीफ जब गोलघर पहुँचा तो वहाँ चहल-पहल कुछ कम थी। गद्दियों पर पहले जैसी भीड़-भाड़ नहीं थी और धोती-कुर्ता पहने, गोल टोपी लगाये, मुँह में पान भरे, अँगुलियों में सोने की नगदार अँगूठियां पहने से लोग मायूस-से बैठे थे। बाजार मन्दा है। इतनी महंगी साड़ियां कौन खरीदेगा ?

लेकिन दलालों के लिए क्या मन्दा क्या तेजी ? अगर एक भी मुर्गा फँस गया तो दाल-रोटी-भर का कमा ही लेंगे। गोलघर की रीशन गलियों में कई-कई दलाल खड़े थे और उनमें से कुछ लोग बाहर खड़े-खड़े ही गद्दी पर बैठे सेठों से 'खरे' और 'व्यवहार' में बातें कर रहे थे।

लतीफ नेठ गजाधर प्रसाद की गद्दी पर जाकर बाहर ही खड़ा हो गया। उस वक़्त गद्दी पर सेठ गजाधर प्रसाद स्वयं बैठे हुए थे और पेटो से कुछ कागज-पत्र निकालकर उन्हें ध्यानपूर्वक पढ़ रहे थे। बगल में उनके सुपुत्र श्री कामता प्रसाद बैठे हुए थे और अत्यन्त सावधानी के साथ साड़ियां लपेट रहे थे।

लतीफ को किसी ने लिपट नहीं दी, पर वह गद्दी पर एक किनारे सिकुड़कर बैठ गया और सेठ गजाधर प्रसाद के सामने अपनी पेटो धीरे-से सरका दी।

सेठ गजाधर प्रसाद ने लतीफ की पेटो को छुआ भी नहीं, वे अपने कागज-पत्रों को पढ़ने में ही लीन रहे।

थोड़ी देर के बाद सेठ कामता प्रसादजी ने उसकी पेटो खोली और उसमें से साड़ी निकालकर उसे घोल-गालकर ध्यानपूर्वक देखने लगे। फिर उन्होंने बिल्कुल नेताओंवाले अन्दाज में 'अच्छी साड़ी क्या होती है' विषय पर एक असंक्षिप्त भाषण-

मा दिया और एहसान करने के मूढ़ में उस साड़ी को रख दिया ।

हालांकि लतीफ जानता था कि इसके पैसे तो एक हफ्ते बाद ही मिलेंगे, पर थोड़ी देर तक वह इस आशा में बैठा रहा कि शायद सेठजी की कृपा हो जाय और नकदी ही दे दें ।

लेकिन कामता प्रसाद ने पेटो से एक चेकबुक निकाली और लतीफ के सामने एक चेक बढ़ा दिया ।

लतीफ को समझ में नहीं आया कि इस कागज का आखिर वह क्या करेगा, अतः वह सेठ कामता प्रसाद की ओर खासी-खासी आँखों से देखने लगा ।

तब कामता प्रसादजी ने उसे समझाया कि यह चेक है । किसी बैंक में दस-पाँच रुपया देकर एक खाता खोल लो । फिर उस खाते में इस चेक को जमा करने से तुम्हें इस साड़ी के पैसे मिल जायेंगे । इसमें सब सिखा है । लेकिन इस चेक को अभी न जमा करना, क्योंकि यह ऐसा चेक है जिसका पैमा तुम्हें एक महीने बाद ही मिल सकता है । इसलिए इसे एक महीने बाद ही बैंक में जमा करना ।

लतीफ का शरीर जैसे मुन्न हो गया । थोड़ी देर के लिए उसने चाहा कि अपनी साड़ी वापस माँग ले, लेकिन अब तो चेक कट चुका था । अब तो वह एक महीने की कैद में फँस चुका था । अब कोई रास्ता नहीं था ।

वह थोड़ी देर तक उस चेक को इस प्रकार देखता रहा, जैसे प्यार के साथ दिये गये उत्तरे को कोई जंगली बन्दर देखता है । फिर उठा और बाहर निकलकर सड़क पर आ गया ।

एक महीने तक वह क्या करेगा ?

यह प्रश्न उसके भीतर फूटे हुए कनस्तर की तरह बजने लगा और वह किसी लँगड़े गधे की तरह सड़क पर धम-धमकर चलने लगा ।

शाम हो रही थी और वातावरण में एक अजीब-सी गन्ध भरती जा रही थी । मन्दिरों के कँगुरे सूर्य की आखिरी किरणों में इस प्रकार धमक रहे थे जैसे उन पर अबीर पोत दिया गया हो ।

लतीफ ने अपनी जेब टटोली । उसमें ढाई रुपये पड़े हुए थे । वह घर न जाकर सरैयाँ की ओर चल पड़ा ।

आज वह ताड़ी पियेगा, चाहे कुछ हो जाय ।

रऊफ चचा ने बानी पर बिनना छोड़ दिया है।

हाजी अमीरुल्ला की सूरत से ही उन्हें नफरत हो गयी है। अब वे नजीर गिरस के यहाँ से रेशम उधार लाते हैं और उन्हीं के लिए बिक्री पर बिनते हैं। अल्लाफ ने भी हाजी रसीद का काम छोड़ दिया है। वह भी अब नजीर गिरस के यहाँ ही बिन रहा है। एक रोज़ बता रहा था कि सुबरात के बिहान भये हाजी रसीद ने उनका खूब झगड़ा हुआ और उसने साफ कह दिया कि तोरा एक्को पइसा हमरे लंग नहिने, जाव जो करत बन कर लेव। लेकिन ये नजीर गिरस भी कम नहीं है। जैसे अमीरुल्ला वैसे ही रसीद और वैसे ही नजीर। एक ही यैली के चट्टे-बट्टे...

कल रऊफ चचा साड़ी लेकर हाजी नजीर के यहाँ गये थे तो उन्होंने पैसे की जगह एक महीने बाद भुननेवाला चेक थमा दिया था। कोठीवाले तो चेक देकर फुसंत पा जाते हैं और यहाँ हालत ये है कि बनिये की उधारी बढ़ती ही जा रही है। जब तक चेक भुनता है तब तक कर्ज का पहाड़ इतना ऊँचा हो गया होता है कि उससे निजात पाना अमम्भव दिखायी पड़ता है। इधर नजबुनिया के ब्याह के बाद ने बीबी भी बीमार रहने लगी है। दरअसल काम का भार बढ़ गया है और आराम नाम की चीज़ जिन्दगी में रह ही नहीं गयी है। इस उम्र में बेचारी को घर के सारे काम करने पड़ रहे हैं। कतान फेरना, नरी-डोटा भरना, हाँड़ी-चूली करना—गभी कुछ। नजबुनिया यी तो बड़ा सहारा था, लेकिन लड़की जात भला कब तक घर में रखी जा सकती है? हालाँकि ऐसे अनेक लोग हैं जो ब्याह के बाद भी लड़कियों को नइहर में बुला-बुलाकर रखते हैं, ताकि उनसे नरी-डोटा भरवा सकें, कतान फेरवा सकें और हाँड़ी-चूनी करवा सकें। कुछ लोग तो लड़कियों के तलाक भी ले लेते हैं। लेकिन रऊफ चचा उन जुलाहों में से नहीं हैं जो जिन्दगी को करघा बना डालना चाहते हैं। हालाँकि उनकी न कोई महत्वाकांक्षा है और न ही वे खुद को कोई विशिष्ट व्यक्ति समझते हैं, लेकिन अपनी जिन्दगी को वे पूरी सफाई के साथ जीना चाहते हैं।

रऊफ चचा गोल गड्डा की ओर से लौट रहे हैं। रास्ते में लतीफ मिला था—नगे में धुत्त। उन्होंने कुछ कहना उचित नहीं समझा। क्या फायदा? यह टके-भर का मजदूर अपना ग़म गलत करने के लिए ताड़ी नहीं पियेगा तो क्या करेगा?

वे सोचते हैं और चलते रहते हैं। सिर झुकाए एक-एक कदम इस तरह रखते हुए जैसे हर कदम की अपनी अहमियत है, कोई भी कदम फालतू नहीं है।

वे मतीन के घर के पास पहुँचकर थड़े हो जाते हैं।

“एकबाल ! ऐ एकबाल !”

रऊफ चचा मतीन के लड़के को पुकारते हैं तो झरोखे में से अलीमुन का चेहरा झाँकता हुआ दिखायी पड़ता है। फिर सीढ़ियों पर किसी के उतरने की आवाज आती है और थोड़ी ही देर बाद एकबाल के हाथ वे ऊपर पहुँच जाते हैं।

जब से मतीन मऊ गया, कोई खोज-ख़बर नहीं आयी। अल्ताफ गया भी मऊ तो बाला-बाला लौट आया। वहाँ से एक आदमी कुछ पैसे लेकर आया तो स्कूल में एकबाल को देकर चला गया, हाल-चास का पता नहीं चला। न जाने कैसे हैं वहाँ ? कहाँ रहते होंगे ? कैसे पकाते-खाते होंगे ? पता नहीं, मन लगता होगा कि नहीं...?

रऊफ चचा के सामने अपना दिमाग खोलते-खोलते अलीमुन फूट पड़ती है। एकबाल भी सिसकने लगता है। रऊफ चचा हिस उठते हैं—जैसे पानी के कटाव से नदी किनारे का वृक्ष हिलने लगता है।

वे बहुत देर तक गुमसुम बैठे रहते हैं, फिर उन्हें ढाँढस बँधाकर खड़े हो जाते हैं। इससे क्यादा और क्या कर सकते हैं वे ? क्या किसी प्रकार की नसीहत का सामा हो सकता है इन्हें ?

रऊफ चचा लड़क पर आकर थोड़ी देर तक कुछ सोचते रहते हैं, फिर अपनी लम्बी सफ़ेद दाढ़ी को दाहिने हाथ से सहलाते हुए तेज-तेज आगे बढ़ जाते हैं। बुढ़िया इन्तजार कर रही होगी।

4

अल्ताफ अभी सो रहा था और उसकी बीबी सोच ही रही थी कि जाय बनाकर बउबा के अम्मा को जगा दे, कि हाजी नजीर दरवाजे पर हाज़िर हो गये।

“करे न्बुनी, अल्ताफ़वा का करते ? ओके भेज देवे त !”

उन्होंने बाहर से ही अल्ताफ की बीबी को यह आदेश दिया और विदेशी लाइटर से छाकी सिगरेट (बीड़ी) सुलगाकर खड़े-खड़े धुआँ छोड़ने लगे।

हब्बुन अपने शहर को झकझोर-झकझोरकर जगाने लगी, “ए हो बउबा के अम्मा, उट्ठो, देखो हाजी चचा बुलाय रहेंने। उट्ठो !” और उठते ही अल्ताफ बिफर उठा, “तँ का हरदम चिल्लावा करेती रे, बुरचोदी के सोये के भी नांही मिलेते इ घर में। का कहेती बोल ?”

"हम का कहीला, जाव देखो, नीचे गिरस खड़े हैं, उनही से पूछो।"

गिरस का नाम सुनते ही अल्ताफ के बदन में जैसे आग लग गयी। गिरस न हो गये झट्टहियों के अल्ला मियाँ हो गये ! जब देखो हाजिर ! अरे कर्ज खाया है तो क्या भरेंगे नहीं ? भरना तो हमीं को है। क्या कोई दूसरा भोसड़ीवाला आकर भर देगा ! मगर नहीं, इन्हें भला सबुर होने लगा ? इनकी कोठी में जाकर रात-दिन करघे में जुते रहो तो इन्हें चैन मिले।

वह आँख मलता हुआ मन-ही-मन हाजी नजीर को डेढ़ हजार गालियाँ बकता हुआ और बोड़ी सुलगाता हुआ नीचे उतरा तो हाजी नजीर उसी तरह खड़े थे, जैसे कभी हाजी रसीद इस दरवाजे पर खड़े होते थे। वही मगरमच्छों-जैसी अदा और वही भेड़ियों-जैसा भाव...

"का है गिरस ?"

"अभी पूछे तो कि का है गिरस। सड़िया बिनि हो के नाहीं ? आज तू सफा बता दो हम्म।" गिरस गरजे।

अल्ताफ ने यह गजेंना सुनी और उसकी ऊँघ खरम हो गयी। बोला, "हमरा जब मन होइए तब बिनेगे। कर्जा पाये हैं मगर गुलामी नाहीं लिखाये हैं। समझे हाई साय !"

और इतना कहकर अल्ताफ वापस मुड़ गया। हाजी नजीर टुकुर-टुकुर उसकी फड़फड़ाती हुई लुंगी को देखते रहे।

5

इस चीन शहर यनारस, मुला हिन्दुस्तान और पूरे वैनल अकवाम (अन्तर्राष्ट्रीय परिवेश) में अनेक रद्दीबदल हुए। अनेक जदीदियतें (आधुनिकताएँ) पैदा हुईं, पर एक लौअर-मिडिल क्लास जुलाहे का दिल नहीं बदला।

हजियावा ने सारे आम एलान कर दिया कि न तो वह अपने माँ-बाप से कोई ताल्लुक रोगेगा और न हाजी अमीरुल्ला के बगीचे से अपना सम्बन्ध विच्छेद करेगा।

यह जनमटिरा आदमी जरा-सी बात को लेकर कई बरस हुए, अपने बाप से नाराज हो गया है और अलग रहने लगा है। दरअसल रुकफ चचा उन दिनों हाल ही में इस काबिल हुए थे कि अपने गिरस की मजदूरी छोड़कर चानी पर बिन सकें, और वे चाहते थे कि उनका एकमात्र लायक लड़का मोहम्मद हनीफ अंसारी उनके

काम में मदद करे। रऊफ चचा सोच रहे थे कि सड़का दिनभरों करेगा और वे गिरस के यहाँ से रेशम लाने तथा साड़ी पहुँचाने का काम कर दिया करेंगे। इसके अलावा उनकी इच्छा थी कि खाती बक्ल में वे हाजी बत्तोइस्ता के उरदोडीदाने कारखाने में जाकर अंग्रेजों के लिए बैच बनाया करेंगे।

लेकिन मोहम्मद हनीफ अंसारी को यह बात मंजूर नहीं हुई। उसने सोचा, यह जो अब्दुल रऊफ अंसारी नामक बूढ़ा है, यह बहुत चात्ताक है। यह खुद तो मौज उड़ाना चाहता है और अपने बेटे के पाँव करघे में डाल देना चाहता है। यह नहीं हो सकता। और उसने साफ-साफ कह दिया कि वह अपना कारोबार अलग से शुरू करना चाहता है और एक हफ्ते के अन्दर-अन्दर उसने सारा जुगाड़ फिट कर लिया।

उस वक्त माँ ने कुछ कटु वचन जरूर बोले होंगे और नयी-नयी आमी बहू ने उन वचनों को जरूर सुना होगा। अतः अलगउम्मी कुछ इस किस्म की हुई कि लोगों को दुरमनों के इस कथन पर बिश्वास करना पड़ा कि जुलाहा अपने बाप का भी सगा नहीं होता।

खैर...उम बहुत हाजी अमीइस्ता ने हनिफवा की बड़ी मदद की। रुपया दिया, करघा गड़वाया और उनके पुष्प-प्रताप से धीरे-धीरे यह एक छोटा-मोटा गिरस बन बैठा। लेकिन यह सहायता एक तरफ नहीं हुई। हनिफवा का दिमाग बचपन में ही बहुत चतता था सो उसका इसने उन दिनों फायदा उठाया और गोलघर के एक दलाल को फाँसकर बाहर के कई-कई थोक व्यापारियों को हाजी अमीइस्ता की गद्दी में लाकर जोड़ दिया। नतीजा यह हुआ कि हाजी साहब धीरे-धीरे 'बड़े गिरस' में बदलते चले गये और हनिफवा उनके बगीचे का एक प्रमुख 'नवरत्न' बन बैठा।

बगीचे में आज 'सैन' है। हाजी अमीइस्ता के सभी मुसाहिब जुटे हुए हैं और हा-हा हू-हू का बाजार गर्म है। बाड़े से पड़वे का गोश्त आया है जो एक बड़े-से पतिले में इंटों के चूल्हे पर पक रहा है। दूधियाजा बन रहा है। इसके बाद बनेगा पुलाव। फिर इलायचीवाली स्पेशल रोटी और उसके बाद चावल की खोर। खाना पकाने के कार्यक्रम में चंद स्पेशलिस्ट जुटे हुए हैं और बाकी लोग मनोरंजन कर रहे हैं। कुछ लोग शहतूत के नीचे चटाई बिछाकर ताण खेल रहे हैं। गन, जिसमें अपने ही पाटेंनर को बिस्वाने में रस निया जाता है। शरफुद्दीन और हनीफ शतरंज खेल रहे हैं। हनीफ आज काले मोहरों से खेल रहा है। शरफुद्दीन का एक घोड़ा मर चुका है और दूसरा फँसा हुआ है। हाजी अमीइस्ता निखरी चारपाई पर बैठे-बैठे यह दृश्य देख रहे हैं। उन्हें शतरंज का बड़ा शौक रहा है किसी जमाने में, लेकिन

जब देगकर ही अपना जीक मिटा लिया करते हैं। शरफुद्दीन अपना घोड़ा बचाने के लिए परेशान है, लेकिन कोई युक्ति नहीं सूझ रही है। हाजी साहब मुस्कराते हैं और इंगारों-ही-इंगारों में उसे एक ऐसी चाल बताते हैं कि हनीफ का फर्जी ज़द में आ जाता है।

“अब बोलो?” वे चहक उठते हैं।

शरफुद्दीन का चेहरा खिल उठता है। उसे अपने बाप पर गर्व होता है। शतरंज हो चाहे जिन्दगी, चाल का हमेशा वही तरीका सही होता है जो सामने-वाले को साजवाब कर दे।

“का म्यां गोसवा पक गोवा के नाहीं?”

हाजी मिनिस्टर मल्लाहिन की कोठरी से निकलकर झटके से इधर आये और धातं ही उन्होंने एक सवाल दाग दिया। इस पर कुछ लोगों की इच्छा हुई कि उनका घोड़ा मझाक बनाया जाय, पर हाजी अमीरुल्ला के लिहाज से वे खामोश रहे। हाजी मिनिस्टर ने जब देखा कि उनके सवाल का कोई जवाब नहीं मिला तब वे खुद आगे बढ़कर चूल्हे के पास बैठ गये और ढपना उतारकर पतीले में से एक बोटी गोश्त निकालकर उँगलियों से उसे टोने लगे। जब उन्हें लग गया कि बोटी कुछ गल चुकी है तो पहले उन्होंने फूँक-फूँककर उसे ठण्डा किया, फिर मुँह में डाल-कर गड़े हो गये।

हाजी मिनिस्टर शहतूत के पास गड़े-गड़े देर तक पड़वे की बोटी चबाते रहे और कुएँ के चबूतरे पर नहाती हुई मल्लाहिन को देखते रहे।

हाजी अमीरुल्ला उठे और चण्णल पहनकर पापाने की ओर चल पड़े।

6

हनिफया ने लाय कोशिश की, पर उसके बेटे बिराहिम के साथ अपनी विटिया अख्तर्गनया का व्याह करने के लिए लतीफ तैयार नहीं हुआ और उसका व्याह एक अन्य लड़के से कर दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि बिराहिम ने काम-धन्धा सब छोड़ दिया और बाप से बगैर छिपाये ताड़ के बगीचों की ओर जाने लगा। अम्मा से पैसे झटककर दिन में दो शो सिनेमा देखता—एक शो 'जमुना' में और

दूसरा 'चित्रा' में— और शाम को ताड़ी पीता। सिगरेट-पान अलग से। बाकी वक्त में वह चोराहे पर या तो पड़ा रहता या किसी चबूतरे पर बैठकर जिस किसी को भड़ी-भड़ी गालियाँ दिया करता। कभी-कभी वह लतिफवा के घर की ओर भी चला जाया करता, क्योंकि अन्नरनिया शादी के बाद भी प्रायः नइहर में ही रहती थी और बिराहिम का ऐसा विचार था कि अन्नरनिया उसे देखने के लिए बिम्बी-न-किंगी दिन अपनी गिड़की से जरूर झाँकेगी।

लेकिन अन्नरनिया के इतने काम थे कि बिराहिम के बारे में वह सोचती भी नहीं थी। दिन-दिन-भर उस कतान फेरना पड़ता था या नरी-डोटा के काम में लगे रहना होता था। उसकी नयी अम्माँ रेहाना का हास्य था कि दिन-ब-दिन वह कमजोर होती जा रही थी और हबुआना भी उसका अब बहुत ज्यादा बढ़ गया था। लतिफवा उसे अब बुरी तरह पीटने भी लगा था।

एक दिन बाप की चोरी से अन्नरनिया अपनी अम्माँ के घर चली गयी थी। वहाँ उसे देखते ही उसकी नानी और कमरून इस क्रूर रोने लगी थी कि अन्नरनिया का दिल धराँ उठा था; अब वह नन्ही-सी बच्ची नहीं थी, बल्कि एक विवाहिता किशोरी थी। अब वह औरत के दर्द को भली-भाँति समझने लगी थी और अपनी माँ की हालत उससे देखी नहीं जाती थी। लेकिन वह अवश थी। हर तरह से कमजोर और बे-चारा।

अगले दिन लतिफवा को इस बात का पता चल गया था कि अन्नरनिया अपनी माँ से मिलने गयी थी और उसने फौरन उसे हुषम दिया था कि वह अपनी समुदाय चली जाय। वहाँ रहने का कोई काम नहीं है।

अन्नरनिया नकाब ओढ़े, एक हाथ में प्लास्टिक की डोल्बो लिये और दूसरे हाथ से नकाब का पर्दा धामे चली जा रही थी और सोचे जा रही थी। अपनी माँ के बारे में, अपने बारे में, बाप के बारे में, अपनी नयी माँ के बारे में और अपने छोटे भाई-बहिन के बारे में, अपने नइहर और अपनी ननुपान के बारे में—कहीं भी, किसी को भी सुकून नहीं था। सब एक जैसी बिन्दुनी जो रहे थे—घुटन और बदबू से भरी हुई।

“कहाँ जाती रे?”

अन्नरनिया अचानक चौंकी। पीछे ने टेब-नेड चनती हुई उसकी सहेली, फल्लू की बिटिया बशिरनी उसकी बदन ने बाँ रनी थी और साय-साय चतने सरी थी।

“जाइला अपनी ससरार।” अन्नरनिया उसे सब के साथ बताती है और नकाब उलट लेती है।

"तोरी समरिया कहाँ है?"

"रसूलपुरा, फद्दन कीयें।"

"तोरे अदमी क का नांव है?"

"भक्क, हम नाहीं बतइवा।"

और अक्करनिया खिलखिलाकर हँस पड़ती है।

मन का सारा गुबार क्षण-भर में धुल जाता है।

7

पीली कोठी बम स्टेसन में बढ़ा कीचड़ हो गया है। चाय, मिठाई, पान और अन्य प्रकार की दूकानों में बहकर आनेवाला पानी सड़क पर जमा हो जाता है और बनों के पहियों में लगी हुई धूल-मिट्टी से मिलकर वह कीचड़ का रूप धारण कर नेता है। मिर्जापुर और गाजीपुर की बसें जब इस कीचड़ में से गुजरती हैं तो धरती पर इस प्रकार के निगान बन जाते हैं मानो महाभारत के युद्ध में खून के दलदल में ने अर्जुन और कर्ण के रथ गुजरे हों। कीचड़ पर पड़ी हुई पान की पीकें और कफ़ की प्यारें इसके सौन्दर्य में चार चांद लगा देती हैं।

मिर्जापुरवाली बस इस मुद्रा में कि अब वह एक मिनट भी यहाँ नहीं रुकेगी, स्टार्ट होकर भर-भर कर रही है और गन्दा धुआँ फेंक रही है। लेकिन सारे यात्री जानते हैं कि यह अभी कम-से-कम आध घण्टे तक रुकेगी। यह भर-भर तो यात्रियों को बेचैन करने के लिए है, ताकि वे जल्दी-से-जल्दी इसी बस में आकर बैठ जायें, वरना पाँछे लगी हुई मेल बस के चक्कर में कई यात्री छूट सकते हैं।

बमबाले ने यात्रियों को बचक देने के उद्देश्य से सामने काँच पर 'तुफान' लिख रक्खा है—हालाँकि लोग जानते हैं कि यह 'पैसेंजर' बनकर ही जायेगी। 'तुफान' तो क्या यह 'हवा' की तरह भी नहीं चल सकती। लेकिन इस 'तुफान' शब्द में इतना आकर्षण है कि लोग उन ग्य़ारा बस में चढ़ने के लिए अपने कीमती जूतों को कीचड़ में सानते हुए दीड़े वा रहे हैं।

एक नाटा-ना आदमी—जिसके बदन पर राकी ड्रेस है, गन्दा और कालिख लगा हुआ—पटरी पर गड़ा चिल्ला रहा है—

"चलो भाई तुफान से नरायनपुर, चुनार, मिर्जापुर, तुफान से चलो तुफान से..."

दस आदमी को इस चिल्लाने की एवज में पचीस पैसे मिलेंगे। प्रति बस पचीस पैसे के हिसाब से यह चिल्लाता है। यही इसकी रोजी है। लेकिन यह बहुत बड़ी गलतफहमी है कि लोग इस आदमी की वजह से इन बसों में यात्रा करते हैं। दरअसल यात्रा करना इन लोगों की मजबूरी है। ये जितने भी लोग इस वक्त पीली कोठी के इस दरवाजे में खड़े नजर आ रहे हैं, ये ऐसे लोग हैं जो बिना यात्रा किये मान नहीं सकते।

इसमें से ज्यादातर लोग बनारस के जुलाहे हैं और ये चुनार जा रहे हैं। चुनार में आज हजरत कासिम मुलेमानी की दरगाह का उर्स है। झुण्ड-की-झुण्ड स्त्रियाँ-मर्द और बच्चे पीली कोठी की ओर भागे आ रहे हैं और मिर्जापुरवासी बस में हँसे जा रहे हैं। सबके दिल में बस एक ही अरमान है—दरगाह की जियारत। लेकिन युवकों के दिलों में इसके अलावा भी कुछ है। वे जियारत कम करेंगे, मेला ज्यादा घूमेंगे। 'अउर टैम निकाल के किलाविला भी घूमा जइए बे !'

हनिफा की बीबी महसून अपने बारह वर्षीय बेटे के साथ जब बस में घुसकर बैठी तो उसने देखा कि कण्डक्टर एक आदमी को डाँट रहा है। दरअसल उस आदमी के साथ भी एक लड़का था और लड़के का टिकट आदमी ने नहीं लिया था। कण्डक्टर को जब यह बात मालूम हुई तो वह बिगड़ उठा। महसून यह दृश्य देखकर सतकं हो गयी। उसने घर से ही तय कर लिया है कि जविदबा का टिकट नहीं लेना है। पैसा बचाने के उद्देश्य से ही वह बिराहिम और बिबिया को साथ में नहीं लायी। उनका टिकट तो लगना ही था। लेकिन अगर छतकी जितने लड़कों का टिकट भी लगने लगे तब तो फिर इस मुल्क में जीना ही मुश्किल हो जायेगा। अरे यही पैसा बचेगा तो चुनार से कोई वर्तन-वर्तन खरीद लेगी वह। वहाँ चुनारी मिट्टी के बर्तन—खासकर अचार रखने के बोरियाम—बहुत सस्ते मिलते हैं।

और महसून ने फौरन अपने जविदबा को पैरो के पास अपने नकाब के भीतर छिपा लिया। अपनी बिरादरी की एक औरत की यह चालाकी देखकर चुनार-यात्रा पर निकले लगभग सभी मर्द खुश हुए। लेकिन इ जविदबा हुरामी का बार-बार अपनी झुण्डों निकालने की कोशिश में लगा रहा। वो तो गनीमत रही कि कण्डक्टर जिस वक्त पास से गुजरा, महसून ने उसे दोनों पाँवों के बीच इस तरह दबा लिया कि हिलने-डुलने में वह असमर्थ हो गया, वरना बिरादरी की सारी इज्जत मिट्टी में मिल जाती।

बस चली तो भीतर एक अजीब तरह का चें-चें, पें-पें शुरू हो गया।

चुनार का मेला दीत गया है और शादी-व्याह शुरू हो गये हैं। शरफुद्दीन को शादी भी हो रही है। शरफुद्दीनवा ने हालांकि प्रेम-विवाह करना चाहा था और इसके लिए उसने बी. एच. यू. की एक लड़की देख भी रखी थी, पर हाजी अमीरुल्ला ने उसके प्रस्ताव को ठुकरा दिया। 'हाजी वलिउल्ला क्या सोचेंगे म्यां?' उन्होंने लोगों से कहा और जल्दी ही दिन-तारीख़ मुकर्रर करके शादी का कार्यक्रम तय कर दिया।

चूँकि शरफुद्दीनवा किसी मजदूर-फरहाद किस्म का प्रेमी नहीं था और वह बी. एच. यू. वाली लड़की भी किसी लैला-घीरी किस्म की प्रेमिका नहीं थी, इसलिए इस मामले को लेकर कोई क्रान्तिकारी घटना नहीं घटी और जनाब शरफुद्दीन अंसारी साहब ने अपना सारा ध्यान अब इन सवालों पर केन्द्रित कर दिया कि शादी के लिए किस रंग का सूट बनवाया जाय? (शेरवानी-वेरवानी के पहिनिए म्यां!) अपने किस-किस फ्रेंड को इनवाइट किया जाय? कोई किस फ्लाटमक डंग से छपवाया जाय? फोटो के लिए पाकिस्तानवाला रंगीन कैमरा किस फ्रेंड से माँगा जाय? और सुहागरात के रोज़ किस फिल्मी हीरो के अन्दाज़ में वलिउल्ला की बिटिया पहिनवा का घूँघट उठाया जाय? इत्यादि।

सुबह का वक़्त है। मुहल्ले में दावत जा रही है। इस काम के लिए चार-पाँच आदमियों की एक टोली हाजी साहब के घर से निकलती है और चल पड़ती है। हनिफया सबसे आगे-आगे चल रहा है। दावतवाला चिट्ठा, जिसमें लोगों के नाम दर्ज हैं, उसी के हाथ में है। इसी चिट्ठे के अनुसार दावत देनी है।

टोली एक मगान के सामने रुकती है और सम्मिलित स्वर में लोग पुकारते हैं, "का मियां हो?"

भीतर करघे पर बैठा हुआ आदमी झकता है तो उससे पूछा जाता है, "हाफिजजी है?"

और तब तक हाफिजजी बाहर निकल आते हैं, सलाईवाले कुम ! बलउवा है म्यां !"

"कहाँ पा?"

"हाजी अमीरुल्ला किये का ! आज शाम के चार बजे बरात पहुँचावे के है। अठर टोनी बिदा करावे के है। अउर घर आके एक आदमी की दावत है। तइसा

छराने रक्षियो । बिना बत्ती की बरात है । सरंही ! अमिर पट्ट के फोरन निकल जइए । अच्छा चलें—”

“अरे मियाँ काहे जाए लगेव ? पनवा मंगवावा है, खाके जाओ । तड़वीवा गोवा है । बम बजते हंइए । तड़ना बइठ जाओ ।”

तब तक पान आ ही गया । लोगों ने पान खाये और चल पड़े । चलते-चलते हाफिज्जी को फिर याद दिनाया, “अच्छा चलें । देखो खयाले रक्षियो । भून मत जइयो । सलावाले कुम !”

इसी तरह घर-घर ‘बलतवा’ कहती हुई यह टोली हाजी अमीरुल्ला के समधी और कमरुद्दीन के ममुर हाजी उस्मान गिरख के घर पहुँचती है । यहाँ टोली के सबसे बुजुर्ग मज्जन आगे हो जाते हैं और पुचकारते हैं, “का मियाँ हाजी साहब हौ ?”

भीतर हाजी उस्मान साहब जमीन पर बिछे गद्दे पर बैठे हैं और सामने खड़े किसी कारीगर को कुछ समझा रहे हैं । इन्हें देखकर वे खिल उठते हैं ।

“हाँ आओ ।”

“सलावाले कुम !”

“बाने-ए-कुम अस्सलाम ! आओ मियाँ बइठो !”

बलतवा देनेवाले समधी के लिहाज में नीचे ही एक किनारे सकुचाते हुए-से बैठ गये ।

“अमाँ काहे हुवाँ बइठ गयेव । आओ-आओ इधर गदवा पर बइठो ने ।”

“अरे ठीक है, का बेजाँ है एज्जन !”

लोग शिष्टाचारबग ऐंसा कहते हैं । लेकिन हाजी साहब के बार-बार कहने पर वे गद्दे पर बैठ जाते हैं । थोड़ी देर बाद ही तामचीन को फूलदार तस्तरियों में मिठाई, नमकीन, पान इत्यादि पदार्थ आ जाते हैं और गद्दे पर सजा दिये जाते हैं ।

“सो मियाँ खाओ । गुरु करो । सो ।”

हाजी उस्मान टोली के सामने तस्तरियाँ पेश कर रहे हैं और टोली है कि समधी के लिहाज में सिकुड़ी चली जा रही है । खैर—किसी-न-किसी तरह लोग मिठाई, नमकीन बगैरह खाते हैं, फिर टोली के सबसे बुजुर्ग मज्जन अलीमुद्दीन साहब बनातवा सुनाते हैं—

“अच्छा अब बलातवा सुन लो । तोरे समधी हाजी अमीरुल्ला किये का

1. शरई, यानी शास्त्रानुसार । इस्लामी प्रतीयत के अन्तर्गत विवाहादि में बाबा बगैरह बजाने पर पावन्दी है । यहाँ उसी की ओर संकेत है ।

बल उठा है। आज शाम को चार बजे उनके लड़के की बरात निकलिये। सवेरवें से उनके लंग तुवें रहना है। सब इन्तजाम बात देखना है। अउर संझा के चार बजे बरात पहुँचावे के है। डोली बिदा करावे के है। अउर सब कोई की दावत है।”

चाहे दिन की शादी हो चाहे रात की, चाहे बड़े गिरस के यहाँ की शादी हो चाहे मामूनी मजूर के यहाँ, नसीबन बुआ हर जगह पहुँच जाती हैं। हाजी अमीरुल्ला की कोठी में, निमंजिले पर एक बड़ी-सी कोठरी में नसीबन बुआ ढोलक लेकर बैठी हैं और गा रही हैं—

दादा मनावैं ठण्डे जूड़ हो हरियाला बन्ना

दादी मनावैं अल्ला पीर हो हरियाला बन्ना

“तोरे लंग एकठे गाना है का बुआ ?” कोई लड़की टोकती है तो बुआ फौरन दूसरा गीत शुरू कर देती है—

घोड़े के आगे घुँघरा बाजे

सिर सोहे टैल बेल का सेहरा

मकना के आगे मोरला नाचे रे

कमर में है गुजराती पटुका

झल्लर के आगे मोरला नाचे रे

पाँव सो है मखमल का जूता

छत्तुर के आगे मोरला नाचे रे !

तब तक बाहर चिल्लहरो शुरू हो जाता है। लोग एक-दूसरे को पुकारने लगते हैं। असिर का वक्त हो रहा है। बारात की तैयारी अब शुरू कर देनी चाहिए। मुहल्ले के मजहूर इन्तजामकार अलीमुद्दीन गिरस परेशान हैं।

“चलो लड़कन, ए जमिलवा, अगाँ चलो सब कोई, दड़ी चालनी (दरी-चाँदनी) कहाँ रखी है, लीयाओ, बीछाओ।”

फिर दूसरी ओर घूमकर, “क मा दमाद के पगड़ी बान्हें क सनेमा गोवा ने ?”

“हाँ हाँ गोवा, बस अब उठते होइएँ।”

हाजी अमीरुल्ला पास से गुजरते हुए इन्तजामकार अलीमुद्दीन गिरस को आश्चर्य करते हैं और आगे बढ़ जाते हैं। वे बहुत व्यस्त हैं। कई चड़े-बड़े लोग आये हैं। रययाया बैंक के मनीजर, कलक्टर के पेशकार—इन्हीं से कहकर इमरजेंसी में उन्होंने हाजी रहमतुल्ला को डी. आई. आर. में बन्द करवाया था। पाना आदमपुरा के नायब दरोगा, अंसारी स्कूल के पुनसपल (प्रिंसिपल) साहब आदि बड़े-बड़े लोगों की ग्रातिर करने में वे व्यस्त हैं।

कमरुद्दीन फोटो बगैरह का इन्तजाम देख रहा है और साथ ही अपने तथा शरफुद्दीन के दोस्तों की खातिर में लगा हुआ है। दोस्तों में बहस छिड़ी हुई है कि शरफुद्दीन को किस तरह दूल्हा बनाया जाय ? कमरुद्दीन की राय है कि जैसे सऊदी अरब के लोग सिर पर काली पट्टी से सफेद दुपट्टा बाँधते हैं, उसी तरह शरफुद्दीन के सिर को भी सफेद दुपट्टे और काली पट्टी से सऊदी अरब टाइप का बनाया जाय। उसके बाद फिर सेहरा। एकदम नयी चोज। और घोड़ी देर के बाद-विवाद के बाद यह बात मान ली जाती है, लेकिन शरफुद्दीन की यह बात नहीं स्वीकार की जाती कि सूट के ऊपर से वह चादर नहीं ओढ़ेगा। यह तो विरादरी का रिवाज है, रिवाज के खिलाफ कोई कैसे चल सकता है ?

दामाद आ रहे हैं। दामाद का आना मामूली बात नहीं है। दामाद अकेले नहीं आते, उनके साथ उनके दोस्त-मित्र भी आते हैं। साथ में एक किलो मीठा ले आते हैं, जिसके बदले यहाँ से उन्हें एक कटोरा और कुछ नकदी दी जाती है।

"सलाई कुम !"

दामाद सलाम करते हैं और एक बुजुर्ग के हाथ में मीठा थमा दिया जाता है।

"वालेकुम सलाम ! आओ मियाँ बड़ो। अबे जमिलवा, देख ओज्जन पान की फिस्ती रक्खी होइए उठा लियाओ तो, इनके पान खियाओ।"

एक लड़का पान लाता है। दामाद और उनके साथी पान खाते हैं। फिर अलीमुद्दीन गिरस खड़े हो जाते हैं। शादी-ब्याह में भला इन्तजामकार से बढकर और किसका महत्त्व हो सकता है ? वे भीड़ को सम्बोधित करते हुए बोलने लगते हैं, "सरदार साहब कहाँ हैं ? अउर महतो साहब कहाँ हैं ? सबके बलाओ। चलो, दमाद भी आ गयेन हैं। अउर सब तैयारे हैं।"

सरदार महतो आते हैं और दूल्हे की तैयारी उनकी उपस्थिति में शुरू हो जाती है। सारे कपड़े दूल्हा स्वयं पहनता है, पर पगड़ी बाँधते हैं दामाद साहब— शरफुद्दीन के बहनोई। फिर उसके ऊपर से सऊदी अरबियो-जैसा दुपट्टा बाँधा जाता है और शरफुद्दीन का एक दोस्त नसीम अहमद रंगीन कैमरे से फोटो खींचता है। कई-कई फोटो। एक बार शरफुद्दीन के आसपास उसके सारे दोस्त खड़े हो जाते हैं। फिर अपने बाप के कंधे पर वह हाथ रखकर फोटो खिंचाता है। फिर हाजी मतोउल्ला, हाजी मिनिस्टर और हबीबुल्ला बुलाये जाते हैं। बारी-बारी से शरफुद्दीन उनके कंधों पर भी हाथ रखकर फोटो खिंचाता है और फिर बाहर निकलकर सजी हुई घोड़ी पर सवार हो जाता है।

बारात चल देती है। सभी बारातियों ने साफ लुगियाँ पहन रखी हैं और प्रायः

सफेद कुर्ते। कुछ विद्यार्थी क्रिस्म के लौण्डे पैण्ट-बुशर्ट में भी हैं। सभी लोगों के मुँहों में पान भरा हुआ है और सभी की छातियों पर फूल-मालाएँ झूल रही हैं। आगे-आगे बूट के ऊपर से चादर ओढ़े, घोड़ी पर बैठा शरफुद्दीन चला जा रहा है और पीछे-पीछे बाराती। किसी शान्त जुलूस की तरह। न बाजा न गाजा। एक-दम शरई बारात।

रास्ते में कोई पूछता है, “कहाँ बारात जइए?”

“बरतिया बड़ी बजार जइए!” पान की पीक में डूबा हुआ, गलगलाता हुआ जवाब मिलता है और बारात चलती रहती है। लगभग एक हजार लोगों की भीड़। पूरी सड़क भरी हुई है।

दरवाजे पर बारात पहुँचते ही शरफुद्दीन के बहनोई की पुकार शुरू हो जाती है। घोड़ी से दूल्हे को तो वही उतारेंगे। दूल्हा भला अपने से कैसे उतरेगा?

“कहाँ हैं मियाँ, बहनोई साहब कहाँ हैं? चलो दुलहा के उतारो।”

सलीकुज्जमा अपने साले को घोड़ी से उतारते हैं और भीतर ले जाकर गलीचे पर बैठा देते हैं। बाहर पूरी बारात गली में लाइन से खड़ी हो जाती है। ‘बेलबट्टा’ होता है। लोग पान खाते हैं और नाई, धोबी बारातियों से पैसा उतारते हैं। फिर निकाह होता है और कुछ लोगों को छोड़कर सारे बाराती अपने-अपने घर चले जाते हैं। खाने की दावत कुछ ही लोगों को है, बाकी लोग लौटकर हाजी अमीरुल्ला के यहाँ आयेंगे।

यहाँ निकाह के बाद खाने की तैयारी शुरू हो जाती है। हालाँकि ‘बिना बत्ती’ की वागत थी, पर बत्तियाँ जल गयी हैं। रात हो रही है। हाजी अमीरुल्ला को बड़ी जल्दी है। लौटकर वहाँ का इन्तजाम भी देखना है, लेकिन कुछ लोगों को खाना तो खाकर ही चलना है।

सबसे पहले दूल्हे के सामने थाल आता है। एक बड़ी-सी थाली में जर्दा रखा हुआ है और उस पर चाँदी के बरक चिपके हुए हैं। फिर बारातियों के आगे प्लेटें लगा दी जाती हैं। देग के पास मचिया रखकर सरदार और महतो बैठे हैं। कटोरों में धे बोटियाँ गिन-गिनकर लगा रहे हैं और बाल्टियों में चने की मसालेदार दाल उड़ेली जा रही है। बोटियाँ जब लग जाती हैं तो खाना सप्लाई होने लगता है। चीजें एक हाथ से दूसरे हाथ में होती हुई बारातियों तक पहुँचने लगती हैं और फिर एक अजीब क्रिस्म का शोर शुरू हो जाता है।

“अमाँ खाना बढ़ाओ तो। घरिया बढ़ाओ। रोटिया भी बढ़ाओ मियाँ। चावल लियाओ। देगो एज्जन अबइन तक चावल नाहीं आवा। ए चावल क बयरा लियाओ तो। अमाँ पानी का जग लियाओ। काड़ेवाला घमचा लियाओ।”

“सब हो गोवा मियाँ ?”

“हाँ हाँ सब हो गोवा । सरदार साहब कहाँ हैं, उनके बुलाओ, कहो के एज्जन सबके हो गोवा, अब बिसमिल्ला करावें ।”

लोगों के सामने खाना लग गया है, पर लोग हाथ बाँधे चुपचाप बैठे हैं । अगर सरदार साहब की इजाजत के कोई खा नहीं सकता ।

अचानक सरदार साहब, पी गयी बीड़ी को एक तरफ फेंकते हुए वहाँ आते हैं, चारों ओर नज़र दौड़ाते हैं । फिर पूछते हैं, “सब हो गोवा ने ?”

“हाँ हाँ सब हो गोवा !”

और जब वे आश्वस्त हो जाते हैं तो आदेश देते हैं, “बलो शुरू करो. बिस्मिल्लाहिरंहमानिरंहीम !”

और लोग दास गोश्त के साथ नान खाने में व्यस्त हो जाते हैं ।

खाने के बाद बिदाई होती है । चूँकि बिरादरी के कानून के अनुसार पाँच बर्तनों से प्यादा दहेज दिया नहीं जा सकता और चूँकि हाजी बसिउल्ला के सम्मान को इससे ठेस पहुँचती है, इसलिए बैंकडोर से सारा दहेज सुबह पहुँचाने की बात तय होती है । ट्रू-इन-वन, सोफासेट, पलंग, साइक्लि, घड़ियाँ, बर्तन तथा और भी कई बहुमूल्य वस्तुएँ हैं । सरदार-महतो के सामने इन्हे देना उचित नहीं । अतः केवल रस्मी दहेज दिया जाता है और कार्यक्रम समाप्त किया जाता है । हाजी अमीरुल्ला को कोफ्त होती है । अगर सरदार और महतो भी घूस खाने लगते तो बिरादरी का काम कितना आसान हो जाता, वे सोचते हैं और ‘555’ सिगरेट सुलगाकर एक ओर खड़े हो जाते हैं । शरफुद्दीन का दोस्त डोली का फोटो खींचने के लिए एंगिल ठीक करने लगता है । लड़की का बाप हाजी बसिउल्ला पेट पर हाथ बाँधे खड़े रहते हैं ।

9

कमरून पठानी टोला के पीछे नयी-नयी बसी आबादी अंसाराबाद में एक कोठरी किराये पर लेकर रह रही है । साथ में उसका बड़ा लड़का शरिफवा भी है । एक रोज वह अपने बाप से झगड़ा करके ननिहाल पहुँच गया और कमरून से बोना डि

अब वह कभी उस घर में नहीं जायेगा ।

लतिफवा अब गहने में भी ज्यादा पीने लगा था और रोज रात में ऊधम मचाता था । रहनवा को इस कदर सताता था कि वह दिन-रात रोती रहती थी और आधे दिन उसे दौरे पड़ा करते थे । शरिफवा इन सारी स्थितियों से ऊब गया था ।

भागते वक़्त अपने साथ वह कुछ रुपये भी ले आया था—चुराकर । उसी रुपये में कुछ उधारी के रुपये मिलाकर उसने एक पुराने करघे का इन्तजाम कर लिया था और अपनी माँ को लेकर अलग रहने लगा था ।

शरिफवा अपने बाप की तरह नहीं था । वह एक मजहबी लड़का था और पाँचों वक़्त नमाज़ पढ़ा करता था । कमरून इस लड़के को देखती तो गर्व से फूल उठती । लेकिन न जाने क्यों लतिफवा की याद उसे अब भी आती थी । जब भी उसकी दृष्टि अंतारावादवाली मस्जिद के कॉंगूरों पर पड़ती तो उसे वह शाम याद आ जाती जब वह नकाब ओढ़कर इसी मस्जिद में चन्दा देने आयी थी । दूसरे या तीसरे रोज़ शायद लतीफ भी आया था । 'कुछ भी हों, आदमी वह बुरा नहीं था', कमरून ने मन-ही-मन सोचा और उदास हो गयी ।

शरिफवा करघे पर बैठा फल्ली तैयार कर रहा था और कमरून बाहर जमीन पर बैठी कतान फेर रही थी । एक ही कोठरी में उनकी सारी गृहस्थी थी । एक ओर गड़्ढा गोदकर करघा गाड़ दिया गया था और दूसरी ओर गृहस्थी की अन्य चीज़ें करीने से मजा दी गयी थीं । एक के ऊपर एक रते हुए दो पुगने सन्दूक—जिन्हें कमरून अपनी माँ के यहाँ न ले आयी थी, दो कनस्तर और कुछ डिब्बे, दो-तीन पुगने घड़े, शीशियाँ और अल्मूनियम के चन्द बर्तन—उस कोठरी की यही कुल कायनात थी ।

कोठरी के बाहर एक छोटा-सा छप्पर डालकर रसोईघर बना लिया गया था, जहाँ कुनाई (लकड़ी का बुरादा) वाली अँगोठी रखी हुई थी और थोड़ी दूर पर टाट का आड़ कर उटउवा पागाना बना दिया गया था । शरीफ ने द्वार पर सँहिजन का एक पेड़ लगा दिया था जो अब काफी छतनार हो गया था । आने-जानेवाले इसी पेड़ के नीचे बोरे पर बैठा करते थे और कमरून तो इस पेड़ को अपने लड़के की तरह ही मानती थी ।

दरअस्त यह अकेली कोठरी थी जो बिल्कुल अलग-थलग बनी हुई थी और उसका मानिक छित्तनपुरा में रहता था । वह एक शरीफ आदमी था और किराये के लिए ही कभी-कभी उधम आता था । शरिफवा और कमरून को उसने पूरी खतनयता दे रखी थी कि वे अपने निवास को किसी भी तरह रहने योग्य बना

सकते हैं।

पश्चिम में सूरज डूब रहा था। उसकी लाल-लाल किरनें सड़िये की तरह पर गुलाल-रंगी अल्वियों की तरह गिरक रही थी। पूरा काशीत सिलसला दूर-दूर तक फैला हुआ था। पर कमल उदास थी। न जाने क्यों आज उसे सड़िये की तरह बहुत तेजी के साथ सता रही थी। कतान के छाये उसके सिर-सिर पर पड़े थे।

अचानक नजबुनिया की अम्मा उधर आ निकलती हैं और कमल के सिर पर बैठ जाती हैं।

“कर हो कमल कइसी उदास बनी हो? जीब मरे जा है ने?”

वे पूछती हैं तो कमल का गला भर आता है। उसकी आँखों में पानी भरने लगता है। फिर अचानक का और फिर कुछ देर बाद, और फिर तहसनिया का—“बहु फफक-फफककर रोने लगती है।

सूरज डूब जाता है।

“अस्ता हो अकबर... अस्ता हो अकबर!”

असाराबाद की अस्त्रिद से अजान की आवाज आती है और वह आवाज में कमल की मिसकियाँ भी डूब जाती हैं।

भीतर करघे पर बैठा शरीफ झाँककर वह दुःख देखता है और खड़ा हो जाता है। एक बार वह सोचता है कि बाहर चलकर भाँ को बटि, लेकिन फिर वह अन्तरात्मा बंदत देता है और दूर के मकान से ली गयी अस्मादी विग्रहों का दार डीङ करने लगता है। सावधानी के साथ दोनों तारों को वह दो डेनियों में डबाता है और उन्हें प्लग के छिद्रों में डाल देता है। छत से लटक रहा चानाँड बाट बा अन्त पृष्ठ से जल उठता है।

10

हवीबुल्ला का पासपोर्ट बन गया है। वे हज के लिए जा रहे हैं।

सुबह-सुबह हाजी अमीरुल्ला की कोठी पर लोगों की भीड़ बटने लगी है। हर आदमी के हाथ में माता है। हवीबुल्ला का गला तर-तराह की मसकतों में भर जाता है।

हवीबुल्ला माटे कद के खिचड़ी बालोंवाले एक ऐसे बड़े बड़े मस्जिद में

पड़ते हैं जिनका चेहरा गहरे अनुभवों के कारण सपाट हो गया है। उन्होंने अपने सपाट-साँवने चेहरे पर अब एक विचित्र प्रकार की आध्यात्मिक गरिमा पोत ली है। माला-वाला पहनकर वे मुहल्ले में सबसे अपने कमर मुआफ करवाने निकल पड़ते हैं। पीछे-पीछे लुंगी-टोपी लगाये, पान खाये, दीन-दुनिया की बातों में लीन — पूरा एक झुण्ड !

हवीबुल्ला एक दरवाजे पर रुकते हैं और पुकारते हैं, "का मियां हाजी साहब हो ?"

और भीतर से एक हाजी साहब निकलकर हवीबुल्ला को गले से लगा लेते हैं। यह निकट भविष्य में होनेवाले हाजी का पूर्व स्वागत है।

"हाजी साहब, कदा-मुना माफ किहो !"

हवीबुल्ला का गला भर आता है। सबसे माफी-बाफी माँग लें। अब पता नहीं दयारे-मदीना से लौटना हो या नहीं !

"गुदा माफ करिये म्यां ! हमरियो खातिर सरकारे दोआलम से दोआ करियो !"

हाजी साहब हवीबुल्ला का कन्धा थपथपाते हैं और वे आगे बढ़ चलते हैं।

यह क्रम पूरे मुहल्ले-भर चलता है। छज्जों और खिड़कियों पर स्त्रियों की भीड़ लग जाती है—हज के लिए जानंचाले हवीबुल्ला को देखने के लिए। शायद इसी में उनके गुनाह बरग्न दिये जायें।

अचानक एक दरवाजे पर हवीबुल्ला इस तरह ठिठककर पड़े हो जाते हैं जैसे कुछ तय कर रहे हों। साथ के लोग समझ जाते हैं। यह घर हाजी अनवारुल्ला का है। हाजी अनवारुल्ला और हवीबुल्ला की पुरानी दुश्मनी है। यही हाजी अनवारुल्ला हैं जिन्होंने हाजी अमीरुल्ला और हवीबुल्ला के खिलाफ इमजेंसी के दिनों में रिपोर्ट लिखायी थी और इनकी कोठी में तलाशी हुई थी, जिसमें तस्करी का कुछ माल निकला था। वह तो कहीं कलक्टर अपना आदमी था, वरना न जाने क्या दुर्गति होती। फिर भी कलक्टर को गुश करने के लिए नसबन्दी के दस फर्जों केस देने पड़े थे।

"हवीबुल्ला, मिल ल्यो म्यां, हज करे जाय तो, सब फिना मुला देव !" एक सज्जन सलाह देते हैं और गुद ही आवाज लगाते हैं, "अमां हाजी साहब हैं न ! देयो इ हवीबुल्ला आये नें मिले खातिर हज के जाय रहें ने।"

हाजी अनवारुल्ला बाहर निकलने में थोड़ी देर करते हैं। ये वही हवीबुल्ला हैं जिन्होंने उनकी जमीन पर कब्जा कर लिया था कभी और फौजदारी तक हो गयी थी। वो तो कहीं वकील साहब अपने आदमी थे, सब ठीक करा दिया, वरना...

"सलावाने कुम !"

हाजी अनवास्ता बाहर निकलकर पूरे झुण्ड से सलाम करते हैं और हबीबुल्ला उनसे जाकर लिपट जाते हैं, "गलती-ख़ता माफ़ कियो हाजी साहब !"

एक बार फिर हबीबुल्ला का गला भर आता है और लगता है कि वे वाकई बहुत दुखी हो गये हैं। हाजी अनवास्ता का दिल भी पिघल जाता है, "जाओ, म्याँ, सब अल्ला मिर्ग्या माफ़ करे नें। जाओ, हमरो खातिर दोबा करियो।"

और हबीबुल्ला भरे मन से आगे बढ़ जाते हैं।

स्टेशन पर लुगियाँ-हो-लुगियाँ, टोपियाँ-हो-टोपियाँ और बुकें-हो-बुकें नज़र आ रहे हैं। आज कई नांग हज़ के लिए ख़ाना हो रहे हैं। 'दादर एक्सप्रेस' छूटने में अभी काफी देर है। प्लेटफ़ार्म पर बादर बिछाकर हबीबुल्ला को लोगों ने बैठा दिया है और बारी-बारी से आ-आकर लोभ उनसे मुसाफ़ा कर रहे हैं। साथ ही अपने गुनाहों की बदशहाने की अपील भी किये जा रहे हैं। हबीबुल्ला गम्भीर बने बैठे हैं।

फिर थोड़ी देर बाद ही वे अपने स्थान से उठकर जनाना मण्डल की ओर जाते हैं और उनकी अपीलें भी सुनते हैं, उनका सलाम भी लेते हैं—अपने लिए भी और कमलीबाले के लिए भी। उनका दिल रह-रहकर भरा आ रहा है।

"चली म्याँ गड़िया अब छुटिए।" तब तक कोई आकर कहता है और हबीबुल्ला जल्दी-जल्दी डिब्बे की ओर बढ़ने लगते हैं। शरफ़ुद्दीन, कमरुद्दीन, हाजी अमीरुल्ला, हाजी मिनिरटार और हाजी मतिउल्ला सब मिलकर उन्हें सवार कराते हैं। एक बार फिर मालाएँ पहनायी जाती हैं। कमरुद्दीन तो बम्बई तक साथ जायेगा। वहाँ से दस तारीख़ को उन्हें 'अकबरी जहाज़' पर चढ़ाकर तब वापस लौटेगा।

हबीबुल्ला कम्पार्टमेंट में घुसकर अपनी सीट पर बैठ जाते हैं। गाड़ी धीरे-धीरे मूव करने लगती है। स्टेशन पर सगे सम्बन्धी, यार-बोस्त हाथ हिलाते हुए खड़े रहते हैं। दिल में वस एक ही भावना है, 'रसूले अरबी से हमारा भी सलाम कह देना हबीबुल्ला ! हम गुनाहों में डूबे हुए हैं। हम जमाने के सताये हुए हैं। जिन्हें हम ही नहीं, हिन्दुस्तान के सारे मुसलमान मजबूम हैं, सबके लिए हुज़ा बनना।'।

1. हाथ मिलाने की क्रिया। मुसाफ़े में दोनों हाथ पकड़कर बाँटने का होता है।

धर हाजी नज़ीर गिरस ने भी पावरलूम बैठा लिया है और अपने अनेक कारीगरों को जवाब दे दिया है। जो लोग सेमरा, बहादुरपुर, पड़ाव आदि गांवों से दिनकारी करने आते थे वे लोग तो अपने-अपने गांव लौट गये, पर दबीर मियाँ कहाँ जायें ? हालांकि मतीन की तरह वे भी मऊ या मुबारकपुर की राह ले सकते थे, पर ऐसा करना उन्हें उचित नहीं जँचा, क्योंकि मतीन के घर की हालत वे देख ही रहे हैं। अलीमुन की हालत दिन-ब-दिन बिगड़ती ही जा रही है और वह है कि घर-दुआर छोड़कर परदेस जा बसा है। यह भी तो नहीं है कि कभी-कभी इधर आकर खोज-खबर ही ले लिया करे। अरे हारी तुम्हारी हाजी अमीरुल्ला से हुई है कि पूरे बनारस ने हो गयी है ? लेकिन कौन समझाये ? एकाध बार अस्ताफ के जरिये सनेसा भी भेजा गया, पर जवाब में सिर्फ़ ढाँड़स के चन्द शब्द ही आये। वो तो अलीमुन-जैसी औरत है कि मन्न किये बैठी है। दूसरी होती तो कब की चली गयी होती।

लेकिन कहाँ चली गयी होती ? टी. बी. की उस मरीजा को कौन शरण देता ? नहरखाने भी तो नहीं पूछते। वरना कितनी ही औरतें हैं कि नहर में ही अपनी जिन्दगी काट देती हैं। बाप भी गुन होता है कि चलो नहीं कुछ करेगी तो बैठी-बैठी बोटा में कलाबत्तू ही भरा करेगी। लेकिन अलीमुन का तो कहीं ठिकाना नहीं है। एक ठे लड़का है, वह भी किसी काम का नहीं। कितनी बार उसे समझाया गया कि कहीं से कुछ जुगाड़ करके एक करघा गाड़ लो और अपना काम-धन्धा करो, लेकिन वे हजरत हैं कि पढ़-लिखकर न जाने क्या बनेंगे ? पता नहीं जज बनेंगे कि कलटूर ? अरे जालहा क लड़िका अँगरेजी पढ़ के का करिए ?

देग-दुनिया की हालत को देखते हुए दबीर ने घर छोड़ना मुनासिब नहीं समझा और अन्य लोगों की तरह ही उन्होंने भी कर्ज लेकर एक करघा गाड़ लिया। जिस कोठरी में वे लोग सोया करते थे उसी में एक ओर गड़्ढा खोदकर करघे का सरंजाम जमा लिया और बाकी हिस्से में गृहस्त्री की ओर चीजें 'तरे-उप्पर' करके किमी तरह ठूस दी गयी।

हालांकि दबीर मियाँ जानते हैं कि यह कर्ज वे कभी नहीं उतार सकेंगे—हो सकता है बड़ा होकर मुनुवा ही इसे उतारे—पर इसके सिवा कोई चारा नहीं था। अरजुन दबीर मियाँ देख रहे थे कि पावरलूम नाम के इस शैतान ने जिस तरह हाथ के कारीगरों को बेकार किया है और जिस तरह लोगों ने कर्ज ले-लेकर करघा गाड़ा है, वह काफी महंगा पड़ रहा है अब, क्योंकि एक भी चीज़ तो अपनी नहीं है। बड़का करघा, कर्ज का कतान—सिर्फ़ जाँगर ही तो अपनी है। वह भी सरकारी बड़ नहीं। सरकारी बड़ पर तो बड़े-बड़े गिरस्तों का पुर्तनी अधिकार

है। बैंक भी बड़े लोगों के लिए ही है। पहले तो सोसायटी को कर्ज मिलता था, अब तो वह सिस्टम खत्म हो गया है। सोर्स लगाकर अब हर आदमी कर्ज ले सकता है, लेकिन गरीबों को भला कहाँ मिल पाता है इस तरह का कर्ज। बशीर जैसे लोगों के बैंक तो यही गिरस लोग है। इनमें भी जो नये-नये धनी हुए गिरस हैं, कर्ज देने में उनकी ज्यादा रुचि रही है, ताकि कर्ज के करघे पर बुनी हुई साड़ियाँ उन्हीं के हाथों बेची जायें। और बशीर मियाँ लगातार देख रहे हैं कि उन लोगों से साड़ियाँ किस तरह खरीदी जाती हैं। बाजार से कितना कम मूल्य उन्हें दिया जाता है। उसमें भी कर्ज की राशि का एक भाग काटकर ! और अब तो नकदी नहीं, चेक मिलता है, जो एक महीना बाद भुनता है। चाहे मोलघर हो या गिरस्तों की कोठी हो, सब जगह लूट है। सुकून कहीं नहीं है।

बशीर मियाँ करघे पर बैठे हैं और सोच रहे हैं। सोच रहे हैं और फल्ली पर फू (मुँह से पानी का फुहारा) दे रहे हैं। घगल में मुनुवा बैठा है। उसे भी सिखा रहे हैं कि कैसे क्या किया जाता है। कुछ दिनों में जोड़िया¹ बनाने लायक हो जायेगा।

“सत्तावाले कुम !”

अरे ये तो रऊफ चचा की बीबी हैं, इधर कैसे आ टपकी ?

“बालेकुम सलाम !”

बशीर की बीबी सलाम का जवाब देती हैं और उन्हें लेकर दूसरी कोठरी में—जिसमें घाना-वाना पकता है—चली जाती हैं। वहाँ दोनों स्त्रियाँ फसर्रा मारकर बैठ जाती हैं और बातों में मशगूल हो जाती हैं।

अचानक बशीर की बीबी एक रहस्योद्घाटन करती हैं—

“अरे कि रे ऊ समसुन चाची क बेटउवा काने उ महिन्ना में म्या है !”

“कउन बेटउवा, ऊ छोटकावाला ? अरे अल्ला ओका अभइने म्या होइए ? ऊ केतना बड़ा हइए है ?”

तभी दरवाजे पर किसी के आने की आहट होती है और दोनों स्त्रियाँ खामोश हो जाती हैं।

एक बीमार-सी, मरियल, काली-कलूटी, पिचके हुए गालों और मरे हुए मुँह की टांगों जैसे हाथों-पावोंवाली एक लड़की दरवाजे पर खड़ी है और रो रही है।

“कउन ? रेहनवा ?”

बशीर की बीबी चौंकती है और खड़ी हो जाती है। बशीर भी वहाँ आ जाते हैं।

“का भोवा रे ?”

वे पूछते हैं और रेहाना के निर पर हाथ फेरते हैं। रेहाना कुछ नहीं बोलती, चुपचाप आँसू बहाती रहती है, फिर थोड़ी देर बाद काँपने लगती है और दीवार का सहारा लेकर बैठ जाती है।

“का भोवा रे, बतलती काहे ने ?”

बशीर मियाँ उसके पास बैठकर दुबारा पूछते हैं तो वह अपना चेहरा उठाती है और चाप की आँखों में उसे टिका देती है—

“ऊ हम्में छोड़ दिये न अब्बा !”

बड़ी मुश्किल से वह कह पाती है और जोर-जोर से रोने लगती है। रोते-रोते बेहोश हो जाती है।

क्षेपक

हाजी अमीरुल्ला को जब यह मालूम हुआ कि उनमें मिलने के लिए एक ऐसे सज्जन उनकी कोठी पर पधारे हैं जो मुसलमान होते हुए भी हिन्दी और संस्कृत के अध्यापक हैं तो वे बहुत खुश हुए। उन्होंने झट से उन्हें गद्दी पर बैठाया और एक जोड़िया को चाय-पान लेने के लिए बाजार भेज दिया।

“तोरा नांव का है मट्टर साब ?” हाजी अमीरुल्ला ने उनसे उनका नाम पूछा और आगन्तुक महाशय उनका सहजा देखकर थोड़ा चकरा-से गये। फिर भी उन्होंने अपना नाम निहायत रोब के साथ बताया, “मुझे अब्दुल बिस्मिल्लाह कहते हैं।”

हाजी साहब चौंके। ऐसा नाम उन्होंने अपनी जिन्दगी-भर नहीं सुना था। थोड़े, “इ केत्तर क नांव है मियाँ ? अरे अब्दुल्ला कहाँ त ठीक भी है, इ अब्दुल भी अवर बिसमिल्ला भी; का मतलब भोवा म्याँ ?”

महाशयजी सँपे : उन्हें उम्मीद नहीं थी कि सिर मुड़ाते ही ओले पड़ेंगे। लेकिन बहुत धैर्य के साथ उन्होंने काम लिया और स्वीकार किया कि हाँ, अरबी ग्रामर के लिहाज से यह नाम गलत और निरर्थक है, मगर उनके गुरुजी ने बिस्मिल्लाह के साथ अब्दुल जोड़ दिया तो वे क्या करें ?

“ऊ उस्ताद हिन्दू रहे होइएँ ?”

हाजी साहब ने स्पष्टीकरण चाहा और उन्होंने उनके कयास को स्वीकृति प्रदान की। फिर वे अपने मकसद पर आये, “दरअस्ल हाजी साहब, मैं लेखक भी हूँ और...

“इ लेखक का होते म्याँ ?”

“अरे लेखक नाहीं जनतो ? सायर ! सायर के हिन्दी में लेखक कहते न !”

शरफुद्दीन ने हाजी साहब को लेखक का अर्थ बताया तो वे प्रसन्न हो गये। थोड़े, “तब एत्तर के बताओ न मट्टर साब कि तू सायरी भी करते। बहुत बढ़ियाँ। कभी सुनाओ आपन कलाम। हम्म त नूर इन्दोरी क कलाम बहुत जमेते...”

“जो नहीं, मैं शायर नहीं हूँ हाजी साहब, मैं नावेल निगार हूँ।”

“ओ ! जइसे हमरे इन्ने सफी अउर ए. हमीद हैं। बाह मट्टर साब ! इन्ने सफी का त कोई जयाय नहीं। ऊ नवलिया क का नाव है रे सरफुद्दीनवा जेके रस्मे एजरा¹ में लाल बहादुर सास्त्री आये रहे न ?”

“हाजी साहब, मैं इन्ने सफी और ए. हमीद जैसा नावेल निगार नहीं हूँ। मैं तो...”

“अच्छा म्यां छोड़ो, तू आपन काम बताओ। बीबी के खातिर सड़िया-बड़िया चाहे त बोली...”

“अरे अब्बा मट्टर साहब पूरे पण्डितजी हैं। गीता-रामायन सब पढ़े हैं। जइसा चाहो, बइसा इस्लोक मुन लो इनसे। चाहे वेद से चाहे कुरान से...”

सरफुद्दीन फिर महाशयजी का परिचय देने लगा तो हाजी साहब क्षुब्ध हो उठे। दूसरों की ज्यादा तारीफ सुनने के वे आदी नहीं थे। बोले, “क मट्टर साब ? तू बाकई संस्कीरती पढ़े हो ? मगर संस्कीरत क बादसाह तो हम एक जने के देया। अब्बास चतुरवेदी के। चौहट्टा लालखा में रहत रहेन ! चारों वेद उन्हें हिफज² रहा। एक मरतवा एक पण्डितजी से मुनाजरा (शास्त्रार्थ) होय लगा, अब्बास उन्हें अऊ इस्लोक सुनायेन कि पण्डितजी आपन डण्ड-कमण्डल ले के सीधे मनिक्कनिका³ के संग भाग चलेन !”

“दरअस्त हाजी साहब, मैं एक नावेल लिखना चाहता हूँ बनारस के साड़ी बुनकरों पर। मैं उसी सिलसिले में कुछ जानकारी लेने के लिए आपके पास आया हूँ।”

अब्दुल बिस्मिल्लाह साहब ने जब अपना उद्देश्य हाजी साहब को बताया तो वे घिल उठे। बोले, “बहुत बड़िया मट्टर साब ! बहुत बड़िया ! लिखो ! का-का लिखियो ओम्मे ?”

इस पर बिस्मिल्लाह साहब ने हाजी साहब को विस्तार से बताया कि वे इनकी पूरी जिन्दगी को अपनी किताब में उतार देना चाहते हैं। बनारसी साड़ी बनानेवाले साधारण मजदूरों की जो दुर्दशा है, उनके शोषण का जो भयानक चक्र बड़े गिरस्ता लोगों और गोलघर के सेठों के बीच फँला हुआ है, अपने उपन्यास में वे इन सब चीजों को दर्शाता चाहते हैं। वे यह दिखाना चाहते हैं कि कीमती-से-कीमती साड़ियाँ बुनकर देश-विदेश के बाजारों में पहुँचानेवाला एक आम बुनकर छुद कैसे जिन्दगी जी रहा है ?

1. विमोचन-समारोह।

2. कण्डस्य।

3. गंगा का मणिफणिका घाट, जहाँ मुर्दे जलाये जाते हैं।

“गनत ! बिस्तुन गनत !”

हाजी साहब भड़क उठे। उन्होंने इस बात का तीव्र विरोध किया कि गिरम्या लोग मजदूरों का शोषण करते हैं। उन्होंने चिन्ता-बिन्ताकर बताया कि यहाँ का हर बुनकर मजे में गोम-रोटी खाता है और छोट में रहता है। उसके सामने जिन्दगी की कोई समस्या नहीं है। यही नहीं, गिरम्या तो खुद ही इन मजदूरों के मुहनाज रहते हैं। ये बड़े टेकी और फमखी हैं। ये बुरांदा के बेईमान और मादरचोद हैं। गिरम तो खुद इनका कजेंदार होता है। एक कारीगर जे ईंच छाड़ी रोज बुनता है ते ईंच की मजदूरी का कजें गिरम पर भड़ता जाता है...तू मटूर गाव टन मोसहिवावानेन के बारे में एतर की बात कइसे मिथे तो ?

और अन्त में उन्होंने अपना मुनाब इस प्रकार दिया, “तू निक्खी, सीक से निक्खी मटूर साव ! मगर बइसा निक्खी के हम अंसारी भाइन का सर जेंचा होय। चारों संग हमारा नांव होय...”

और जनाब अब्दुल बिस्मिल्लाह साहब उस भाषण को सुनकर पस्त हो जाते हैं।

हाजी साहब उनकी परती को महसूस करते हैं और मन-ही-मन खुश होते हैं। चले हैं सेंटहिमोवाले हम्म नाविलनिगारी सिन्नावें...

मज पहुँचकर मतीन ने छोरी बाग नामक मुहल्ले में किराये की एक कोठरी ले ली है और कच्चे के चैयरमैन जनाब मुल्तान अहमद के कारीगरों के साथ मिलकर काम करने लगा है। यहाँ सूती धागों से सटर पर हैण्डलूम की साड़ियाँ बिनी जाती हैं। लेकिन यहाँ भी एक ही बात उसे विचित्र लग रही है कि कर्घे पर प्रायः बीरतें ही बँठा करती हैं, मर्द बाहरी काम किया करते हैं। अर्थात् यहाँ बनारस में बीरत की जिन्दगी कतान में बन्द है और यहाँ कर्घे में। बच्चे पैदा करना, घाना पकाना, शोहर की छिद्रमत करना और पर्दे में रहना—ये सब चीजें अतिरिक्त बीरत समान हैं।

मतीन जिन आदमी के घर में रहता है उसकी बीबी भी सुबह-सवेरे कर्घे पर बैठ जाती है और घटा-घुट घटा-घुट घुट हो जाता है। उसका शोहर चैयरमैन के यहाँ कोई और काम करता है। लेकिन तनखाह उसे शामद ही मिलती हो, इसलिए घर में गन्ने की तंगी अक्सर ही बनी रहती है। लगता है चैयरमैन साहब की झूठी गुलनूदी तामिल करने के लिए ही यह आदमी उनकी पूँछ के पीछे लगा रहता है।

इधर मज के बुनकर काफी परेशान हैं। सूत बहुत महँगा हो गया है और मिल नहीं रहा है। सरकार ने कोआपरेटिव से सूत देने की जो व्यवस्था की है उसका लाभ चैयरमैन मुल्तान अहमद, हाजी जमाल अहमद, मंजूरल हसन अंसारी आदि लोगों को ही मिल पा रहा है। जिन साधारण बुनकरों के पास अपने निजी कर्घे हैं, उन्हें गुनेदाशर में दुगने मूल्य पर सूत खरीदना पड़ रहा है। पिछले दिनों मज में बुनकरों का एक बहुत बड़ा सम्मेलन हुआ था जिसमें यह बात उठायी गयी थी, लेकिन बुनकर नेताओं ने इस पर ध्यान देना जरूरी नहीं समझा। वे अपने राजनीतिक मतलों में ही उत्तम रहे और इधर मज, कोषागंज, घोसी, दोहरीघाट आदि के गरीब बुन-

कारों की हालत बंद से बदतर होती जा रही है।

इन दिनों मतीन भी सोच रहा था कि अपना एक निजी करघा बना ले। इसके लिए काट-कपटकर उमने कुछ रुपये भी बचा लिये थे, लेकिन बाजार की हालत को देखते हुए हिम्मत नहीं पड़ रही है।

आठ बज गये हैं, लेकिन घुंघुअभी नहीं छंटी है। कुछ दिनों से शीतलहर शुरू हो गयी है और पटापट सोग मरने लगे हैं। इस इलाके में बैसे भी मौतें ज्यादा हो रही हैं इन दिनों। अभी दशहरे और मुहर्रम के मौके पर यहाँ भयंकर दंगा हुआ, जिसमें सैकड़ों जानें गयीं। सरकारी भाषा में 'सर्वेदनशील मुहल्लों' में बारह दिनों तक लगातार कर्फ्यू जारी रहा—चौबीस घण्टे का। भीतर सोग पानी बिना मर गये। लार्शें सड़ गयीं, लेकिन दफनाने की छूट नहीं मिली। सोग खिड़कियों से पुर्जों फेंकने लगे कि उनके बच्चे झूठों मर रहे हैं, कर्फ्यू में छूट दी जाय, लेकिन लोगों की प्रार्थनाओं पर कोई ध्यान नहीं दिया गया।

इस दगे और इस कर्फ्यू से मऊ ही नहीं, आसपास का सारा घंघा ठप हो गया। आजमगढ़ जिले के कोषागंज, अदरी, पूरापाट, घोसी, सिपाह, मधुबन तथा गाजीपुर जिले के बहादुरगंज, कासिमाबाद, गंगौली, खहूराबाद, मरदह, जंगीपुर आदि स्थानों के बुनकर मऊ से ही सूत लाकर साड़ी बुनते हैं और साड़ी तैयार करके उसे मऊ से जाकर अपनी मजदूरी प्राप्त करते हैं। कर्फ्यू के कारण तैयार माल लोगों के घर में ही पड़ा रहा और उन्हें सूत भी नहीं मिल सका, जिससे साड़ी तैयार की जा सके। इस तरह पिछले कई महीनों से यहाँ के बुनकर तबाही के शिकार होते आ रहे हैं।

तो, इस मऊ और बनारस में क्या क्रकं है? मतीन ने सोचने की कोशिश की, लेकिन अपने सवाल का उसे कोई जवाब नहीं मिला।

मतीन टट्टी करने गया था। खेतों में इतनी ओस थी कि उसकी लुंगी बुरी तरह भीग गयी थी और उस पर घास की टूटी हुई पत्तियाँ चिपक गयी थी। मतीन एक हाथ में लोटा धामे और दूसरे हाथ से अपनी लुंगी का टोका उठाये चला आ रहा था। अचानक उसे ऐसा लगा कि मंसूर चा'वाले के यहाँ लोगों की भीड़ इकट्ठी हो रही है।

उनमें से कइयों को वह अब पहचानने लगा था। वे खीरीवाग, बात की मस्जिद, रुपुनाथपुरा आदि के बुनकर थे जो डेली इसी दूकान पर चाय पिया करते थे। मतीन भी यहाँ आया करता था। इस वक़्त भीड़ देखकर वह चाय की दूकान पर खड़ा हो गया। वहाँ एक आदमी के हाथ में 'आज' अखबार था और लोग उचक-उचककर किसी ख़बर को पढ़ने की कोशिश कर रहे थे। मतीन अपना

मोटा पीछे किये आगे बढ़ गया और अखबारवाने की बगल में खड़ा होकर खुद भी उस समाचार को पढ़ने लगा, जिस पर पूरी भीड़ की नज़रें जमी हुई थीं—

—मऊ में विचौलियों द्वारा गरीब बुनकरों का शोषण !

'बुनकरों के शहर मऊ में बुनकरों की दयनीय स्थिति इस बात का प्रमाण है कि सरकार द्वारा बुनकरों को मिलनेवाली सहायता एवं सुविधाओं का लाभ चन्द विचौलिये ही उठा रहे हैं। ये विचौलिये मिल, साइजिंग खोलकर उसमें गरीब बुनकरों से काम लेते हैं और इसके बदले बहुत कम पारिश्रमिक देते हैं।

'आधिक शिकंजे में ग्रस्त यहाँ के बुनकरों का रहन-सहन इतना निम्नस्तर का है कि वे स्वयं कपड़ा बुनकर भी अपने बच्चों को कपड़ा पहना नहीं पाते। घर के नाम पर इन्हें कच्चे सीत्तन-युक्त अथवा टीन शेड के मकानों में रहना पड़ता है। मामूनी-सी वर्षा में घर कीचड़युक्त हो जाता है, फिर भी वे इस नारकीय जीवन को बिताने के लिए मजबूर हैं।

'बुनकरों ने बताया कि सरकार की निगाह में हम बुनकर नहीं हैं। बुनकर वे हैं जो मिल तथा साइजिंग खोलकर शोषण तथा श्रृण-अदायगी में आनाकानी करते हैं। हम तो इनके यहाँ मजदूरी पर कार्य करते हैं।

'एक या दो करपा लगाकर कपड़ा बुननेवालों के समक्ष बिक्री की समस्या है, क्योंकि उनके समक्ष सम्पन्न प्रतियोगी खड़े रहते हैं। बुनकरों ने आरोप लगाया कि स्थानीय हस्तकरपा निगम में गरीब बुनकरों का कपड़ा नहीं खरीदा जाता, क्योंकि वे निगमवालों को गुन नहीं कर पाते।

'मूत, रेशम, ऊन, स्टेपुल तथा केमिकल्स आदि के मूल्यों में वृद्धि से बुनकर अलग परेशान हैं।

'बुनकरों ने सरकार से माँग की है कि वास्तविक गरीब बुनकरों द्वारा उत्पादित कपड़े को खरीदने की व्यवस्था की जाय तथा उन्हें श्रृण की सहायता मुलभ करायी जाय।'।

"बढ़िया लिखो हन !"

"इ के छपावे हाँइया ?"

"मोरे घ्याल से इ क्षारग्रण्डे राय छपावे होइहन ।"

"हाँ हाँ ठीक कहेव !"

मतोन चल पड़ा वहाँ से। प्रतिक्रियाएँ होती रहीं।

1. 'आज' से सामार।

तो बनारस और मऊ में क्या फर्क है? मतीन फिर सोचने लगा। उसे अपनी मोसायटीवाली बात याद आ गयी। वह आरम्भ से अन्त तक उस प्रकरण को सोच गया और अचानक ही उसका मन सूखने लगा।

उसने अपनी टिनघोड़वाली कौठरी के किबाड़ धोले और भीतर जाकर जमीन पर बिछी नपरी पर गुमगुम-मा बैठ गया। उसे अलीमुन और इकबाल की याद आने लगी। कहीं अलीमुन की तबीयत अब क्यादा पुराने तो नहीं हो गयी होगी? इकबलया आवारा तो न हो गया होगा? और वह पञ्चमुर्दा होने लगा। उसने काम पर जाने का विचार त्याग दिया।

और यह सोचकर ही कि आज उसे नागा करना है, उसके भीतर एक विचित्र क्रिम का उत्साह भर गया। जैसे कोई त्योहार आने पर बच्चे उत्साहित हो उठते हैं, कुछ उसी तरह; और वह चूल्हा सुलगाने लगा।

“का करते हो?”

मतीन चौंका। दरवाजे पर मकान मालकिन खड़ी थी।

“जाइते खाना पकाये।”

“म सोचजँ तनी पूछ लेवँ, आज देखाव्यो नाहीं। सबेरवँ से केहर गायब रहेव?”

मतीन ने उस स्त्री को सुबह की सारी घटना समझायी, कि वह टट्टी से लौटते ब्रह्म मंझूर चाँचाले के यहाँ रुक गया था और अखबार में ऐसी-ऐसी बात छपी है। मऊ के गरीब बुनकरों के बारे में ऐसा-ऐसा लिखा जा रहा है।

“इ सब इन्निरो गाँधी पढिहन कि नाहीं?”

उम औरत ने अत्यन्त भोलेपन के साथ यह सवाल किया तो अपनी उदासी में भी मतीन मुस्का उठा। उसने इन्दिरा गाँधी की अहमियत उम औरत को समझायी और हँसी करते हुए कहा, “न त हमरे अत्ला मियाँ अंसारी हैं अउर न इन्दिरा गाँधी जुलाहिन हैं, कि हमरा दरद क लोगन के होइए।”

और बकरीदत चाची हंस पड़ी। वे थोड़ी देर तक मतीन का चूल्हा सुलगाना देखती रही, फिर चले पड़ी।

“बली अभिन बहुत काम करे के पड़ा ह।”

मतीन ने अलमूनियम की एक टेढ़ी-सी थाली में दो दिन से रखी हुई काली पड़ी लीकी के टुकड़े किये, फिर उन टुकड़ों को एक पतली में रखकर उसी थाली में बाटा सानने लगा। थाली बीच में थोड़ी फूटी हुई थी, इसलिए मतीन जब हुमच-कर आटे को गूँथता तो फर्श की गीली मिट्टी पानी के साथ मिलकर थाली में आ जाती और मतीन उसे आटे से अलग न कर पाता। इस तरह धीरे-धीरे आटे का रंग काला होता जा रहा था। “कितनी भी गरीबी सही पर क्या अलीमुन के रहते वह ऐसे आटे की रोटी खा सकता था? मतीन को फिर अलीमुन की याद आयी

और वह भीतर से विचलित हो उठा ।

जिन्दगी में जब इसी तरह की चीजें हर जगह हैं तो बनारस ही क्या बुरा है ? अब तो उसके पास इतने पैसे भी बच गये हैं कि थोड़ा-बहुत कर्ज-वर्ज लेकर वह अपने लिए एक करघे का इन्तजाम कर सकता है । तो क्यों न वह बनारस लौट चले ? मऊ और बनारस में फर्क ही क्या है ? शरीर तो हर जगह एक ही जैसे है । और मतीन अपने-आप से ही उलझ गया । उसका चित्त डगमगाने लगा । उसकी आँखों में अपना पूरा घर नाचने लगा । कभी लगता कि चूली-दुआर में अलीमुन खड़र-मड़र कर रही है और कभी महसूस होता कि इकबाल धम्म-धम्म सीढ़ियाँ चढ़ रहा है । कभी लतीफ तो कभी अल्ताफ, कभी रऊफ चन्चा तो कभी नजबुनिया...

मतीन से खाना नहीं खाया गया । वह बाहर निकल गया ।

मतीन ने वह पूरा दिन किसी प्रकार घूम-टहलकर काटा और अगले दिन वह अपना डेरा-डण्डा लेकर सुबहवाली गाड़ी से बनारस के लिए रवाना हो गया ।

13

गली में दो साल से लेकर चार साल तक की उम्र के चार-पाँच लड़के खेल रहे थे । उनमें से एक लड़का नंगा था और उसकी नाक से पीला-पीला कीचड़ लुढ़का पड़ रहा था, जिसे वह बार-बार सुड़क ले रहा था । नगे लड़के की छुन्नी में एक लम्बी-सी सुतली बंधी हुई थी, जिसे एक लड़का दूर खड़ा होकर खींच रहा था और बाकी लड़के हो-हो करके हँस रहे थे । वह नंगा लड़का भी रह-रहकर हँस देता था ।

मुहल्ले में मतीन के पहुँचने की खबर सबसे पहले उन्हीं लड़कों में से किसी ने अलीमुन को दी और वह ऊपरवाली खिड़की खोलकर झाँकने लगी । तब तक मतीन अपना डल्ला-पल्ला लिये भीतर पहुँच गया था और अपने ही घर में वह इस तरह खड़ा था, जैसे कहीं से मेहमान होकर आया हो ।

थोड़ी देर तक मतीन उसी तरह चुपचाप खड़ा रहा । अलीमुन उसे एकटक देखती रही । फिर उसने मतीन के हाथों से झोला-झक्कड़ लेकर एक कोने में सारा सामान टिका दिया और खटिया का विस्तरा हाथ से झाड़-झाड़कर साफ करने लगी ।

मतीन विस्तरे पर बैठ गया । उसके बाल अब पक चले थे और बढ़ी हुई दाढ़ी

मे गफेद-गफेद घूंटियाँ बसग से चमक रही थी। उसके गाल भी अब पिचक गये थे और हाथों-पाँवों की नसे बाहर की ओर निकल आयी थी।

“मजे में रहेब ने?” अलीमुन ने छटिया के पास ही जमीन पर बैठते हुए अपने शीर्ष की खरियत पूछी तो मतीन का दिन भर आया। वह कुछ बोल नहीं सका। एकटक अलीमुन के सिर की ओर देखता रहा।

अलीमुन सिर पर दोनों हाथ रखे उकड़ूँ बैठी थी। उसके बाल भी धीरे-धीरे धिबड़ी हो रहे थे और उँगलियों के नाखून घिसने लगे थे। चमड़ी पर झुरियाँ पड़ गयी थीं। चेहरा कासा हो गया था।

अचानक अलीमुन को छाँसी आ गयी और उठकर वह बाहर चली गयी। मतीन ने छटिया पर बैठे-बैठे ही देखा कि अलीमुन के मुँह से लाली लिये हुए बसगम का एक भारी-सा यस्का नीचे गिरा है और वह सरत हो गयी है।

“दवाई नाहीं घात रहे बन?”

उसने यूँ ही सिर्फ कुछ बोलने के लिए यह सवाल किया जिसके जवाब में अलीमुन अपने इलाज का पूरा व्यौरा ही बटा गयी।

“विल्कुल फायदा नहीं ने!”

और वह कहने लगी।

“इकबाल कहाँ गोवा है?”

“गोवा है बसीर किये!”

“इस्कूल नाहीं गोवा का?”

अलीमुन को फिर छाँसी आ गयी।

“आज रात में रेहनवा क इन्तकाल हो गोवा। मट्टी का बनडवा आवा रहा, हा इस्कूल नाहीं गोवा, हुँअइन घला गोवा!”

और वह फिर छाँसने लगी।

मतीन जड़ हो गया, जैसे किसी ऐसे साँप ने उसे काट दिया हो जिनका लहर भी आदमी को नहीं आता।

अलीमुन ने बड़ी मुश्किल से उसे सारा वृत्तान्त बताया—घटने-घटने, कि किस तरह रेहनवा का तलाक हुआ और किन तरह वह नहर ने बाहर बंदर हासत में रहने लगी। जिन ने उसके पूरे जिन ने बूझ बाँटा था। जिन्हें हथिनी ही बच रही थी। इतना सुन्दर शरीर तब की तरह कासा हो बना था और हाथ-पाँव दाँत की कन्दियों की तरह पतले। अने दिन हजुज-न। हर छेनेछत को माँ के साथ बहादुर शहीद जाती थी, पर कोई फर्क नहीं पड़ा। दिन-ब-दिन हानत गिरती ही गयी। आखिर में उनने बगनाई पकड़ ली और आज रात को बेचारी चल बसी।

मतीन छड़ा हो गया।

“कहाँ?”

“जाइते बसौर किये!”

“चहिया त नये जाव!”

और अनीमुन वहाँ से उठकर रसोईघर में घुस गयी। लेकिन मतीन ने चाय के लिए मना कर दिया। बोला, गाड़ी में पी ली है। दवाहिन नहीं है।

और वह सीढ़ियाँ उतरकर गली में आ गया।

अनीमुन चूल्हा जलाकर घाना पकाने की तैयारी करने लगी।

बसौर के घर में भीतर खूब रोआ-रोहट मचा था और बाहर कफनाने-दफनाने पर बुजुर्गाना चर्चाएँ हो रही थीं। कब्र के लिए जमीन का टुकड़ा तय किया जा चुका था। कफन का कपड़ा और कब्र के भीतर लगनेवाली लकड़ियों का इन्तजाम होना बाक़ी था। एक लड़का बेर की झाड़ियों के लिए जा चुका था और अब एक काग़ज पर वह लिखा जा रहा था कि कफ़न के अनावा और किन-किन सामग्रियों की आवश्यकता है?

उम शोर-शराबे में मतीन चुपचाप गड़ा रहा। वह सोचता रहा कि जिन्दगी में आदमी की कितनी-कितनी जरूरतें हुआ करती हैं कि उन्हें वह आजीवन पूरा नहीं कर पाता, जबकि मर जाने पर वे जरूरतें किस क्रम में सिमट जाती हैं। बस थोड़ा-सा कपड़ा, एक शीशी केबड़ा जल, थोड़ी-सी गुल्लानी मिट्टी, एक पैकेट अगर-बन्नी और थोड़ा-सा कपूर। कुल मिलाकर एक लाश के लिए बस इतनी-सी चीज़ों की जरूरत होती है। बस! यह भी न मिले तो क्या? लाश भला क्या शिकायत करेगी बेचारी? यही आदमी की तमाम जरूरतों का आत्मा हो जाता है।

“अरे मतीन तू क्या आएव?”

सहसा एक बुजुर्ग मतीन को टोंकते हैं तो उसका ध्यान भंग होता है। वह उनसे सलाम करता है और फिर गरी-बानी में सारे लोगों के पास जाकर उनसे सलाम करता है। लोगों की संक्षेप में वह अपना हालचाल बताता है और फिर रेशाना के लिए कफ़न लाने के लिए मुँह ही चम पड़ता है।

मोलवीजी के बाड़े में लकड़ियों की एक टाल है, जहाँ जलाऊ लकड़ियों के अलावा कब्र में बिछानेवाली लकड़ियाँ भी मिला करती हैं। मोटी-मोटी, सीधी और कब्र के नाप से गाड़ी हुई। केवल कब्र की लम्बाई बता देने से ही काम-भर की लकड़ियाँ दे दी जाती हैं। इस टाल पर एक मोलवी साहब बैठते हैं जो लकड़ियाँ भी बेचते

हैं और मुद्गले के सड़ने-सड़कियों को सिपारे' भी पढ़ाते हैं। अपनी दुकान में वे कफ़न का कपड़ा और मुल्तानी मिट्टी आदि अन्य चीजें भी रखा करते हैं, जिससे आसपास के लोगों को कफ़न-दफ़न के लिए परेशान नहीं होना पड़ता। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि इस पवित्र काम के लिए उन्हें हिन्दू दूकानदारों के यहां नहीं जाना पड़ता !

मतीन ज़िम धक़्त टाल में पहुँचा, मोलवी साहब एक दस-ग्यारह ग़ाल की सड़की के ग़ालों को मगल रहे थे और हँस-हँसकर डाँट रहे थे कि अभी तक तुम्हें 'अलिफ़ साम मीम' याद नहीं हुआ। सड़की मोलवी साहब की इस हरकत को निहायत शमिन्दगी के साथ झेल रही थी और पढ़ रही थी—

अलिफ़ साम मीम
जालिफ़ल किताबो
सारंग क्रीह
हुदेंस्तिल मुत्तकीनत्तज़ीन
यो मे नून...

“सर्लावाले फ़ुम !” मतीन ने मोलवी साहब को सलाम किया तो बेचारे बुरी तरह सँप गये और सड़की का ग़ाल छोड़कर उठ खड़े हुए। उन्होंने अपने को फौरन इस तरह उदास बना लिया मानो बशीर की बिटिया नहीं, उन्हीं की बिटिया मरी है। झट-से उन्होंने सारे बच्चों की छुट्टी कर दी और मतीन को कफ़न का कपड़ा दिखाने में तल्लीन हो गये।

कई-कई खाना सागो का कफ़न बना चुकी चार अनुभवी महिलाओं ने मिलकर रेहाना का कफ़न तैयार किया, उस पर कपूर मला और फिर रेहाना की लाश को नहसा-धुलाकर कफ़न में लपेट दिया गया।

थोड़ी देर में मस्जिद से पंचायती तावूत आ गया और उसमें रेहाना को लिटा दिया गया। जनाज़ा चल पड़ा।

घर में रोने की आवाज़ फिर यकबयक तेज़ हो गयी। बशीर की बीबी दीवार पर अपना सिर पटकने लगी और अन्य औरतें रेहाना का गुणगान कर-करके रोने लगी।

मुनुबा मुसुक-मुसुककर रो रहा था।

कदमनाम में मुहम्मद के लगभग सभी लोग आये थे। सिर्फ लतीफ नहीं था। हालाँकि उनके यहाँ भी मिट्टी का बलउया भेजा गया था, पर वह घर से ही गायब हो गया था।

कब्र अभी नैयार नहीं थी, अतः जनाजा उतारकर लोग इधर-उधर घूम में बैठ गये थे और वह भूलकर कि वे किसी लाश को मिट्टी देने आये हैं, तरह-तरह की राजनीतिक और सामाजिक चर्चाओं में मशगूल हो गये थे।

नेकिन रज्ज कच्चा सबसे अलग-थलग एक पेड़ की जड़ पर बैठे थे और सिर पर दोनों शायद रस्ते न जाने किस विचार में गुम थे।

मतीन भी उन्हीं के पास जाकर बैठ गया।

"इ लफिया रेहना के काहे तिलाक दै दिवेश चचा?" उगने अत्यन्त भरे मन से यह गवान रज्ज कच्चा से किया तो वे नजर उठाकर उसकी ओर देखने लगे मानी इस सवाल के भीतर भी कोई एक सवाल है, जो खुद उनकी ही आँखों में गड़ रहा है। वे खामोश रहे।

"आखिर भोवा का रहा चच्चा?"

मतीन ने फिर उन्हें छेड़ा तो इस बार वे घुरी तरह हिल गये। उनकी खामोशी पानी गायी कच्ची दीवार की तरह टूट गयी।

"अब का बताएँ मतीन, नजबुनियो क त तिलाक हो गोवा है।"

"हँ!"

और आगे मतीन कुछ नहीं बोल सका। वह वर्क की तरह ठण्डा हो गया। उसके भीतर की सारी हलचल समाप्त हो गयी। लगा कि वह खुद ही एक कब्रस्तान हो गया है... और जब 'चलो साहयो मट्टी देओ' की पुकार लगायी जाने लगी तो उगकी समझ में यह नहीं आया कि वह किसे मिट्टी दे? रेहाना को? नजबुनिया को? खुद को? या बिरादरी के इस कोढ़ को?

14

इलाके के युनकरों में फिर मुगबुगाहट होने लगी।

मतीन आ गया है। देखें अब क्या करता है यह?

एक बीच लोगों ने उसे सूचना दे दी है कि कोठीवाल अब उन्हें चेक देते हैं जो एक महीने के बाद भुना करते हैं, इसलिए ज्यादातर लोग अपने चेक कम दाम में

दूमों को दे देने हैं। दाग-मझी-रफूनीरी की कटौती तो चन ही रही है। पावरलूम ने हाथ के कारीगरों को अहमियन बम कर दी है—

रेहाना का ज़िम गेड 'बज़ारम' था उमी गेड दोगहर के बकन ध्वानक ही मनीन के यहाँ अन्नाकटक पडा। एक नज़र में तो वह पड़वान में ही नहीं आया। एकदम ने हुलिया हो बदनी हुई। न लुंगी, न टोपी, न दाढ़ी की झुट्टियाँ। ग़दर का पात्रामा-कुत्ता पड़ने, नंगे मिर, कनीन भेष, पान दबाये—किमी नेना ज़मे अन्दाब में वह आया और मनाम करके मचिया पर बैठ गया।

"धैरियन म है न?"

मनीन ने यह मथान इस ज़बाब की उम्मीद में किया था कि वह रिवाज के अनुसार 'ग़ुदा का फ़डन है' कहेगा, लेकिन उसने तो ऐसी धैरियन गुरु की कि मनीन दंग रह गया।

"देखो मनीन, अब एत्तर के काम नाई चलिए। अब कुछ करे के होइए। एक दिन हम गये रहे दीनक मल्लिक किये, अउर एक दिन कौनसला बदल किये। ऊ कहें कि लाल झगडा पार्टी के मेम्बर हो जाओ, त कुछ किया जाय। अउर हम हो गयेन। अब त हम भामद-वामद भी देखते। देखी तू कुछ करी अब। हमरी बिरादगी में इ जो का कहेतेन, भरम्टाचार फइला है, एके खिलाफ कुछ करी। हमरी लान झगडा पार्टी तारा माय देइए। मायी ऊदन हममें कहेन्हे अउर साथी मोबीन मान्ट भी—"

वह देर तक बड़बडाता रहा और मनीन मुनता रहा।

तो यह कम्युनिस्ट पार्टी का सीहर हो गया है अब। और कुछ तो इससे हो नहीं सका। चला है अब सीढी करने!—मनीन सोचता है और अल्ताफ को मिगरेट पेश करता है। यह मिगरेट उसने मऊ में मिसी थी। किसी नेदी थी। बार-पाँच मिगरेटें थीं उस पैकेट में, त्रिनमें में एक अभी तक बची हुई थी। ग़ुद तो पी नहीं, दोम्न-मित्रों को पिना दी बर्त। एक अन्नाक भी पो ने। लेकिन उसने इनकार कर दिया। अपनी जेब में उसने बीडी का बण्डल निकाला और उसमें से एक बीड़ी निकालकर माचिस की तीली रगड़ने लगा।

"तू रिमो म्या, हम त बिड़िये पीएने। मिगरेट त बुरजवा सोप पिपेतेन!"

"इ बुरजवा का होने म्या? कउनो गान्धी है का?"

अल्ताफ हँसने लगा।

"गानियं समझ लेब, मगर गाली नहिने। इ एक कनाम होते। तूहें न समझ में अइए। हमहूँ नाही जनते कि का होने त कनाम-फलास। हमरे कुछ समझ में नाही अउते। इ सब उ कमरेट भोग बोनेनेन, न हमहूँ मोख सोयेन!"

"इ कमरेट का होते म्या?"

"बहा न कि हम नाही जनतेन। बम हम्म एतना मालूम है कि इ पार्टी तोरा

नाम देए। इ गिरस्ता लोगन के खिलाफ है। इ सेठ लोगन के खिलाफ है। कब्रों चालियो हमरे साथ !”

“हम का करने जा के म्यां ? तुंही जाओ। हममें बहुत काम है।”

“काम त बुरचोदी के लग रहे ते म्यां ?”

“मगर काम त करे के होइए के नाहीं ?”

और अल्लाफ चुप हो गया। उसकी बीड़ी बुझ गयी थी। उसने कई बार उसे फू-फू करके ज़िन्दा करने की कोशिश की, लेकिन जब एक भी चिनगारी नज़र नहीं आयी तो उसने द्वारा माचिस की तीली घिसी और खड़ा हो गया, “अच्छा सलवाने कुम ! फिर आएँगे।”

और वह जिस झटके से आया था, उसी झटके से बाहर चला गया।

15

घंटों में निन रखने को जगह नहीं है। हवीबुल्ला आज ही हज़ से लौटे हैं। मुला-कातियों का ताँता लगा हुआ है। जहाज में उतरते ही बम्बई से ही उन्होंने ट्रंककाल कर दिया था कि ‘महानगरी’ से फ्लां तारीख को पहुँच रहे हैं, लेकिन उस तारीख को न पहुँचकर वे आज पहुँचे हैं। कस्टमवालों ने बखेड़ा खड़ा कर दिया था। अरे अब पहनेवाना हज़ तो रहा नहीं कि अल्ला मियाँ की गाय की तरह सीधे-सीधे चले गये और सीधे-सीधे चले आये। धरे भाई दुनिया बहुत आगे बढ़ गयी है ! बाल-बच्चों का खयाल रखना ही पड़ता है। अब चलते वक़्त बीबी ने दो लेडिस घड़ियों के लिए कह रक्खा था, बिटिया ने टेपरिफ़ांडर मँगवाया था, साहबज़ादे ने सीको-5 जापानी घड़ी और एक कैमरे के लिए आगिरी दम तक ताल्लोद की थी, भला कैसे छोड़ देते ? फिर एम्मान कउन गुनाह है, घर के बास्ते ला रहे हैं, कउनो तस्करी-फस्करी मोढ़े कर रहे हैं कि बुरचोदी के अल्लामियाँ के घुरा लगिए !

लेकिन कस्टमवाले इस तर्क को कहाँ समझते हैं ? आप हाजी हों चाहे कुछ भी हों, उन्हें तो अपने हिससे से मतलब। हवीबुल्ला ने लाग्य मिन्नत-समाजत की कि भाई अब तो मैं हाजी हो गया हूँ, मुझे क्यों सताते हो, एक गरीब हाजी पर रहम करने ! मगर नाहूँ, कस्टमवालों से गुदा ही बचाये तो बचाये। छिनरी के ऎँठ लिये पान सौ रुपये !

हाजी हवीबुल्ला अपने संस्मरण गुना रहे हैं और लोग बड़े ही भवित-भाव से

उनकी ओर टुकुर-टुकुर नाक रहे हैं। वे दीवार से टैक लगाये, आगम के साथ फूम-मासाओं से लदे बैठे हैं और उनके चेहरे पर एक आध्यात्मिक वशाशत छिपी हुई है। अरबियन कट दाढ़ी से नूर टपका पड़ रहा है।

“अठर मुनाओ मियां हाजी साब, कहीं ठहरे रहेब ? जमजम का पानी मिल गया रहा आसानी से ?”

एक अनुभव-सम्पन्न हाजी ने हवीबुल्ला में जब यह सवाल किया तो उन्हें मोका मिल गया अपने मंमरनों को आचन्त मुना डालने का। और वे झुट हो गये।

उन्होंने बताया कि जद्दा में ही उन्हें ऐसा लगने लगा था कि वे अहराम बाघी हुए जन्त में पहुँच गये हैं। अहराम (एक पवित्र सफ़ेद कपड़ा, जिसे हज-यात्री अपने सिर पर बाँध लेते हैं।) तो समुन्दर में ही बँधवा दिया गया। अरे म्यां समुन्दर का भी क्या कहना ! बुरचोदी के, जेहर देखो, पनिय-पानी ! एद्दम नीला ! ई बढकी-बढकी मछरी बुढ़की मारें ! मगर पानी छारा। जहाज में भी वही पानी दिया जाता था कभी-कभी। तोबा-तोबा ! बास में नमक जम जाता था नहाते बहुत।

तो खैर, मक्का पहुँचकर यह देखा कि न कोई पाना है न कचहरी। जरायम नाम की चीज ही नहीं है वहाँ। अल्लाह के घर में भी म्यां जरायम होइए ? वही तो एक मुल्क है जहाँ चोरों के हाथ अब भी काट लिये जाते हैं और दुरों (कोड़ों) की सजायें मिलती हैं। मर कलम कर दिया जाता है।

खैर...रहने के लिए बड़ा बढ़िया इन्तजाम हो गया था। एक कोठरी सस्ते में मिल गयी थी, जिसमें चार हाजी लोग एक साथ रहते थे। इस्तेफाक से चारों हिन्दुस्तानी रहेन। वहाँ हिन्दुस्तानी हाजिन से मियां चिढ़तेन सब। और महाँ के लोग ऐसे हैं जो बुढ़ापे में हज करने जाते हैं, बरना और जगह से तो जवान-जवान सड़कियाँ हज के लिए आती हैं। मगर क्या मजाल है कोई उन्हें बुरी निगाह से ताक दे। कोई बत्तमीजी नहीं होती वहाँ। अरे इण्डोनेसिया में तो यह कानून ही बना दिया गया है कि हज करने के बाद ही सढके-सढकी की मादी हो सकती है।

खैर...तो वहाँ बड़ा आराम रहा। मोअल्लिम भी बढ़िया आदमी रहेन। ('मोअल्लिम' अर्थात् हाजियों के सहायक जो अरब के ही होते हैं।) दोनों टैम भेड का गोश्न पकता था और रोटी। हिन्दुस्तानी हाजी ज्यादातर अपने हाथ से ही पका लिया करते थे। वहाँ एक हज्जिन बेचारी बीमारी पड गयी। सब लोग उनकी तीमारदारी में लग गये।

मगर मियां कमाल देखा 'सफा-मरवा' की पहाड़ी पर जहाँ एद्दम लुजलुज बुढ़े भी बछेड़े की तरह दौड़ रहे थे। अठर हरम शरीफ का तो पूछो ही मत ! संगे-असबद (कावे में सगा एक कासा पत्थर) का बोसा लेने के लिए इतनी भीड़,

दुलनी भीड़ कि कुछ मत पूछो ! लेकिन मियाँ 'जमजम' का पानी हमें वासानी से मिले गोवा । बाकी लोग तो नकली पानी भर लाये हैं...

हाजी हबीबुल्ला दी में भरे बोल जा रहे थे और लोग तल्लीन होकर सुने जा रहे थे । बीच में कुछ लोग उठकर चले जाते थे तो दूसरे लोग वा टपकते थे । हबीबुल्ला का लड़का द्वे में खजूर और जमजम (पवित्र जल) के प्याले लेकर आता तो लोग भक्ति-भाव में तबरेक ग्रहण करते और फिर तल्लीन हो जाते । वह सिल-मिना दोपहर तक चलता रहा । फिर हाजी साहब उठकर नमाज पढ़ने चले गये और भीड़ धीरे-धीरे छंट गयी । हबीबुल्ला का लड़का स्कूटर लेकर तबरेक बाँटने के लिए निकल पड़ा । खजूर, अरब की मिट्टी, आवे-जमजम, तस्वीह और चाकलेट । यह चाकलेट नये फैशन का प्रतीक है । अपने दोस्तों की पैली में उसने एक-एक चादनीज पेन भी बाँट दिया था ।

16

शाम का वक़्त है । आकाश पर बदली छायी हुई है । लगता है पानी जोरों से बरसेगा । इकबाल अभी तक स्कूल से नहीं लौटा । मतीन और अलीमुन चिन्तित हैं । मतीन के पान कनान बिल्कुल ख़त्म हो गयी है, मगर उल्ला तानीवाले ने उधारी पर कतान देने से इनकार कर दिया है, अतः वह चुपचाप हाथ-पर-हाथ धरे बैठा है । करघा कई दिन से ग्रामीण पड़ा है । अलीमुन रोज़ सुबह घाँसती-घाँसती नीचे उतरती है और करघे पर जमी धूल साफ़ करती है । मगर कोई फायदा नहीं । जब कतान ही नहीं है तो करघा क्या अपने से साड़ी बिन देगा ?

नौकरियों की जब तनदवाह बढ़ती है तो वे खुश होते हैं कि अब पहले से ज्यादा पैसा मिलेगा, लेकिन जब वे बाज़ार की ओर निकलते हैं तो पता चलता है कि हाल अब पाँच रुपये किलो की जगह आठ रुपये किलो बिक रही है और उन बेचारों के सारे उत्साह पर पानी फिर जाता है । ठीक यही दशा इन दिनों यहाँ के बुनकरों की है । पहले तो इस बात के लिए जी-तोड़ कोशिशें की गयीं कि एक सोमायटी बन जाय तो सबों की स्थिति सुधर जाय लेकिन वह नही बन पायी । फिर पावरलूम की बाढ़ आयी, लेकिन जल्दी ही उसका जादू उतर गया । हाथ की कच्चा के आगे मशीन की कच्चा का चमत्कार नहीं चल सका । तब गिरस्तों को अपने कारीगरों की अहमियत फिर समझ में आयी, लेकिन अब ज्यादातर

कागीरों ने कजं-कजं सेकर अपना बारोबार शुरू कर दिया था। हालांकि दम स्थिति ने इन्हें पहले से भी बदतर हासत में ला दिया है। पहले तो उस एक ही गम था कि गिरस्ता की तावेदारी करनी पड़ती थी, लेकिन वह तो चिन्ता नहीं रहती थी कि बतान वहाँ से आयेगी? उमका इन्तजाम तो गिरग ही करता था, लेकिन अब तो कजं की कई-कई पत्तें जिस्म पर चढ़नी जा रही हैं और मुक्ति का कोई उपाय नज़र नहीं आता। करघे का कजं असग, कनान का कजं अनग, यनिये का कजं अनग, कपड़े-मत्ते का कजं असग, बीमारी-ईमारी का कजं असग... भला वह भी कोई जिन्दगी है। कितनी-कितनी मेहनत से माड़ी बिनो, फिर उसे बाज़ार से जाओ और वहाँ क्या मिलता है? चेक! जो महीने-भर बाद भुनता है। सोसायटी के जरिये तो बड़े-बड़े की साढ़ियाँ ही बिकती हैं, गरीबों का भला कौन पूछता है? मतीन ने सुना है कि अब तो कुछ फालतू की कटौटियाँ भी शुरू हो गयी हैं। गोलघर में भी और गिरस्ता लोगों की कोठियों में भी। आठ सौ की साड़ी पर पचीस रुपये, छः सौ की साड़ी पर बीस रुपये, चार सौ की साड़ी पर पन्द्रह रुपये... इसी दर से कोठीवाल हर साड़ी में से काट लेता है। क्यों काट लेता है, पता नहीं।

कड़कड़ कड़कड़ कड़क !

आकाश पर बिजली चमकती है और बादलों की गर्जना से वातावरण गुंज उठता है। अलीमुन भयभीत हो जाती है।

“इ एकबलवा हरमिया कहाँ रहि गोवा?”

वह भुनभुनाती है और अंगीठी में कोयला दहकाने लगती है। टण्ड अचानक ही बढ़ गयी है।

बाहर बारिश शुरू हो जाती है।

तभी इकबाल दौड़ता हुआ घर में घुसता है और ऊपर पहुँचकर अपने भीगे धालों को निचोड़ने लगता है। उसके कपड़े भी भीग गये हैं, लेकिन बदलने के लिए दूसरे कपड़े नहीं हैं। अतः वह बुशट उतारकर अंगीठी के पास बैठ जाता है और उसे आग में सेंकने लगता है।

मतीन अपने बेटे के चेहरे को गौर से देखता है। उसे लगता है कि इकबाल अब बड़ा हो गया है। और इसके साथ ही वह यह भी सोचता है कि शायद यह सड़का कुछ सोचने लगा है अब। क्या सोचता है इकबाल?

“कहाँ रहि गये रहे एकबाल?”

वह धीरे-से पूछता है तो इकबाल थोड़ी देर तक चुप रहता है, फिर बताता है कि वह अपने दोस्त के घर चला गया था। दोस्त का नाम है एग्नलाक। उसके अच्चा अल्ताफ खचा के साथी हैं। छोहरा के प्राइमरी स्कुल में पढ़ाते हैं। नाम है उनका मोमीन अहमद अंगारी... और वह जोश में भरकर बताता है कि उनके

यहाँ बहुत-सी किताबें देखीं उसने। और बहुत-से अच्छे-बुरे लेख थे। उन्हीं लेखों को वह पढ़ता रहा।

और बातों-ही-बातों में उसने यह भी बताया कि एखलाक के बच्चा उन दोनों से बहुत देर तक बर्तियाते रहे और तरह-तरह के सवाल पूछते रहे। फिर उसने अत्यन्त भोलेपन के साथ अपनी अम्मा से एक बहुत ही विचित्र सवाल पूछा, “अम्मा तोरे लंग एकटोठे बनारसी माटो नहिने?”

अलीमुन इस सवाल के लिए तैयार नहीं थी। वह दुखी हो गयी। दरअस्त उसकी प्रश्न-इच्छा थी कि वह भी एक बार बनारसी साड़ी पहने, लेकिन यह इच्छा उसकी अभी तक पूरी नहीं हो सकी। इकबाल ने उसकी दुखती रंग पर हाथ रग दिया था। वह ख़ासी हो गयी। मतीन सिर झुकाये चुपचाप जलते-बुझते कोयलों को देखता रहा।

बारिश अब एक गयी थी और हवा तेज-तेज चलने लगी थी। मतीन उठा और अपना टूटा हुआ छाता उठाकर बाहर निकल गया। न जाने क्यों उसका दिल बेहद प्यरा रहा था और वह रूफ खचा के घर जाने के लिए व्याकुल हो रहा था।

इकबाल ने अपनी सैंकी हुई कमीज पहन ली और अंग्रेजी का ट्रांसलेशन करने के लिए बैठ गया। अलीमुन हाँडी-बूली में व्यस्त हो गयी।

थोड़ी देर बाद बारिश फिर शुरू हो गयी।

17

हाजी अमीरुल्ला विशेषरगंज तक पैदल आये, फिर एक रिक्शे पर बैठ गये। चेतगंज।

मेठ गजाधर प्रसाद से मिलना बहुत जरूरी है। मुना है कामता प्रसाद भी रमेनगन में पड़े हो रहे हैं—एम. पी. के लिए। इस बार गरफुद्दीन को एम. एल. ए. के लिए पढ़ा करना है। अल्ला कुर्रह्मान को समझावें कि अब वे बहुत रह लिये एम. एल. ए., दूसरों को मोका दें। अपना क्रोमती वक्त ‘क्रोमी एकता’ में लगायें। यात्री सिनेमा का एक्टरेटाइज छापने से काम नहीं चलेगा। कुछ दीन-इस्लाम की, हदीस-कुरान की बातें भी छापें।

हाजी अमीरुल्ला रिक्शे पर बैठे हुए थे और बहुत तेजी के साथ सोचते चले जा रहे थे। अगर अल्ताफुर्रहमान न माने तब ? अगर शरफुद्दीन को टिकट न मिला तब ? लेकिन हर समस्या का इलाज उनके पास मौजूद था। अल्ताफुर्रहमान अगर रास्ते पर नहीं आते तो देखते हैं बिरादरी का चन्दा कैसे मिलता है उन्हें ? फिर सैकड़ों वोट तो उनकी रिश्तेदारी में ही हैं सिर्फ ! देखते हैं कैसे जीतते हैं ? अगर शरफुद्दीन को टिकट न मिला तो वह निर्दल सड़ेगा। लेकिन सड़ेगा जरूर। चाहे कुछ हो जाय। पर का एक लड़का सरकार में भी होना चाहिए। देखें कामता प्रसाद क्या राय देते हैं ?

रिक्शा चौराहे पर रोकवा दिया उन्होंने और उतर पड़े। रिक्शेवाले को पैसे दिये और तेज-तेज कदम रखते हुए गली में चल पड़े।

सेठ गजाधर प्रसाद गद्दी पर बैठे किसी को फोन कर रहे थे और कामता प्रसाद बहिर्माँ उसल-पलल रहे थे। आँगन में एक आदमी बड़ी मुस्लंदी के साथ भाँग घोट रहा था। थोड़ी-थोड़ी देर बाद वह सिल पर से बल्ला उठा-उठाकर देख रहा था लेकिन अभी बल्ले के साथ धिपककर सिल उठ नहीं रही थी। भाँग की घोटार्ई में कुछ कसर रह गयी थी। वह उस कसर को निकाल देना चाहता था। सेठ गजाधर प्रसाद स्वाद में ही पहचान जाते हैं कि भाँग को अच्छी तरह घोटा गया है या नहीं। 'विजया'(भाँग) के भर्म को आसानी के साथ ममल लेना सबके धस की बात नहीं है।

हाजी अमीरुल्ला चप्पल उतारकर गद्दी पर बैठ गये। कामता प्रसाद ने पान का चौपड़ा उनके भामने कर दिया और वे पान निकासकर उसमें सुर्ती भरने लगे।

"हलो ! हाँ, हम हुई गजाधर। जयरामजी की। ङ मिसल रहलँ ! का कहल रहलँ ? हम ॥ कहली की... हाँ, खँर कउनो बात नाँही, देखल जाई ! रखी ?"

और सेठ गजाधर प्रसाद ने फोन रख दिया। अब तक हाजी साहब का पान भली प्रकार धुल गया था और वे मगन थे।

कामता प्रसाद ने एक बही खोलते हुए सेठ गजाधर प्रसाद को सकेत में कुछ समझाया, फिर वे उठकर भीतर जाने लगे, लेकिन हाजी अमीरुल्ला ने उन्हें रोक लिया।

"त कामता ग़डे होइऐं न ?"

"हाँ-हाँ, बस आपकी दुआ चाही।"

"हम सोची ते, शरफुद्दीनी खड़े हो जायें एमेने खातिर। साथ-साथ लड़े !"

"बाह ! इ बात भैल न काम की।"

और सेठ गजाधर प्रसाद हम प्रकार खुश हो गये मानो उन्हें भाँयो मुराद मिल

गयी। अब हाजी अमीरुल्ला समर्थक अंसारियों के बोट भी उन्हें आसानी से मिल जायेंगे, वरना शहर उत्तरी में बड़ा मंकट था उनके लिए।

कामला प्रसाद ने शट से चाय मँगायी, पान के कुछ चौघड़े और आये, और देर तक इनेकान की गुप्तगू चलती रही।

हाजी ताह्य जब बाहर निकलकर चौराहे पर आये तो दोपहर हो चुकी थी। वे पैदल ही चल पड़े। चौराहे पर एक भी रिक्शा नहीं था। रास्ते में कोई मिला तो ले लेंगे। टिकट के लिए अब पूरा जोर लगा देना है।

18

एक आदमी सरैया की ओर से लुंगी पहने, पान दवाये, कान से ट्रांजिस्टर लगाये, भागा-भागा चला आ रहा था। लाट भैरव के पास फ़रस्तान में लतीफ उससे टकरा गया। वह ताड़ी की तलाश में निकला था। उस आदमी को देखते ही लतिफवा को याद आया कि इ इण्डिया का पाकिस्तान से क्रिकेट टेस्ट चल रहा है। उसकी दुनिया में ये दो चीज़ें अभी पुरानी रंगोनियों के साथ ही मौजूद थी—ताड़ी और कमेण्ट्री। उसे इस बात में वेहद रुचि थी कि पाकिस्तान के कितने रन हुए और भारत के कितने गिलाड़ी आउट हुए।

“कै रन भोवा मियाँ?” लतिफवा उस आदमी के सामने खड़ा हो गया। उस आदमी ने हाथ के इंगारे से बताया कि कुछ नहीं मालूम।

“अंगसरकरवा आउट भोवा के नाही?”

“गवनकरवा बहुत पहिलवें आउट हं गोवा!”

“बाली के फेंकते म्याँ? जहिर अब्सरवा क खेल कइसा है?”

“कुछ समझ में नाहीं अउते म्याँ!”

उगने अपनी नाचारी प्रकट की तो लतिफवा ने उसके हाथ से ट्रांजिस्टर ले लिया और अपने कान से लगा लिया, लेकिन कमेण्ट्री तो अंग्रेजी में आ रही थी, अतः वह भी नाज़ा हाल जान सकने में लाचार हो गया। लेकिन तालियों की गड़-गड़ाहट में उसने यह अनुमान जरूर लगा लिया कि खेल जमा हुआ है और बोला—

“पाकिस्तान जितिए म्याँ! पिच इनके मन माफ़िक है।”

“हमरा घियाल है कि मैच ट्रा हो जइए।”

“सतत वदियो ! देव लियो पाकिस्तान जहर मे जितिए ! अउर काफो रन से !”

और लनिफवा आश्वस्त होकर सरैया की ओर चल पड़ा। वह आदमी गोस गह्वा की ओर जाने के लिए सड़क की दाहिनी ओर मुड़ गया।

ये लोग न पिच का अर्थ समझते हैं न डा का, लेकिन ये शब्द इन्हें रट-से गये हैं। यही नहीं, मिड ऑन और मिड ऑफ जैसे शब्दों का उच्चारण भी ये उसी विश्वास के साथ करते हैं, जैसे क्रिकेट इनका पुरतनी खेल हो, जबकि इनके लोंडे-सपाटियों ने जो बन्सा पकड़ा है वह या तो बांस का है या सन्तरे की पेटी का कोई टुकड़ा। लेकिन इन्हें यहाँ तक याद है कि किस टेस्ट में किस खिलाड़ी ने कितने रन बनाये थे और किसने किसको आउट किया था। वेस्टइण्डीज और आस्ट्रेलिया के खिलाड़ियों के नाम इन्हें जवानी याद हैं, बल्कि रेडियो-ट्रांजिस्टर में कमेण्ट्री सुनकर ही ये इस बात का अभुमान लगा लेते हैं कि इन देशों का कौन खिलाड़ी भविष्य में क्या कर सकता है?

सतीफ जब घर पहुँचा तो अरुनहनिया अपने घर जा चुकी थी। खाना पकाकर उसने घूली-दुआर में ढकना से ढाँक दिया था और अपने छोटे भाई-बहिन को सहेज-कर बली गयी थी कि भन्वा को खाना दे देना। बच्चे बहुत देर तक बाप का इन्तजार करते रहे थे, फिर वे गुड़ी-मुड़ी होकर सो गये थे। सतिफवा सरैया से लौटकर गोलगह्वा में बैठ गया था।

अब तक उसका नशा थोड़ा कम हो गया था और न जाने क्यों आज उसे कमरून की याद आ रही थी। वैसे तो कभी-कभी वह रेहाना को भी याद कर लिया करता था, लेकिन कमरून की याद का आना उसके लिए बेहद कष्टदायक होता था। विस्तर में दुबके हुए मामूम बच्चों का चेहरा देखकर उसे कमरून की याद और भी जोरो से सताने लगी। जब से इस इलाक़े में आकर वह रहने लगी है, कभी-कभी बच्चे उससे मिल आते हैं, लेकिन डरते-डरते। एकाध बार उसने भी कोशिश की कि शरिफवा से मिलने के वहाने उधर जाय, पर यह मुमकिन नहीं हो सका। उसका अपराध भाव उस पर बुरी तरह छाने लगता था।

घाना घाने की इच्छा नहीं हुई उसे और वह दरवाजा उदकाकर बाहर निकल आया। थोड़ी देर तक गली में खड़ा-खड़ा वह कुछ तय करता रहा, फिर पान की दूकान की ओर निकल गया।

इधर इस मुहल्ले में एक विरादरीवाले सड़के ने पान की दूकान खोल ली है। यह ‘किक्की पानवाले’ के नाम से मशहूर है। मोटा-तगड़ा, काला-कलूटा डिस्म, घारीदार बनियान पहने वह दूकान पर बैठा रहता है और कमेण्ट्री सुनता रहता

है। अपनी दूकान में उनमें मक्का-मदीना, अजमेर गरीक, कुरान पढ़कर दुआ मांगती हुई खुदमूरत नज़्की, दुर्गक घोंडा आदि कई तरह के कैलेण्डर टांग रखे हैं और मिगनेट पीनेवालों के लिए एक ओर एक जनती हुई ठोरी सटका दी है।

एक वक़्त उनकी दूकान में बड़ी भीड़ है। किवकी पान लगाये जा रहा है और बढ़बढ़ाये जा रहा है। लोग खूब हँसी-उड़ठा कर रहे हैं। लतिफवा नमस गया कि पाकिस्तान जीत गया है। जब भी पाकिस्तान जीतता है, यह किवकी मुफ्त पान बाँटने लगता है और द्वार की ग़बर सुनते ही दूकान बन्द कर देता है।

लतिफवा ने भी पाकिस्तानी खिलाड़ियों की विजय के उपलक्ष्य में किवकी का एक मुफ्त पान हस्तगत किया और वहाँ से धीरे-धीरे वापस लौट पड़ा—घर की ओर।

19

एक बीच एक ऐसी घटना घट गयी जिस पर स्वयं हाजी अमीरुल्ला को भी विश्वास नहीं हुआ। बी. एच. यू. के एक छात्रनेता का मर्डर हो गया और शरफुद्दीन गिरफ्तार कर लिया गया। पूरी विरादरी में इस समाचार की बड़ी चर्चा रही, लेकिन हाजी मतिउल्ला और हाजी अमीरुल्ला के लिहाज में सारी चर्चाएँ बन्द दिनों के बाद ही दब गयीं। बक़ील हाजी हबीबुल्ला, उन लोगों ने पानी की तरह खपया बहाकर शरफुद्दीन को बेदाग छोड़ा लिया।

मोसम बदलने के कारण ही शायद शरफुद्दीन को जुकाम हो गया था। उसे बार-बार छीकें आ रही थी और नाक से पानी बह रहा था। चेहरा लाल हो गया था। लेकिन कामता प्रगाढ़ से तय था कि वह आज मुबह सवेरे दशाश्वमेध घाट पर उनसे जरूर मिलेगा। इलेक्शन को लेकर कुछ गम्भीर चर्चा करनी थी उन्हें। सो, वह सूर्योदय से पहले ही उठा और फपड़े पहनकर बाहर आ गया।

मैदागिन पर कई रिफ्लेक्सेस गढ़े थे और दो हिप्पियों को अपनी-अपनी ओर आकर्षित कर रहे थे। 'कम आन, कम आन', 'ओनली फोर रोज़', 'ओनली थ्री रोज़'-अंते अंग्रेज़ी ज़ुम्नों का भीड़ा उच्चारण वे किये जा रहे थे और हिप्पियों को रफ़्तों के समान घेरे हुए थे।

शरफुद्दीन को दशाश्वमेध तब से चलने के लिए कोई भी खिन्नावाला तैयार नहीं हुआ, अतः वह पैदल ही चले पड़ा।

इधर कुछ बरगों में इस शहर में हिप्पियों की आमद बहुत तेज हो गयी है। पैन्ट में पैन्ड लगाये, नये बदन या कोई सूती कपड़ा ओढ़े, बात बढ़ाये, गाँजे का दम लगाते हुए और रास्ता चलते अपनी संगिनी में प्यार करते हुए ये हिप्पी पूरे शहर में बिखर गये हैं। 'ये हमारे मुल्क को फिर से गुलाम बनाने की साजिश तो नहीं रख रहे हैं?' शरफुद्दीन सोचता जा रहा है और आते-जाते खिन्नावालों को देखे जा रहा है। शायद कोई ग़ाली खिन्ना नज़र आवे, लेकिन हर खिन्ने पर कोई-न-कोई बैठा हुआ है। सड़क पर पैदल चलनेवाले कम ही लोग हैं। ज्यादा भीड़-भाड़ नहीं है। मिके कुछ बेहतर इधर-उधर झाड़ू लगाते हुए दिखायी पड़ जाते हैं। कभी-कभी हिप्पियों का कोई पैदल जोड़ा भी झटके के साथ बगल से गुजर जाता है। शरफुद्दीन चौक में पहुँचकर बिसनाथ गली की ओर मुड़ जाता है। फिर गली-गली चलकर वह दशाश्वमेध पहुँच जाता है।

घाट पर ज्यादा भीड़ नहीं है। चन्द धार्मिक किस्म की स्त्रियाँ नहा रही हैं, जिन्हें चन्द शोहदे किस्म के लोग देख रहे हैं। कुछ मर्द भी नहा रहे हैं और जलापन कर रहे हैं। घाट-किनारे के मन्दिरों में रामचरित मानस और कीर्तन के कैसेट बज रहे हैं। नाववाले मल्लाह यहाँ भी हिप्पियों के पीछे पड़े हुए हैं। 'कम आन', 'ओनली टैन वीज', 'बोटिंग' आदि जुर्मों के बनारसी उच्चारण यहाँ भी सुनायी पड़ रहे हैं। घाट की गीटियों पर कुछ भिखारी कटोरे लिये खड़े हैं और गंगा मैया की जप-जपकार कर रहे हैं। एक ओर एक धर्मशाले के बरामदे में चन्द लोग सोये हुए हैं, जिनमें दो लड़कियाँ भी हैं। एक लगभग पाँच वर्ष की और दूसरी लगभग चौदह वर्ष की। पहली लड़की ने एक गन्दा-सा फॉक पहन रखा है और दूसरी लड़की के शरीर पर एक फटी-सी धोती लिपटी हुई है। उसकी धोती अस्त-व्यस्त हो गयी है और चित लेटी उस लड़की का एक तन्हा स्तन कबूतर के बच्चे की तरह झाँक रहा है। सामने गंगा के उस पार बबूल के दरख्तों से मूरज भगवान झाँक रहे हैं।

इस नये जमाने की सुबहे-बनारस यही है !

रामता प्रसाद जरा देर से पहुँचे। आते ही उन्होंने शरफुद्दीन को साथ लिया और जगर आकर एक हलवाई की दूकान में घुस गये। वहाँ उन्होंने ताजी-ताजी जलेबी दही के साथ खायी, फिर चने की घुघनी के साथ चार-चार पुरियाँ जमायी और फिर बाहर आकर एक गली में प्रवेश कर गये। वहाँ एक बंगाली बाबू के मकान में वे बेझिझक घुस गये। बंगाली बाबू 'दादा' कहे जाते थे और शक्ल से ही बड़े अनुभवी लग रहे थे। इन्हें देखते ही वे धुश हो गये और अपनी निछरौं धोकी पर

उन्हें बँटाकर मुँद खड़े हो गये। उन्होंने खड़े-खड़े ही एक संक्षिप्त-सा भाषण दिया, जिसका सुनो-सुनाव यह था कि अगर चुनाव जीतना है तो कुछ करना होगा। 'कुछ' का मतलब ऐसा कुछ जिससे जनता का विश्वास बढोरा जा सके। और जागे की बातें फिर संकेत-भाषा में हुईं। मगर उन बातों के अर्थ अस्पष्ट नहीं रहे। चुनाव के दोनों प्रत्याक्षी जनता का विश्वास बढोरने के लिए राजी हो गये और दादा के मकान से बाहर निकल आये।

दनाखदमेध में गोदोलिया तक पैदल चलकर ये लोग गामा¹ की दूकान पर पहुँचे और एक-एक मर्छ पान जमाकर एक रिक्के पर बैठ गये। रास्ते में कामता प्रसाद ने गफुद्दीन से कहा—

“तू त जेल जाय के पूरमपूर नेता हो गइल !”

20

मर्तीन दर्रर नागता किये ही करघे पर बैठ गया है। बाज उसे किसी भी तरह साड़ी पूरी कर देनी है। मेठ कामता प्रसाद ने कहा है कि इस बार नक़द पैसे मिल जायेंगे।

मर्तीन के नामने उमीन पर भोला बैठा हुआ है और अत्यन्त तल्लीन होकर उसकी बिनकारी देख रहा है।

मर्तीन की उँगलियाँ जब दरकी पर चलती हैं और थोड़ी देर की खटायुट के बाद जब तानी पर एक मुन्दर-सा फूल गिर उठता है तो लगता है कि इन ऊबड़-पाबड़ रूचि में कोई-न-कोई जादू छिपकर बैठा हुआ है।

पिछली बार भोला ने देर मारे सवाल किये थे मर्तीन से और उसने उनका उत्तर इन प्रकार दिया था कि नारी बातें लगभग दाजानक-सी हो गयी थी। इस बार न जाने क्यों उसने कोई भी सवाल नहीं किया है। वह चुनचाप बैठा हुआ है और मर्तीन की उँगलियों को देख रहा है। उँगलियाँ धागों पर फूल पिलाने में व्यस्त हैं। एक नीला फूल गिर चुका है, दूसरा जाल रंग का फूल गिरने की तैयारी में है।

अचानक दरवाजे में एक छाया काँपती है और ओझल हो जाती है।

1. बनारस के गोदोलिया बाजार में पान की प्रसिद्ध दूकान।

मतीन के भीतर धुक-धुक होने लगती है। न जाने क्या बात है कि नजबुनिया का एहसास मात्र ही उसे विचलित कर देना है।

आज वह रात-भर यही रहा है। कल शाम को ही अलीमुन की तबीयत ज्यादा बिगड़ गयी थी। उस वक़्त नजबुनिया अपनी अम्मा के साथ यहाँ आयी हुई थी। अम्मा ने उनसे कहा था कि वह यही रुक जाय और अलीमुन की देख-भाल करे। मतीन तथा इकबाल के लिए पाना-बाना पका दे। और नजबुनिया रुक गयी थी। लगता है वही इस वक़्त नाश्ता लेकर नीचे उतरती है। भोला की बजह से सामने नहीं आ रही है। पर्दा जो है। मतीन इस पर्दे को अपने बग़न से देखता आ रहा है। उसकी माँ तो बग़ के मुँह की तरह खुद को गोल-मटोल छोट के नकाब में बन्द करके बसा करती थी। अलीमुन भी पर्दा करती है और वह नजबुनिया भी। उसे हँसी आ जाती है।

“अरे आ जा, कोई नहीं, अपने भोला हैं।”

वह एक झटके में अपनी पूरी परम्परा को तोड़ देना चाहता है, लेकिन नजबुनिया नहीं आती।

“के हूँ? भउजी हइन का?” भोला पूछता है तो मतीन सजा जाता है। उधर दीवार की आड़ में नजबुनिया को पसीना आ जाता है। उसके गाल लाल हो जाते हैं, वह सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर चली जाती है।

मतीन करपे से उठ जाता है। भोला भी उठ जाता है।

“जा नास्ता-बास्ता कह ला, फिर आइव।” वह कहता है और बाहर निकल जाता है।

मतीन ऊपर चला जाता है।

अलीमुन छटिया पर बेसुध होकर पड़ी है। कल उसे घून की कई उल्टियाँ हुई हैं।

इकबाल स्कूल गया है।

मतीन एक निचरी चारपाई पर बैठ जाता है। नजबुनिया नाश्ता लाकर चारपाई पर रखने के लिए झुकती है तो उसका पूरा जिस्म मतीन के सामने झुक जाता है। मतीन एकटक उसे देखता है और थोड़ी देर तक देखता रहता है। नजबुनिया चली जाती है।

उमगे माग्ना नहीं किया जाता। वह जल्दी-जल्दी दो-चार कौर निगलकर प्लेट नीचे सरका देता है और चारपाई पर लेट जाता है। गुमसुम, उदास और पड़मुरदा।

अलीमुन आँखें घोलकर उसे देखती है।

“का भोला?” वह अपनी कमजोर आवाज़ में मतीन से एक छोटा-सा सवाल करती है और उसकी ओर करवट बदल जाती है।

“कुछ नाही, सिर पिराते !”

“त नजबुनिया से दबवाये लेव । कहि देव तईसा तेल घरि देय !”

मतीन को यह गराब लगता है । वह महनूस करता है कि अलीमुन उस पर व्यंग्य कर रही है और वह खामोश रहता है ।

लेकिन नजबुनिया बाकई कटोरी में कड़वा तेल लेकर वहाँ पहुँच जाती है । उसने अलीमुन की बातें सुन ली हैं शायद । वह मतीन के सिरहाने बैठ जाती है और अपनी पुष्ट उँगलियाँ मतीन के पक चले वालों में फँसा देती है ।

“तू नजबुनिया से व्याह कर लेव अब । हमरा कउन ठिकाना !”

अलीमुन अचानक ही यह बात कहती है और नजबुनिया उठकर चूली-दुआर में भाग जाती है ।

मतीन गुमसुम पड़ा रहता है ।

थोड़ी देर तक कमरे में सन्नाटा रहता है, फिर अलीमुन इशारे से मतीन को अपने पास बुलाती है ।

“बुरा न मानेव । हम ठीक कहीला । हमरा कउन ठिकाना, नजबुनिया तुम्हें बहुत चाहेती, तू ऐसे बियाह कर लेव । हमी कउनो एतराज नहिने । हम खुद चच्ची से कहि देवा । नजबुनियो से । हमरा त अब चल-चलाव है ।”

और अलीमुन की आँखें भीग जाती हैं । मतीन का गला बुरी तरह फँसने लगता है और वह भोकार फोड़कर रोने लगता है । वह अपना सिर अलीमुन की छाती में धँसा देता है ।

अलीमुन को अचानक फिर खाँसी आ जाती है । खाँसी के साथ खून । नजबुनिया दरवाजे पर गुमसुम पड़ी है । उसके चेहरे पर कुछ नहीं है । वह धीरे-धीरे चलकर पलंग तक आती है और मतीन को अलग करके अलीमुन का खून साफ करने में व्यस्त हो जाती है ।

मतीन न अलीमुन को देखता न नजबुनिया को, वह घुटनों में सिर दिये जमीन पर चुपचाप, किसी बीमार बन्दर की तरह उकड़ूँ बैठा रहता है ।

घरघारी लोकता सीहर भी है और मदनपुरा के बंगारी भी। बस शरफुद्दीन और कामता प्रमाद भी इस ओर आने थे, पर आज वे नहीं हैं। चउमुहानीवाले रेस्टोरेण्ट में तड़ित बनर्जी नाम का नम्र-तड़ंगा स्लिम बोंडोवाला, अपनी भूरी मूँछों और कंजी आँखों से सबको आकर्षित करनेवाला एक बंगाली युवक बंगला मिश्रित हिन्दी में कोई भाषण झाड़ रहा है, जिसे सारे उपस्थित जन ध्यानपूर्वक सुन रहे हैं। तड़ित बनर्जी के उत्तेजक भाषण पर लोग मुग्ध हैं।

दइयान दा और मन्नान दा बाहर से ही तड़ित बनर्जी का भाषण सुनते हैं और बने जाते हैं।

"देइयो ध्या, हम ठीक बहे रहेन के नाहीं?"

"हाँ मियाँ!"

"हमैं काँदे अलईपुरवाले शरफुद्दीन नेता और चेतगंजवाले कामता नेता बता दिऐ रहेन कि एना पारो कुछ-न-कुछ गड़बड़ जरूर होइए। सुन लियो न इ तकरीर?"

"हाँ मियाँ, ठीक कहवे यों। बिल्कुल जहरबुझी तकरीर बोलत रहा इ बनरजिया!"

"बली, हाजी चूतर किये चला जाय। उन्हें भी बतावा जाय।"

"नाहीं मियाँ, मैं त घर जावे यों।"

मन्नान दा टरकाना चाह रहे थे, पर दइयान दा उन्हें जबदस्ती खींचकर हाजी चूतर के यहाँ ले गये। आखिर कुछ-न-कुछ तो मोचना ही होगा।

दशहरा मजदीक आ रहा है। बनारस शहर में बड़ी बहल-पहल है। मुहल्ले-मुहल्ले में रामलीलाएँ हो रही हैं। रामनगर की रामलीला तो बहुत पहले ही शुरू हो गयी है। वहाँ तो इकतिस दिन तक लीला होती है। राजा साहब खुद कराते हैं। फिर इ वाले राजा साहब तो और भी दिलचस्पी लेते हैं। पड़े-लिसे हैं न, इमीलिए! संस्कृत में पी. एच. डी. हैं। अपनी पुरानी परणरा निवाहने के लिए अब भी वे 'भरत मिनाप' के रोज हाथी पर सवार होकर नगर में निकलते हैं और बनारस की जनता को अपना दर्शन देते हैं। मैदागिन पर तो भीड़ लग जाती है उस रोज। एकदम जन-समुद्र।

इधर मदनपुरा के इलाके में दुर्गापूजा की तैयारी जोरो पर चल रही है। बंगाली टोला में जगह-जगह दुर्गा की प्रतिमाएँ बन रही हैं। मिट्टी की धूमूरत म्मियाँ। चतुर्भुजा। अमुरों का दमन करती हुईं। लेकिन इन माटी की देवियों को यह भला कहीं पता है कि इनके भक्तों में भी अनेक जन अब असुर सम्प्रदाय में दीक्षित हो गये हैं।

यहाँ मदनपुरा में दो गलियाँ ऐसी हैं जिनको लेकर बड़ा विवाद है। एक गली ऐसी है जिनमें मुसलमानों की आबादी बहुत ज्यादा है और हिन्दू चाहते हैं कि दुर्गा की प्रतिमा उनी गली से होकर गुजरे। मुसलमान नहीं चाहते कि ऐसा हो, वरना उनका ईमान शायद चतुरे में पड़ जायेगा। दूसरी गली ऐसी है जहाँ हिन्दू आबादी ज्यादा है और उस गली में मुसलमानों ने एक इमाम चौक बना रखा है। वे वहाँ नाजिया बैठते हैं और हिन्दू नहीं चाहते कि ऐसा हो, वरना उनकी आस्था पर शायद चोट पहुँचेगी।

उस तरह हर मान दशहरे और मुहर्रम के अवसर पर इस शहर के प्रशासन की वापिक परीक्षा हो जाती है। अगर परीक्षा में वह सफल रहा तो कोई बात नहीं और अगर असफल हो गया तो अधिकारियों का ट्रांसफर।

जुमा का दिन है। मस्जिद में विरादरीवालों का ताँता लगा हुआ है। सफेद लुंगियाँ, सफेद कुर्ते और सफेद टोपियाँ। जिधर देखिए, सफेदी-ही-सफेदी। सिर्फ एक व्यक्ति चारखाने की लुंगी पहने हुए है, लेकिन वह मदनपुरिया नहीं है। हाजी अभीरुल्ला घघर आये थे अपने बिजनेस के सिलसिले में, नमाज का वक़्त हो गया तो मस्जिद में चले आये।

घुट्ठा घुट्ठा होता है और जमात खड़ी हो जाती है। पेश इमाम पढ़ता है—

‘अलहमदुलिल्लाहे रब्बिल आलेमीन।

अर्रहमानिर्रहीम।

मालिकेयीमेद्दीन।

इय्याक ना अबुदो व इय्याकना अरतईन।

एहदेनस्तेरातल मुस्तकीम व तेरातल्लजीन।

अन अम त अलैहिम

गैरिल मग दूये, अलैहिम बल द्वाऽनीन !’

‘हम उस अल्लाह की तारीफ करते हैं जो सारे आलम का मालिक है। जो रहम और मेहरबानी करनेवाला है। जो फैसले के दिन का मालिक है। या अल्लाह ! हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझी से मदद चाहते हैं। तू हमें सच्चा रास्ता दिया, जिस पर चलनेवालों से तू ग़ुम होता है। ऐसा रास्ता नहीं, जिस पर चलनेवालों पर तेरा गुजब होता है...’

दो रकात फ़ाड़ नमाज के बाद मुन्नत और नफिल की अन्य रकातें पढ़ी जाती हैं। फिर पेश इमाम एक छोटी-सी तकरीर करते हैं, जिसका सुब्बो-सुबाब यह होता है कि दुर्गा की मूरत उम्मत-रसूलिया की गली में नहीं आनी चाहिए !

आमीन !

हाजी अमोरल्ला नमाज पढ़कर बाहर निकलते हैं और मोदीलिया तक पैदल आकर एक रिश्ते पर सवार हो जाते हैं।

दुर्गा पूजा !

आगे-आगे दुर्गा की प्रतिमा और पीछे-पीछे शोर मचानी भीड़। एक ऐसा शोर जिसका अध्यात्म में कोई मनलव नहीं। ठीक इसी तरह का शोर उस वक्त भी होता है जब ताजिए का झूस निकलता है। घमें दोनों ही अवसरों पर सड़क छाप हो जाता है। वह मरेआम मिर के बल पड़ा हो जाना है। लेकिन फिर भी सोंग कहते हैं, यह सत्य है और निफं यही सत्य है। इस सत्य के लिए सोंग कट मरते हैं।

दुर्गा की प्रतिमा जैसे ही अबाछिन गली में प्रवेश करती है, एक छत में इंट का एक नन्हा-सा टुकड़ा हम तरह फेंका जाता है कि वह ठीक दुर्गा के सिर पर आकर गिरता है और शोर मचाती भीड़ का ध्यान भंग हो जाना है। सबसे आगे बस रहा गुर्रधारी, 'दादा' नाम के मशहूर—नडित बनर्जी भीड़ को एक संकेत करता है और भीड़ रुक जाती है। भीड़ में दो मुच्छड़धारी सोंग बाहर निकलते हैं और भद्दी-भद्दी गालियों में पूरी गली गूँज उठती है।

अधानक छन से बारिश होने लगती है। पत्थरों, इंट के टुकड़ों और खाली बोतलों की बारिश ! फिर पिगा हुआ मिर्चा और सेजाव ! भगदड़ मच जाती है।

घोड़ी ही देर में जबाबी कार्रवाई शुरू हो जाती है। छुरे निकल आते हैं। बन्दूकें निकल आती हैं। कई घरों में, कई दूकानों में आग लगा दी जाती है। सड़क पर जो भी दिशायी देना है, मार डाला जाता है। धून-ही-धून ! आग-ही-आग ! मनुष्य के भीतर छिपा हुआ अमुर बाहर आ जाता है।

काशी देर बाद पुलिस आती है, जैसा कि उसका मिदान्त है। मौके पर पहुँचकर घोड़ी देर तक पुलिस खामोश पड़ी रहती है। फिर हथेली पर धंगी टोकती हुई कहती है, 'ठीक है, और मारो सानों को !' और धूद भी उस नेक काम में जुट जाती है।

पूरा शहर फनफना उठता है। इतना कह देना ही पर्याप्त है कि हिन्दुओं और मुसलमानों में झगड़ा हो गया है। इस मुल्क में अब हिन्दुओं और मुसलमानों के झगड़े का सीधा अर्थ है—दंगा !

सो, बनारस शहर में दंगा हो जाता है।

दालमण्डी में जो हिन्दू खरीददारी कर रहे थे वे छुरे और छुरों के शिकार हो गये। सड़कियों और जवान औरतों पर जिस्मानी हमला किया गया। बंटवारे का बदला भला और कैसे लिया जा सकता है ?

एक सिनेमाहॉल में फिल्म चल रही थी 'गरीब निवाज'। जाहिर है कि उस हाल में बुर्कापोश औरतें ठप्ठाठस भरी हुई थीं। इस मुल्क का जो फिल्म उद्योग है वह आवागों और स्त्रियों के बल पर ही तो चल रहा है, इसीलिए कभी वह हिन्दू स्त्रियों का भावनात्मक लाभ देने के लिए 'सन्तोषी माता' जैसी फिल्म बना डालता है तो कभी दबो-घुटो, दुखी-उदास मुस्लिम औरतों को 'गरीब निवाज' जैसी फिल्म दिखाकर यह आज्ञासन देता है कि घरवाओ नहीं, बाबा के दरबार में जाओ ! जेम्मे उस हीरोइन के दिन फिर हैं वैसे ही तुम्हारे दिन भी फिरेंगे !

लेकिन उस रोज़ फिल्महॉल के भीतर बड़ी बेरहमी के साथ औरतों को बेइज्जन किया गया और उनमें से कइयों को मार डाला गया।

देखते-ही-देखते मदनपुरा और रेवड़ी तालाब से लेकर चौक हांती हुई यह आग जंतपुरा, छोहरा, अलईपुरा और उधर चौहट्टा लालयां तक पहुँच गयी।

कमकटर बेचारा क्या करता, उसने तड़ से कफ़्यू लगा दिया।

उधर पटानी टोना, छित्तनपुरा, चौहट्टा, कोयला बाजार, आलमपुरा, हनुमान फाटक ने लेकर छोहरा, बड़ी बाज़ार, जंतपुरा, काजी सादुल्लापुरा, बाकराबाद, बगरिया कुण्ड और सरैया तक, उधर मदनपुरा, रेवड़ी तालाब से लेकर बजरहीहा तक कफ़्यू। दंगाइयों को देखते ही गोली मार देने का आदेश। लोग अपने-अपने घरों में बन्द हैं—साप के भय से दरवाँ में छिपी हुई मुर्गियों की तरह। सड़कों पर गिफ़ पुलिस और पी. ए. सी. वालों के बूटों की आवाज़ ही सुनायी पड़ती है। बाकी कुछ नहीं। अपनी गिड़की से कोई साँक तक नहीं सकता।

किन्नी-किन्नी छन पर पुलिसवालों ने अपना पहरा बिठा रखा है। जब वे आते हैं, घर की औरतें उधर-उधर छिप जाती हैं और वे सीढ़ियाँ चढ़कर छतों पर पहुँच जाते हैं। जिनकी छतों पर पुलिसवाने पहरा दे रहे होते हैं, वे पुलिस के भय से ही रान-भर नहीं गो पाते, क्योंकि उन्होंने गुन रक्खा है कि दाम मण्डी में पुलिस और पी. ए. सी. वालों ने मिलकर औरतों की बेइज्जती की है और दूकानें लूटी हैं।

बशीर के घर में नल नहीं है। उनके बच्चे बाहर से पानी लाते थे। पर कफ़्यू में इसका नवाल ही नहीं उठता। बाहर नगर महापालिका का जो नल लगा है उसकी टाँटी टूट गयी है और हमेशा उसमें पानी गिरा करता है। जब से कफ़्यू लगा है, काफी पानी सड़क पर फैल चुका है, लेकिन उसे कोई भर नहीं सकता। बशीर की बीबी अपनी मकान-मालकिन में आटे के साथ-साथ एक भगीना पानी भी माँग माती है और बच्चों के लिए घाना पकाती है। सारे मजदूर बुनकर बेकार हो गये

है। जो नोट मरुप नर बिन्दते है वे अनेन पिरन्नों के यहाँ जा नहीं पा रहे हैं। बानी पर बिन्देवाने भी पिरस के यहाँ साड़ी नहीं पहुँचा पा रहे हैं। यही हान बिन्नी पर बिन्देवानों का भी है। रेखा पूरा हो चुका है, पर बाहर जाने का मवान हो नहीं उठता। मतीन की साड़ी त्रिम दिन पूरी हुई उसी दिन दंगा हो गया। वह भी हाथ-नर-हाथ रखकर बैठा है। सभी बुनकर परेगान हैं। अघिकांत घरों में नन नहीं है, बाटा खान हो चुका है, भूखों मरने की मौज आ गया है, लेकिन कल्लू में कोई छूट नहीं।

गरकुहीन नेता और अन्ताकुरंद्मान एहीटर को पास मिना हुआ है। वे कभी-कभी घूम जाते हैं और नोनों को दिनासा दे जाते हैं। एक रोज कामता नेता भी इधर आने थे। गरकुहीन नेता और कामता नेता ने मिसकर कुछ मुहल्लों में गत्ता भी बँटवाया है। निछने दिनों दंगे के मिसमिने में जो गिरफ्तारियाँ हुई थीं, उनमें से कुछ सोनों को इन्होंने रिहा भी कराया है। गरकुहीन नेता तो अब घर-घर जाकर हाल मवर ने रहे हैं। साथ में हनिरबा की भी लिये हुए हैं। रकूत पचा, लतीक, बशीर, अन्ताक, जनीस, कल्लू आदि सबके घरों में इन्होंने रमद पहुँचायी है। मतीन के यही भी एक सोना बाटा मित्रवाया था, लेकिन उसने वानस कर दिया।

अन्ताकुरंद्मान भी सोनों की मदद करना चाह रहे हैं, पर गरकुहीन की मदद बीन पड़ी आ रही है। अन्ताकुरंद्मान को यह अच्छा नहीं लगता। बाखिर इन्हें भी तो इमेकान मड़ना है। अपनी माकँट-बैल्पू बनाने का यही तो एक मौका है। अगर अब बूके तो फिर कहीं के न रहेंगे। अतः वे एक दूसरा तरीका अन्नाते हैं। सोनों की मदद की चिन्ता छोड़कर वे अपना नारा दिनाम 'कौनी एकता' का एहीटोरियन निखने में मगा देते हैं। बैसे भी इन दिनों पूरा अखबार दंगे की मर्न-मने खबरो में भरा रहता है। एहीटोरियन में वे ऐसे-ऐसे मुद्दों को उठाते हैं कि साथ पाठक समुदाय मदगद हो जाता है। कभी इस्लाम का बसीला दिया जाता है तो कभी बेह्राद की अहमियत समझायी जाती है। कभी जनमंष और आर. एच. एच. की बेनकाब किया जाता है तो कभी मुसलमानों में जातीय उत्साह परा जाता है। सबके कि 'कौनी एकता' की धूम मच जाती है। साथ इन्तजार करते हैं कि हांकर 'कौनी एकता' का ताजा अंक दरवाजे की दरार में डाले और वे उस पर टूट पड़ें।

लेकिन गरकुहीन नेता भी कम नहीं है। वह कामता नेता को लेकर दूने जोर में काम करने लगता है और हिन्तू मुहल्लों में अकेले जाकर इन्हें दिनासा देता है। मुने ने आया है कि इस कठिन घड़ी में कल्लू मुन्हा भी अपनी जोष में कुछ इलाकों का दौरा कर रहा है। साथ कल्लू मुन्हा का नाम उसी आदर के साथ लेते हैं जैसे किसी बनाने में मुन्ताना डाकू का लिया जाता था।

जनता की परेशानियों पर ध्यान देते हुए कलक्टर ने एक रोड कर्पूर में दो घण्टे की दोस्त दे दी। दोपहर बारह बजे से दो बजे तक। और जैसे ही बारह बजा, लोग उस तरह अपने-अपने घरों में निकलकर सड़कों पर चलने-फिरने लगे जैसे पिंजरों में आबाद कर दी गयी जिड़ियाँ पेड़ों पर फुदक रही हों। चठमुहानी पर की दुकानें गड़गड़ गুল गयी और खरीददारी शुरू हो गयी। सब्जी की दुकान में हफ्ते-भर की सड़ी हुई सब्जी दूने दाम में बिक रही थी और लोग थे कि सड़े हुए आलुओं और मूले हुए कद्दुओं पर भुखड़ों की तरह दूटे पड़ रहे थे।

जिन घरों में नल नलों थे, उनके बच्चे छोटी-छोटी पतोलियों और तोटों तक में पानी भरकर रख लेना चाह रहे थे और नगर महापालिका के नलों पर कौबारी मचा हुआ था।

इकबाल अपने एक दोस्त की सायकिल लेकर गोलघर चला गया था। शायद साड़ी का दाम नकद मिल जाय। लेकिन अभी वह नाड़ी खोलकर सेठ को दिखा ही रहा था कि रामनजन दलाल भागा-भागा आया और हाँफता हुआ बताने लगा कि अभी-अभी छोहरा पर किसी मुसलमान ने किसी हिन्दू को छुरा मार दिया है। और दुकानें फिर पटापट बन्द हो गयीं। इकबाल साड़ी की पेटी गद्दी पर ही छोड़-कर लौट पड़ा। मुहल्ले में आते-आते उसने सुना कि चौकवाले मजार में किसी हिन्दू ने आग लगा दी है और मजार जलकर राख हो गया है।

कर्पूर फिर लगा दिया गया। पसी फिर पिंजरों में बन्द कर दिये गये।

रात के लगभग दस बजे प्रह्लादघाट की ओर से नारों की आवाज इस प्रकार आती है कि पूरा इलाका फनफना उठता है—

हर हर महादेव !

हर हर महादेव !

जवाब में किसी मस्जिद से दूसरा नारा लगता है—

नार ए तकवीर

अल्ला हो अकबर !

और लगता है कि आज रात बनारस का एक हिस्सा साफ हो जायेगा।

लोग अपने-अपने घरों में व्यस्त हो जाते हैं। औरतों को आदेश दिया जाता है कि वे कौरन मिर्चा पीसकर उसका चुस्का तैयार करें, ताकि शत्रुओं की आँखों में उल्लेख जा सके। और मंद सारे छतों पर जाकर छिप जाते हैं। जिन छतों पर पुनिम का पहरा है वे लोग भीतर-ही-भीतर काँप रहे हैं, लेकिन बाकी छतों पर पन्थर और ईंट के टुकड़े इकट्ठे किये जा रहे हैं। घर-भर की पुरानी-धुरानी शीशियाँ जमा की जा रही हैं।

मतीन की अन्त कुछ काम नहीं कर रही है। वह थोड़ी देर तक गुमगुम बना रहता है, फिर इकबाल को माथ लेकर छत पर पहुँच जाता है और वहाँ से देखता है कि सतिरुवा अपनी छत पर मुहर्रम के अघाड़ेवाली लोहे की तलवार लिये टहल रहा है।

“अब का होइए?”

मतीन अपने बेटे से पूछता है तो इकबाल चुप रहता है। वह कर ही क्या सकता है? न तो वह तनवार चला सकता न किसी की आँख में मिर्च की चुकनी छोड़ सकता।

नारों का शोर काफी देर तक हवा में गुँजता रहता है। फिर उसकी जगह पुलिस की सीटियाँ ले लेती हैं और पूरा वातावरण किसी आदमखोर बाघ से आवृत्तित जंगल की तरह भयानक हो उठता है।

मतीन अपने बेटे के साथ सीटियाँ उतरकर नीचे आ जाता है। सड़कों पर सीटियाँ रात-भर चीखती रहती हैं।

सुबह एक और मूचना मिलती है कि इस साल न तो नाटी इमली का भरत-मिलाप होगा और न चेतगंज की मककटइया निकलेगी। इस खबर से मुसलमानों का एक वर्ग बेहद घुस होता है, लेकिन हिन्दुओं का एक वर्ग बुरी तरह भड़क उठता है। पचास वर्षों से जो रिवाज चले आ रहे हैं उन्हें बन्द करने की जुर्रत आखिर कैसे हुई? जरूर इसमें किसी मुसलमान नेता का हाथ है।

और फिर छुरे चलने लगे। आगजनी होने लगी। सगा कि यह बनारस अब बनारस नहीं रह पायेगा।

लेकिन आश्चर्य कि कामता नेता, शरफुद्दीन नेता अल्ताफुर्रहमान एडीटर और दादा सद्दित बनर्जी के सदप्रयासों से जल्दी ही (अगर चालीस दिनों को 'जल्दी' माना जा सके तो) स्थिति पर काबू पा लिया गया और अखबारों ने यह समाचार मोटे-मोटे अक्षरों में छपा कि नगर की स्थिति अब सामान्य हो चली है और प्रशासन ने दंगे को पूरी तरह नियन्त्रित कर लिया है।

इसके साथ ही यह समाचार भी छपा कि मामले की जाँच के लिए एक पूरा-पूरा आयोग बैठ चुका है और दोषी व्यक्तियों को सख्त-से-सख्त सजा दी जायेगी।

लेकिन अखबारों ने यह समाचार नहीं छपा कि कथूँ के दौरान न बशीर मियाँ के घर को पानी मिला, और न मतीन के घर को आटा।

जुमा के रोज खोजित कुआं और पीली कौड़ी की मस्जिदों में बुनकरों की सभाएं हुईं और यह तय किया गया कि कोई भी बुनकर न औरत न मर्द—अब सिनेमा देखने नहीं जायेगा, क्योंकि एक सिनेमाहॉल में उनकी औरतों की बेहुरमती हुई है।

नोगों ने जोरदार शब्दों में इस प्रस्ताव को पास किया और नमाज पढ़ी। नमाज में खुदा से दुआ मांगी गयी कि या अल्लाह ! दुनिया-भर के मुसलमानों की तू हिफाजत कर !

लेकिन अगले ही दिन अंसारी स्कूल के अनेक बुनकर लड़के जब जमुना टाकीज में छिर-छिराकर जा घुसे तो विरादरीवालों की अपनी कसम तोड़नी पड़ी। औरतें मन-ही-मन गुग हुईं और नकाब ओढ़-ओढ़कर चित्रा, कन्हैया चित्र मन्दिर, साजन और प्राची की ओर निकल पड़ी।

22

“का मियां, आज आजाद पारक में मुसायरा है ने ?”

“हां मियां, बहुत बड़ा मुसायरा है। बहुत अच्छे-अच्छे सायर आवेवाले हैं। अउर आजाद पारक में बहुत सजा भी है। कई हजार तो बिजली की लतर लगी है। अरे समझीते कि करीब पचासन हजार लतरिया लगी होइए !”

“का मियां, एक्की सायरा हैं के नाहीं ?”

“नाही मियां सायरा एक्की नाहीं हैं।”

दरअस्त यह मुसायरा हाजी अमीरुल्ला के प्रयास से हो रहा है और उनका विचार है कि शायरी करनेवाली औरतें फ्राहशा होती हैं। उनको बुलाने का मतलब है मुहल्ले के लड़कों को खराब करना। अतः शायराओं के नाम पर उन्होंने सख्त एतराज किया। और नतीजतन एक भी शायरा नहीं आ सकी इस मुसायरे में।

“का मियां एलाउंसरी केकी है ?”

“उमर कोरैसी की एलाउंसरी है मियां ! अच्छा एक बात है, कि उमर भी बड़ी अच्छी एलाउंसरी करतेन। मज्मा के एहम कण्ट्रोल किये रहेते न।”

नायगाने में चर्चा गरम है—

यह मुसायरा ‘हिन्दू-मुस्लिम एकता’ के बैनर पर कराया जा रहा है। इसके आयोजकों में हाजी अमीरुल्ला के अनाया हाजी बलिउल्ला, शरफुद्दीन और कामता

प्रसादजी भी हैं। दंगे के बाद इन लोगो ने कई-कई शान्ति मार्च भी निकलवाये थे, जिनमें 'हिन्दू-मुस्लिम भाई-भाई' के जोरदार नारे लगाये गये थे। अब इस मुशायरे के जरिए यह साबित किया जायेगा कि शहर में वाकई हिन्दू-मुस्लिम एकता कायम हो गयी है और कौमी एकजिहती के लिए अब कोई खतरा नहीं रह गया है। इस नेक काम को खूबसूरती के साथ अंजाम देने के लिए इस बार बुनकरों की मजूरी में से धन्दे की रकम भी काटी गयी है !

मुहूर्तों में शाम में ही पहल-पहल बहुत बढ़ गयी है। 'कौमी एकता' के एडीटर और वर्तमान एम. एस. ए. जनाब अस्ताफुर्रहमान साहब बहुत व्यस्त हैं। उर्दू का मामला है, वे नहीं सक्रियता दिखायेंगे तो और भला कौन सामने आयेगा ? हालाँकि गरफूदीन को यह बात अच्छी नहीं लग रही है, क्योंकि इलेक्शन में तो वह भी पड़ा होनेवाला है। लेकिन उसके साथ एक मजबूरी है, कि उसे उर्दू नहीं आती। अगर किसी शायर का मिजाज बिगड़ जाय तो फिर गजब हो जायेगा। सो, इतना-सा ममसौता कर लिया गया है। सुनने में आया है कि अस्ताफुर्रहमान साहब मुशायरा शुरू होने से पहले एक छोटी-सी तकरीर भी करेंगे, जिसमें पिछले दिनों बनारस शहर में हुई गर्मनाक घटनाओं पर रोशनी डालेंगे और साथ ही यह बतायेंगे कि ऐसे मौके पर शायरों और अदीबों की क्या जिम्मेदारी होती है ?

हालाँकि इस्लाम में शराब की सख्त मुमानियत है, पर शायरों के लिए गिहकी का इन्तजाम कर लिया गया है। भई मजबूरी है ! जैसे, इस्लाम में तो तस्वीर की भी सख्त मुमानियत है, पर बुरचोदी के ऐसा सरकारी कानून है कि त्रिन्दगी-भर आदमी भले इस गुनाह से बच जाय, मगर हज के लिए जाते वक्त तो फोटो खिंचाना जरूरी ही हो जाता है, बरना पासपोर्ट ही नहीं बनेगा ! बहरहाल खुदा इसके लिए माफ करेगा। वहाँ कह देंगे कि न तो हमने अपने शौक के लिए तस्वीर खिंची और न शराब खरीदी। एक के लिए गुनहमार सरकार है तो दूसरे के लिए शायर ! शायर तो बहरहाल वैसे ही जहन्नुम में जायेंगे, हो सके तो इस सरकार को भी जहन्नुम में भेज दीजिए !

आठ बजते-बजते लोग आजाद पार्क की ओर चत पड़े। अस्ताफ भी तैयार होकर चउमुहानी पर आ गया और पान की दूकान पर खड़ा हो गया। शायद कोई साथी मिल जाय। ऐसी जगहों में अकेले-अकेले जाने का कोई मतलब नहीं। तभी सतिफवा भी वहाँ आ गया और उसकी मनोकामना पूरी हो गयी। उसने सतिफवा को उकसाया—

“अमाँ पत्तो पला जाय मुसँरवा मे।”

लेकिन सतिफवा बहस पर उतारू हो गया, “अमाँ एक्को सायरा नांही है।

द्रुमों जमिये नहीं। जब मोहतरमा भी रहेंतिन के नाहीं, तब मजा आवेती। देखी ऊहपता में लल्लापुरा में मुसायरा है, हुवां सायरा भी अइयन। हुवां मजा बइए !”

“अमौ चलो, यह मुसायरा कामयाब होइए। बहुत उच्चे-उच्चे सायर आवे-वाला हैं न। उमर कौरंमो की नेजामत है। बड़ा अच्छा बोलैवाला है।”

और मजबूर होकर लतफवा भी अल्ताफ के साथ चल पड़ा।

आजाद पार्क में तिल रगने को जगह नहीं थी। जिधर देखिए उधर टोपियां-टो-टोपियां नजर आ रही थीं। सड़क पर चिनिया-बदाम और नानपताई के गोमचे अपने-अपने गिर पर मिट्टी तेल से चलनेवाला भभका राजाये इधर-उधर पड़े थे और चाय की दूकानों में लोग चाँटों की तरह भरे हुए थे। पार्क के आसपास जितने भी मकान थे उन सबकी छतें भीड़ से भरी हुई थीं। क्षरोणों में औरतें और नरकियां अपना दुपट्टा लहराती चमक रही थीं। पार्क से सटे हुए एक अति प्राचीन पट्टे हुए कुएँ के चबूतरे पर भी लोग बोरा बिछा-बिछाकर बैठ गये थे। पार्क के चारों ओर लोहे की जो छड़ें लगी थीं वे आदमियों के धक्के से हिली जा रही थीं। कुछ लोड़े पाग ही पड़े नीम की डालियों पर भी चढ़कर बैठ गये थे।

पार्क के भीतर इस कदर लोग ठंसे हुए थे कि जमीन की घास नजर ही नहीं आती थी। झाड़ियों के नीचे सरब से आये हुए टू-इन-वन और तरह-तरह के विदेशी टेपरिकार्डस मेहमानों की तरह पसड़े हुए थे। ये आदरणीय यन्त्र बिरादरी-वालों के प्रिय शापरो के कलाम को आत्मसात करने के लिए पूर्णतया कटिबद्ध थे।

अचानक स्टेज पर जनाव अल्ताफुर्रहमान अंसारी का प्रवेश होता है और लोग सतकं हो जाते हैं। हाजी अमीरुल्ला, हाजी बलीउल्ला, हाजी मिनिस्टर, हाजी नजीर, बाऊ दिव्या, शरफुद्दीन, कमरुद्दीन, हाजी हबीबुल्ला, सैठ गजाधर प्रसाद, कामता नेता बगैरह डाइज के बिलकुल करीब सोफों पर बैठे हुए थे। वे अपने कूल्हे बदलते हैं और एडीटर साहब की तकरीर सुनने में तल्लीन हो जाते हैं।

फिर माइक पर आते हैं जनाव उमर कुरैशी ! और बताते हैं कि जनाव नूर इन्दोरी, जनाव राहत इन्दोरी, जनाव बसीम बरैलवी, जनाव सागर निजामी, जनाव तस्नीम फारुकी, जनाव गुमार वाशर्वकवी, जनाव झंझट बलियावी और जनाव नजीर बनारसी आदि मुल्क के कई बड़े शायर तशरीफ ला चुके हैं और जल्दी ही मुसायरा शुरू होनेवाला है।

‘हजरात !

बनारस बहरहाल हमेशा से सुघनगनास शहर रहा है....’

“भाग बुरचोदो के, भोसटियावाले काहे घुसकत आवेतें वे ?”

अभी उमर कुरंछी बनारसवालों की तारीफ का पुल बांधने ही जा रहे थे कि भीड़ में झगडा हो जाता है। गाती-गमीज चित्यम-चुत्या, झड़पी-झड़पा... और उमर कुरंछी बेचारे धवरा जाते हैं। लेकिन स्थिति को जल्दी ही वे नियन्त्रण में कर लेते हैं। उनके आमन्त्रण पर नूर इन्दोरी चीख-चीखकर अपनी गजल सुनाने लगते हैं:

इक मुजस्सम गजल है मेरे सामने
गजल देखकर मैं गजल कह रहा हूँ !

वाह ! वाह ! वाह ! भई वाह ! मुकर्रर इरगाद !

सोग झगड़ा-फमाद धुसाकर वाहवाही सुटाने लगते हैं और मंच की भाषा में, “जैसे-जैसे रात भोगती है, मुशावरे का रंग गहरा होता जाता है।” शामरों को भी और थोताओं को भी अपनी-अपनी भूलो-बिछड़ी महबूबाएँ याद आने लगती हैं और आजाद पार्क में एक अजीब-सा समा छा जाता है।

ठीक उसी वक़्त बिरादरी के प्रतिनिधि शामर नज़ीर बनारसी माइक पर आवे है और तालियों की गड़गड़ाहट से पेड़ों पर सांथी हुई चिड़ियाँ भी जाग जाती हैं।

नज़ीर बनारसी शुरू होते हैं—

रात की ताक में है सवेरा
आगे नागिन है पीछे सँपेरा
मुझ पे मुजरेगी इक रात ऐसी
जागकर तुम करोगे सवेरा
जब तलक बाग में है चहक ले
जाने किस बन में हो फिर सवेरा

और पूरा माहौल एक अजीब-सी उदासी में डूब जाता है।

इस उदासी को तोड़ने के लिए उमर कुरंछी राहत इन्दोरी को आमन्त्रित करते हैं और उनके बाद ही थोताओं की डिमाण्ड होती है कि जनाब मारुफ शरीफ़ी ने बुनकरोशाली नज़म सुनवायी जाय।

तब जनाब मारुफ़ शरीफ़ी बनारसी माइक पर आवे हैं और तहत में (बगैर गाने) अपनी मशहूर नज़म ‘शहर बनारस और बुनकर’ पढ़ने लगते हैं—

इक हसी शहर बसा है सबे दरिया देखो
शहर की गोद में बहती हुई गंगा देखो
मौज-दर-मौज मचलती हुई किरनों का सम्रा
मुबहे-दम शहरे-बनारस का ये जलवा देखो

ये बनारस के हसीं घाट ये दिलकश मंजर
 ही इसी शहर में रहते हैं हजारों बुनकर
 आवे-भांगा में झलकती हैं इमाराते-कुहन¹
 चश्मे-अंजुम² से है नज्जारे में मसरूफ़ गगन
 अक्से-मस्जिद भी वहीं साया-ए-मन्दिर भी वहीं
 कितना दिलकश है जरा देखिए दोनों का मिलन
 ये बनारस के हसीं घाट***

रिशियों-मुनियों ने बनायी है यहाँ अपनी डगर
 नवगे-गीतम भी यहाँ और यहीं राम नगर
 मुहल्लिफ़ कौम के मौजूद मभाविद³ इस जा
 एकता देश की हर मोड़ पे आती है नजर
 ये बनारस के हसीं घाट***

ये इसी शहर में आबाद कबीर औ' तुलसी
 फररे-तहजीबे-वतन⁴ है ये मुकद्दस⁵ घरती
 मरकजे-इल्मो-हुनर⁶ जलया गहे-फ़ियो-नजर⁷
 चश्म-ए-फ़ैज⁸ है सदियों से ये काशी नगरी
 ये बनारस के हसीं घाट***

सनभते⁹ शहर बनारस है जमाने पे अया
 रेशमी कपड़ों से ये शहर है मशहूर-जहाँ
 दस्तकारी से यहाँ लोग गुजर करते हैं
 कारग़रानों से हैं आबाद यहाँ सबके मर्का
 ये बनारस के हसीं घाट***

दस्तकारी की बलंदी को कोई नया जाने
 हाथ के क़र्र से ही आबाद हुए वीराने

-
1. भवनों का प्रतिबिंब ।
 2. तारों की आँख ।
 3. पूजाघर ।
 4. देश की सम्पत्ता का गौरव ।
 5. पवित्र ।
 6. ज्ञान और कला का केन्द्र ।
 7. चिंतन एवं दृष्टि का तेजोमय स्थान ।
 8. अनुग्रह की दृष्टि ।
 9. कारीगरी ।

देस-भगती का जो बापू ने या सपना देखा

सोग बुनते हैं उसी स्वाव के साने-साने .

ये बनारस के हसी घाट***

अपनी सनअत का सिये काम चले जाते हैं

कितने फ़नकार ब-हंगाम चले जाते हैं

साकि मित जाये उन्हें अपनी मशबूकत का सिला^१

सूये-याज़ार^२ सरे-शाम चले जाते हैं

ये बनारस के हसी घाट***

मादरे-हिंद के आँचल को सजानेवाले

बिन्ने-हब्बा^३ के सकदुदुस^४ को बढ़ानेवाले

इधने-आदम ने भी सीखा है तमदुन^५ इनसे

यही बुनकर ही तो हैं तन को छिपानेवाले

ये बनारस के हसी घाट में दिसकश मज़र

हाँ इसी शहर में रहते हैं हजारों बुनकर ।

इकबास पार्क के छोर पर खड़ा-खड़ा थक गया था । उसे यह भी समझ में नहीं आ रहा था कि इन गुजली और नजमों से हिन्दू-मुसलमानों की एकता को क्या सेना-देना है ? इस तरह के मुशायरों का क्या योगदान हो सकता है भला जिन्दगी को बदलने में ?

और वह पार्क से बाहर आ जाता है । सड़क पर सन्नाटा था । सिर्फ़ माइक की आवाज़ दूर-दूर तक गूँज रही थी । वह उस खाली और घामोश सड़क पर चलता हुआ अपने मुहल्ले में पहुँच गया । गली के मुहाने पर खड़ा होकर उसने देखा, सारे-के-सारे मकान यतीम बच्चों की तरह चुपचाप खड़े थे और चाँदनी उन पर हँस रही थी ।

-
१. धम का फस ।
 २. बाज़ार की ओर
 ३. हब्बा की बेटी ।
 ४. पवित्रता ।
 ५. सम्पत्ता ।

न कोई शोर-गराबा हुआ न कोई धूम-धाम, न बारात सजी न खान-पान हुआ। किसी ने जाना, किसी ने न जाना और नजबुनिया का मतीन से व्याह हो गया। वस पाँच आदमी इकट्ठे हुए और पुराने कपड़ों में ही निकाह हो गया।

नजबुनिया मतीन के घर में दुल्हन बनकर नहीं आयी, वह आयी गृहस्विक बनकर। आते ही वह अलीमुन की सेवा-टहल में लग गयी और आस-पड़ोस के लोग दंग रह गये। यह कैसी सौत है भाई, जो सौत की छिदमत कर रही है? न कही गोतिया डाह, न कोई प्रतिस्पर्धा! ऐसा लगता है जैसे अलीमुन और नजबुनिया मगी बहिन हैं।

इकबाल को नजबुनिया अपना ही लड़का समझती है। हालाँकि वह अब काफी बड़ा हो गया है और उसकी मसों भीगने लगी हैं, लेकिन घर में आते ही नजबुनिया उसके बातों में अपने हाथ फेरती है और अपने सामने बैठकर नाश्ता कराती है। उसके इस व्यवहार से मतीन भी आश्चर्यचकित था।

लेकिन एक अजीब तरह का संकोच पूरे घर में फिर भी विद्यमान था। मतीन जब अलीमुन के पास बैठता तो नजबुनिया वहाँ से हट जाती और नजबुनिया जब मतीन से बातियाती होती तो अलीमुन मुँह ढँककर सोने का वहाना करने लगती। इकबाल सिर झुकाकर इधर-उधर टरक लेता।

उम दिन मतीन जब साड़ी लेकर गोलघर जाने के लिए तैयार हुआ तो नजबुनिया उसके सामने आकर खड़ी हो गयी।

“कहाँ?” उसने मुस्कराकर पूछा तो मतीन का दिल कुलबुला उठा।

“जाइते गोलघर!”

“जल्दी अइयो आ!”

नजबुनिया ने अपनी आवाज को पहने की अपेक्षा काफी पत्नीनुमा बनाकर मतीन को यह हिदायत दी तो उसके भीतर एक अजीब-सी चुलबुलाहट जन्म लेने लगी। उसके मन में आया कि वह नजबुनिया के गाल को छू ले और उसकी तालीद का उसी रूप में जवाब दे, लेकिन तभी उसने महसूस किया कि अलीमुन अपने विस्तर में से उसकी ओर एकटक देख रही है और आहिस्ता-आहिस्ता चों-चों खाँसे जा रही है। वह लजा गया। नजबुनिया भी लजा गयी। वह झटके के साथ सोझियों की ओर बढ़ गया और जल्दी-जल्दी नीचे उतरकर गली में पहुँच गया।

कच्ची बाग के मैदान में घुब मजाबट हो रही है। रंग-बिरंगी झण्डियाँ हवा में सहरा रही हैं। एक ओर तयत बिछाकर मंच बनाया जा रहा है। चार तयत बिछाये गये हैं। तयतों पर जाजिम और सफ़ेद चाँदनियाँ डाल दी गयी हैं। सामने बीस के दो छम्भे गाड़कर उनकी फुनियों पर पार्टी के झण्डे बाँध दिये गये हैं। मंच के पीछे चाँदनी की ही दीवार-जैसी बना दी गयी है, जिस पर हनिफ़ा घन्ट सड़कों की मदद में कागज की कुछ तस्वीरें लगा रहा है। अचानक उसे कुछ याद आ जाना है और एक सड़के से बड़ पूछ बैठता है—

“कूबे जवाहरलाल नेहरू क फोटोइया मियाए?”

“अमई नाही!”

“भाग भोताही के। तब का होइए बे? ज जल्दी मियाव!”

और बड़ सड़का भानी लुंगी फड़फड़ाता हुआ जवाहरलाल नेहरू का फोटो सामने के लिए भाग जाता है।

इलेक्शन बिन्दुस ही सिर पर आ गया है। जैसे गरीब लोग त्योहार सिर पर आ जाने पर या बिटिया का प्याह सिर पर आ जाने पर परेशान हो जाते हैं, वसी तरह इस देश के अमीर-उमरा इलेक्शन सिर पर आ जाने पर परेशान हो जाते हैं। हाजी अमीरुल्ला का परिवार इधर और सेठ गन्नाधर प्रगाद का परिवार उधर, बेहद परेशान है। शहर-भर में इनकी कई-कई चुनाव-कमेटियो बन चुकी हैं और कई-कई चुनाव-दफ़्तर खुल गये हैं। पोंटर, बिल्ता और शम्शा आदि बनवाने में पानी की तरह पैसा गहाया गया है। कई-कई जीवें दोड़ रही हैं। कई-कई मौसमी नेता पैदा हो गये हैं—बक करन के लिए। इलेक्शन इसी तरह घोंबे जीता जाता है। उसने लिए जरूरत होनी है अच्छी टेक्टिस की। सो एक-एक टेक्टिस आजमाई जा रही है। आज पार्टी के कोई बड़े लोडर बुलाये गये हैं यही भाषण के लिए। हाजी अमीरुल्ला का दावा है कि इस भाषण में इतनी भीड़ इकट्ठी होगी जितनी भोलाना हज़रानी की तक्रार में भी नहीं हुई थी।

इ मौलाना हज़रानी बहुत बड़े मुकर्रर¹ हैं। कई साल हुए, अंगारी स्कूल के मैदान में इनकी तक्रार हुई थी। इतनी भीड़, इतनी भीड़ कि कुछ पूछो मत!

पानी कोटों की मड़ल तक बस आदमी-ही-आदमी नजर आते थे। लेकिन जैसे ही मोलाना हक्कानी ने मुबरात का हलुवा और नजर-नेयाज के खिलाफ बोलना शुरू किया, सारी भीड़ तितर-बितर हो गयी। सिर्फ गेट पर उनकी किताबों की दूकान-भर रह गयी थी।

हालांकि हाजी अमीरुल्ला चाहते तो इस भीड़ की तुलना 'इंदे मोलादुन्नबी' के रोज होनेवाली बेनियापारक की तकरीर में जुटी भीड़ से भी कर सकते थे, लेकिन मोलाना हक्कानीवाली भीड़ से तुलना करने में जो सुख है वह उसमें नहीं है। दर-असल इसके पीछे एक दृष्टि है, कि यह भीड़ खूब जमेगी, जबकि मोलाना हक्कानी-वाली भीड़ तो उगड़ गयी थी; क्योंकि न तो इस तकरीर में मुबरात के हलुवे का विरोध होगा और न ताजियादारी का। इस तकरीर में तो मुल्क की तरक्की और बेहतरी के लिए अपनी छिदमत पेश करने का जवाब प्रकट किया जायेगा और बनारस की जनता से अपील की जायेगी कि वे जिस पार्टी का भाषण यहाँ सुन रहे हैं, उसी पार्टी को अपना बहुमूल्य वोट प्रदान करें, क्योंकि भारत-भर में इससे बढ़िया कोई और पार्टी नहीं है।

नजायत पूरी हो चुकी है। नेताजी अब आने ही वाले हैं। भीड़ उत्सुकता से उनकी प्रतीक्षा कर रही है। मंच पर कामता और शरफुद्दीन के साथ इलाक़े के चन्द भद्र जन, जैसे गंडासा गुरु, संकठा गुरु, बम गुरु आदि बैठे हुए हैं। एक लड़का माइक पर अल्लामा इक़बाल की नयम अत्यन्त अशुद्ध उच्चारण में रेंक रहा है।

भीड़ बढ़ती जा रही है। आगे की जगह नेताजी के साथ आनेवाले विशिष्ट लोगों के लिए छोड़ दी गयी है। उन्हें लेने के लिए हवीबुल्ला गये हुए हैं। एक सीट उनके लिए भी है। वह एक साधारण-सी कुर्सी है, जिस पर हवीबुल्ला बैठेंगे। लकड़ी की! बाकी नेता लोगों के लिए बेंच की बुनी हुई कुर्सियाँ रखी गयी हैं। कमरद्दीन व्यवस्था में लगा हुआ है। अचानक वह देखता है कि मुहल्ले का एक लड़का तेजी के साथ आता है और हवीबुल्ला के लिए रखी गयी कुर्सी पर बैठ जाता है। कमरद्दीन के बदन में आग लग जाती है। वह उस लड़के पर विगड़ जाता है—

"तू बुचोदी के देहा बैठियो त चचा छिनरी के कहाँ बैठिहें?"

और वह लड़का झप जाता है। वह कुर्सी से उठ पड़ा होता है और सबसे पीछे जाकर जमीन पर बैठ जाता है।

फिर अचानक नेताजी प्रकट होते हैं और एक विचित्र-से मोर से पूरा माहील गुंजायमान हो जाता है।

"कोटो गराकर कहाँ गोवा म्याँ?"

"चडकिया पर मसलन ठीक करो म्याँ!"

"दम्नग बालिया तकरीर करे के हाजी बलिजल्ला के बुलाओ म्याँ!"

"अये माला कहाँ रफ़ी है? दउड़ के लियाव त!"

मोनबोबी के याद में बिजली की सतरें लग रही हैं और 'बेगरी टेंट हाउस' में भापी दियारे की बुलियाँ जमायी जा रही हैं। मस्जिद से मटी हुई एक कोठरी में चाम बन रही है। मैदान में एक खम्बी-सी मेज लगा दी गयी है जिनमें गामने कुछ मोलाना योग बागड-जलम लेकर बैठे हुए हैं। मंग-धड़ंग बच्चे उछल-कूद कर रहे हैं और पूरे मार्ग में एक अजीब-भी रौनक बनी हुई है।

हरअसम आज सनरही है। जमादिउम-अय्यल की सनह तारीख। इस रोज चौदहसाल ग्रां में विभिन्न अंजुमनों का एक जुमूग उठता है, जो रात-भर गस्त लगाता हुआ मुबल होने-होने आसमपुरा तक पहुँचना है। इन दिनों जबकि पूरा शहर बनारस चुनाव की सरगमियों में डूबा हुआ है, यह अंजुमनों का मेला भी शुरू हो गया और असमपुरा में लेकर मदनपुरा तक के गारे बुनकर दोनों मोर्चों पर साव-गाव सजिय हो उठे। चुनाव में तो अपने उम्मीदवार की जिताना ही है, पर अपनी अंजुमन के लिए भी लीट भी हथियाना है।

बनारस शहर में इस तरह की कई अंजुमनें हैं। अंजुमन शम्मा-ए-इलाही, अंजुमने-इरफानिया, अंजुमने-इलाहिया, अंजुमने-बखरानिया, अंजुमने-इस्लामिया कदीमी, अंजुमने-मुलामाने रसूल आदि। इन अंजुमनों में दस-बारह साल के लड़कों से लेकर चासीस साल के अष्टे तक ऐसे लोग हैं जो हजरत मुहम्मद साहब और उनके चारों गहायियों की प्रशंसा में नान पका करते हैं। इन नातों के रचयिता कुछ विशेष किरम के शायर होते हैं और महीनो इनकी लयें बनायी जाती हैं। लय और धुन के अगमास अरमस्त गुप्त स्थान में—किमी गुप्त कोठरी या किसी पुरानी मुम्बिऊ में—किये जाते हैं, क्योंकि इन अंजुमनों को यह गतरा होता है कि कहीं दूसरे अंजुमनवाने इनके घोर न चुग लें, या इनकी धुनें न डहक लें। मौलिक विषयवस्तु और मौलिक धुनों के आधार पर ही अंजुमनें पुरस्कृत की जाती हैं।

नातों की यह प्रतियोगिता इंदी-मीला उल्लबी के रोज में ही शुरू हो जाती है। अलग-अलग तिमियों पर यह प्रतियोगिता असग-असग स्थानों में होती है। किसी दिन दासमण्डा में तो किसी दिन नयी सडक में। कभी-कभी ये अंजुमनें बनारस में बाहर जैसे शाजीपुर या जौनपुर की ओर भी नात पढ़ने के लिए जाया करती हैं।

हर अंजुमन में लगभग बीस-गधीस लोग होते हैं, जिनमें एक सदर होता है और एक सेक्रेटरी। बाकी साधारण सदस्य होते हैं। उनमें एक 'मीर' होता है, जो मुबल प्रस्तोता होता है। बाकी लोग उसका अनुकरण करते हैं।

इस प्रतियोगिता में जो लोग फर्स्ट-मेक्रेण्ड आते हैं उन्हें भीट मिलता है। भीट भी अंजुमन के लोग ही देते हैं। हरअसम हर अंजुमन इनाम देनेवाणी भी

होती है और प्रतियोगिता में भाग लेनेवाली भी। हाँ, अपने डाइज पर कोई भी अंजुमन भाग नहीं लेती है।

पहले चौहट्टे में सिर्फ एक ही अंजुमन थी, लेकिन अब एक अंजुमन और बन गयी है। उस अंजुमन में चौहट्टे से बाहर के लोग भी शामिल हैं। इधर अल्ताफ भी थोड़ी रुचि लेने लगा है। वह नात-वात पढ़ना तो नहीं जानता, पर चन्दा-बन्दा बमूल कर सकता है, इसलिए चौहट्टेवाले अंजुमन में उसे नायब सदर बना दिया गया है। हालाँकि कामरेड मोदीन ने उसे मना किया था हम सबके लिए, लेकिन वह नहीं माना। उसने साफ कह दिया कि हम तो अपने मन के राजा हैं।

अल्ताफ अपनी छाती पर अंजुमन का बैज लगाये घूम रहा है और थोड़ी-थोड़ी देर बाद माइज पर आकर दूर-दूर से आयी हुई अंजुमनों को आवाज दे रहा है कि वे टाइट के पास आकर अपना क्रम उलवा लें, ताकि इसी क्रम से उन्हें नात पढ़ने के लिए आमन्त्रित किया जा सके।

अचानक लुंगी पहने, पान ग्राये, बीड़ी पीते हुए आठ-दस लौंडों का एक झुण्ड टाइट के पास आता है और यह जानकर कि उन्हीं का पहला नम्बर है, नात पढ़ना शुरू कर देता है। आगे-आगे जो नौजवान-सा लड़का है वह बड़ी अदा के साथ अपनी टोपी को ठीक करता है और हाथ नचा-नचाकर डाइज के सामने बैठे निर्णायक मौलानाओं को सम्बोधित कर-करके 'पाकीजा' फ़िल्म के एक गाने 'मौसम है आगिकाना' की धुन में अत्यन्त अशुद्ध उच्चारण के साथ एक नात गाने लगता है।

फिर टारम ग्रम होते ही दूसरा झुण्ड आता है, और फिर तीसरा और फिर चौथा, और इस तरह झुण्ड-पर-झुण्ड आते जाते हैं और अपनी कला का प्रदर्शन किये जाते हैं। अन्त में एक माहर्न किस्म के मज्जन अपनी अंजुमन के साथ पेश होते हैं और वाक्यावदा कुत्ती करके, बिस्मिल्लाहिरंहमानिरंहीम पढ़कर अत्यन्त भक्ति भाव के साथ अपनी नात शुरू करते हैं—

'उलट के जो देखोगे औराक चौदा....'

और सोये हुए श्रोता चौंककर जाग उठते हैं। इतनी बड़ी बढ़िया बात उठाइये म्या !

26

गरफुद्दीन चार हजार तीन सौ सत्ताइस वोटों से जीत गये हैं।

जबसे वे एम. एल. ए. हुए हैं तभी से उनके यहाँ दरबार लगना शुरू हो गया है।

चुनाव-प्रक्रिया में घोरित होने के बाद कचहरी में ही मजदूरों ने नेता की जय-जयकार करती हुई भीड़ यहाँ तक आयी थी। फिर प्रश्न मनाया गया था, मित्रादयों बाँटी मयी थी। गृह हो-हन्ना हुआ था। विरोधी प्रत्यागियों के खिलाफ गृह जहर उगमा गया था। उगरी गृह ग्रिन्नी उटायी गयी थी। यही नहीं, हर मोहन तीहर ने प्रश्नी-प्रश्नी प्रेम्न पायगुटागे के बारे में उच्च-उच्चकर एम. एन. ए. माह्व की जानकारी दी थी, कि किमने किमने कर्जों बोट गिरवाये, किमने किमनों की जारह मारा और किमने किमने न पढ़नेवाले बोट पढ़वाये, किमने धुद रितने मन-मनों पर मुद्दर मारकर जबदम्नी उन्हें मतपेटी में डाल दिया, किमने कहीं की मतपेटी गायब कया दी, आदि आदि! एम. एन. ए. माह्व गद्गद थे! जैन गुप्तावर अरनी मेना का जय-विजय मुनकर प्रमन्न हुए, कुछ उमी नरह!

द्विन दिनों एम. एन. ए. माह्व बनारस में होने हैं, गोजाना उनकी पोटी में दरबार लगता है। गरीबाने कमरे की पर्दा डालकर दो हिस्सों में विभाजित कर दिया गया है। एक हिस्से में व्यापार बनता है और दूसरे हिस्से में दरबार। एम. एन. ए. माह्व अब घर पर होने हैं वो शाम में ही बड़ी शोहदों, गुण्डों, लफंगों, नवबिदुपकों, नवचारणों, लज्जाओं और तरह-नरह के अराधकियों की भीड़ लगने लगनी है। वे अरने माय पान का चौपड़ा और जकरत के अनुसार चौपड़े में प्रमाद-पुण्य भरकर लाते हैं और एम. एन. ए. माह्व के सामने रखकर मलाम करके बैठ जाते हैं। एम. एन. ए. माह्व मुम्कराकर सबका स्वागत करते हैं और बड़े आत्मीय ढंग में नक्का हान-चान पूछते हैं। फिर वे घड़ाघट फोन का टायम घुमाने लगते हैं। किसी को पाने में छुड़वाना है, किसी को बन्द कराना है। किसी का दामकर पढ़वाना है, किसी का कगना है। किसी की नौकरी छुड़वानी है, किसी को दितानी है। गवें कि केरो राष्ट्रीय कार्य है, जो उन्हें करने हैं!

इधर कई रोड में हनिफवा भी एक काम के गिनमिने में दौड़ रहा है। बिराहिम का मन गिनकारी में नहीं लग रहा है, दमनिग मोचता है कि एम. एन. ए. माह्व ने कहकर उसे कहीं छोटी-मोटी नौकरी में लगवा दे। और साथ ही अपने रोडगार के गिनमिने में भी वह कुछ बातें करना चाहता है, कि किसी गोमं से उसका भी काम विदेश तक फैल जाय, जैसा कि धुद हाजी अमीरुल्ला का फैला हुआ है।

एम. एन. ए. माह्व ने उसे मुसाव दिया है कि वह उनके माय धुद सधनऊ बने। यहाँ किसी मिनिस्टर के जरिये सारा काम एक मिनट में हो जायेगा। कौन ऐसा मिनिस्टर है भोमदीवाला जो उनकी बात न माने!

गो, एम. एन. ए. माह्व के साथ सधनऊ जानें के लिए कई रोड से अटेंची लेकर हनिफवा उनके दरबार में हाडिर हो रहा है। किसी दिन 'गंगा-यमुना' एमप्रेम में बनने की बात होनी है तो किसी दिन 'काशी-विश्वनाथ' से। आज

रात में चलने की बान है—'मियालदह' से। मियालदह एकसप्रेम हाना कि रात के लगभग ढाई बजे छूटती है, लेकिन हनिफवा दस बजे ही एम. एल. ए. साहब की कोठी में पहुँच गया है। दरवार में सभी लोग बहस-मुवाहजे में डूबे हुए हैं, पर हनीफ की नजर दीवार पर टंगी टिक्-टिक् करती हुई घड़ी पर ही टिकी हुई है।

तभी अचानक कोई संगीन मामला आ जाता है और एम. एल. ए. साहब को उठकर थाने तक जाना पड़ता है। कोई महत्वपूर्ण केस है जायद। हनिफवा अपनी अटैची दबाये बैठा रहता है। घड़ी में जब साढ़े बारह बज जाते हैं तो उसका दिल धुकुर-धुकुर करने लगता है।

फिर धीरे-धीरे लोग खिसकने लगते हैं। एम. एल. ए. साहब अभी तक नहीं लौटे। न जाने क्या बात हो गयी? और देखते-ही-देखते दरवार उठ जाता है। पान और स्याही के दागों से भरी हुई उस गन्दी-सी गद्दी पर सिर्फ हनिफवा बैठा रहता है। दो बज जाते हैं।

हनिफवा घड़ी की ओर देखता है और तय करता है उठकर थाने की ओर चले, कि तभी भीतर से कमरुद्दीन का लड़का निकलता है और खबर देता है कि चचा सो रहे हैं। उन्होंने कहा है कि अब कल चलेंगे 'पंजाब मेल' से।

हनिफवा अपनी अटैची उठाकर धीरे-धीरे बाहर आ जाता है। गली में एक गुस्माया हुआ कुत्ता भूँक रहा है। वह उस कुत्ते से बचते हुए आगे बढ़ जाना चाहता है, लेकिन कुत्ता उसे घेरे लेता है। वह दौड़ने लगता है और आगे बढ़कर एक मकान की आड़ में छिप जाता है। कुत्ता लौट जाता है।

"एकरी माँ की..."

हनिफवा पता नहीं यह गाली शरफुद्दीन को देता है या कुत्ते को, लेकिन गाली यह बेहद गुस्से में देता है और तेज-तेज डग भरता अपने घर की ओर चल पड़ता है।

27

दूसरे दिन हनिफवा बजाय एम. एल. ए. साहब के साथ लखनऊ जाने के, गोलघर गया। दो-तीन साड़ियाँ तैयार थी। उन्हें बेचकर कुछ रुपया खड़ा कर ले तब आगे की मोचे। वैसे तो अपनी साड़ियाँ वह हाजी अमीरुल्ला की गद्दी पर ही दे आता था, लेकिन आज वह गोलघर गया।

दूर से ही उसे साढ़ियों की पेटी लिये देखकर रामभजन दनास सपक पड़ा,
“भात्र एहर कइमे ? हाजी साहब ठीक हउवें ना ?”

“इ माल बेचै के है !”

बगैर रामभजन से बहस किये वह सीधा काम की बात करने लगा और आगे-
आगे चलकर सेठ गजाधर प्रसाद की दूकान पर गड़ा हो गया। वहाँ कोई बाहरी
व्यापारी बैठा हुआ था और एक दूसरा दनास ‘सलाय-जोलाय’ में बातें कर रहा
था। जब वह व्यापारी उठकर चला गया तो हनीफ ने अपनी पेटी आगे सरका दी।
रामभजन ने सेठ गजाधर प्रसाद से कहा कि ‘बात-व्यवहार ठीक हो, ले ल्या !’
मेठजी ममता गये कि छः पैसे दनासी इसे भी चाहिए और पेटी उन्होंने रख ली।

फिर सेठजी ने थोड़ी देर तक नये एम. पी. हुए कामता बेटे का बखान किया।
उमके रमम-रमूय की चर्चा की, बताया कि स्वर्ण प्रधानमन्त्री की नज़रो में वह
कितना अच्छा एम. पी. है और अन्त में एक महीने की अवधिवाला जो चेक दिया
गया उगे उग पर मूल दाम में से बीस रुपये बाद करके (कम करके) धनराशि दर्ज
की गयी थी।

“तो इलेकशन के बाद में ही यह एक और हरामीपन शुरू हो गया। न
कोई बात न कोई बजह, न कोई ऐब न कोई कमी, फिर यह जबर्दस्ती की कटौती
कैसी ?

धूना से हनीफ का चेहरा विकृत हो गया। उसने कुछ बोलते नहीं बना। वह
घुरघाप उठा और दूकान से बाहर आ गया।

पर पहुँचा तो सीढ़ियों पर से ही महकन की कंकश आवाजें उसे सुनायी पड़ी।
उनकी बीबी एक साप अपने सभी बच्चों पर शासन कर रही थी।

“क रे हरमिया तँ अभइन तक मुत्ते काहे है रे ?”

सगता है मिराहिम अभी तक सोया हुआ है। दोपहर को भी वह सोया रहता
है।

“कहाँ जाती रे ?”

“जाइते उपपर !”

सगता है बिबिमा छत पर जा रही है और जवान होती हुई लड़की का इस
तरह छत पर जाना माँ को मुहा नहीं रहा है।

“हियाँ आव रे ! ऊ काहे छूबेते रे ? मत छूड्ये नाँही तो मरवा बहुत !”

सगता है छोटा लड़का जावेद कोई शरारत कर रहा है।

“अवे जबिदबा, चस घाना घा ले रे ! घनवा पक गोवा है अउर बेला भी हो
गयी है।”

इतना सुनते ही हनीफ को भी भूख लग आयी। वह थोड़ी देर के लिए कटौती-
बानी बान भूत गया और कमरे में आकर खुद भी घाना माँगने लगा, “घाना पक

गोवा रे ?”

“हाँ पक गोवा !”

“हमरा घाना काढ़ दो तो !”

“अच्छा !”

और हनीफ हाथ धोकर बोरे पर बैठ गया। महसून घाना ले आयी और हनीफ के सामने रखकर वापस चली गयी। हनीफ ने एक निवाला मुंह में डाला और बरस पड़ा, “कडना घाना पकाये है रे ? नमक एदम फिक्का है। तनिकको अच्छा नाहीं लगते !”

और वह घाना छोड़कर खड़ा हो गया।

महसून लागू कहती रही कि अभी वह नमक पीसकर ला रही है, लेकिन हनीफ वा रुका नहीं। वह मोड़ियाँ उतरकर बाहर चला गया।

जोहरा का वक़्त करीब था और रऊफ चचा करके पर से उठकर चबूतरे पर बैठ बज्जू बना रहे थे। ऊपर नजबुनिया आयी हुई थी। वह अपनी माँ के साथ चहक-चहककर बातें कर रही थी। सहसा गली में एक लम्बी-सी छाया उभरी और रऊफ चचा के सामने आकर खड़ी हो गयी।

रऊफ चचा चौंक उठे। वे दाढ़ी पर हाथ फेरने जा रहे थे कि उनके हाथ जहाँ-के-तहाँ रुक गये। इ हनीफ ही तो है “उन्होंने अपनी बूढ़ी पलकें मुलमुलायीं”

“सर्लावाले कुम अब्बा !” हनीफ की आवाज़ कांप रही थी।

“आओ। हुवाँ काहे खड़े हो, उप्पर जाओ। कइसे आये बेटा ?” रऊफ मियाँ बोल रहे थे और भीतर-ही-भीतर अपने आँगुओं को पी रहे थे।

हनीफ क्षण-भर तक ठिठका हुआ-सा वहीं खड़ा रहा, फिर धीरे-धीरे चलकर दरवाजे में दाग़िल हो गया। तब रऊफ मियाँ वहीं से नजबुनिया को चिल्लाये, “अरे देव नजबुनिया भइया आवा है !”

और ग़ुद मस्जिद की ओर चल पड़े।



“इसका एक्स-रे होगा, साथ में खून-शूक की जांच भी होगी। समझे !”

डॉक्टर साहब ने उसे समझाया तो चपरासी झट से बोल पड़ा—

“हुजूर यह बहुत गरीब आदमी है। आप निख दें त यहीं से सब जांच-पांच हो जाय !”

और वह जेब ने खिनी निकालकर उसे खूने के साथ मिलाकर हथेली पर ठोकने लगा। इनके साथ ही उसने मतीन के पाँव में धीरे-से ठोकर मारी और आँखों से इशारा किया कि यही वह वक्ता है, जिसका इस्तेमाल करना है। खूने तो गये !

और मतीन ने दम-दम के दो नोट निकालकर टेबुल पर रख दिये।

“ये क्या कर रहे हो भाई ?” डॉक्टर ने दबी जवान से अपना एतराज प्रकट किया तो ‘हुँहूँ’ कहते हुए चपरासी ने दोनों नोट झपट लिये और उन्हें अपनी जेब में डाल लिया।

मतीन बाहर निकल आया।

“हमारा हक ?” चपरासी ने बाहर आकर उसे टोंका तो मतीन ने दो रुपये का एक नोट उसे भी थमा दिया।

अलीमुन की बीमार आँखों ने अत्यन्त दयनीयता के साथ यह सब देखा और उनसे एक साथ कई-कई गर्म लकीरें खिचकर इधर-उधर फैल गयीं।

मतीन ने सोचा था कि अब तो सारा भसला यहीं हल हो जायेगा, लेकिन चपरासी ने निर्फ खून-शूक की जांच का इन्तजाम करा दिया और बोला कि अब इन्हें घर ले जाओ। दवाई यहाँ से ले जाया करो। भरती करने की कोई जरूरत नहीं है। मतीन ने जब एक्स-रे के लिए कहा तो वह लगभग बिगड़ गया और बोला, “बीस ठे रपल्ली में क्या सारा काम हो जायेगा ?”

मतीन अवाक् रह गया। नजदुनिया ने अलीमुन को सहारा देकर उठाया और तीनों लोग अस्पताल के मेन गेट की ओर बढ़ने लगे। फिर वे धीरे-धीरे चलकर सड़क तक पहुँचे, और बनारसवाली बस का इन्तजार करने के लिए एक पेड़ के नीचे बैठ गये।

29

मूर्खान्त हो चुका है और धीरे-धीरे अन्धकार गाढ़ा होता जा रहा है। पूरे इलाके में बिजली नहीं है। चार बजे ने ही गायब है। नजदुनिया ढिबरी की बत्ती ठीक

कर रही है। अभी-अभी वह अपनी अम्माँ किये से लौटी है। इकबलवा कही गया हुआ है। आजकल न जाने कहीं-कहीं वह घूमने लगा है।

मतीन इन्तिजा करने के लिए अभी पाछाने की ओर जा ही रहा था कि नीचे से किंगी के पुकारने की आवाज आयी। वह धड़धड़ाता हुआ नीचे उतर गया। वहाँ हुनीफ, सतीफ, अल्ताफ, जमील, बघीर, शरीफ आदि कई लोग घड़े थे। क्या बात हो गयी आखिर? और यह हुनीफवा कैसे आ गया इधर? कहीं कोई खास मसला तो नहीं आ गया? कहीं इकबलवा ने तो कोई गड़बड़-सटवड़ नहीं कर दी, कि लोग चढ़कर आये हैं बदला लेने के लिए।

बड़ पट्टी-पट्टी आँखों से सबको देख रहा था और बेहद घबरा गया था। लेकिन अल्ताफ ने धीरे ही उसकी घबराहट को समाप्त किया। उसने बताया कि कोठी-वालों के यहाँ आजकल जो चिला बजह की कटौती चल रही है, उसी को लेकर ये सारे लोग तुममें बातचीत करने आये हैं।

मतीन आश्चर्यचकित हुआ। उसने सबको भीतर बुलाया और सब लोग करघेवाले कमरे में आकर जमीन पर ही उकड़ूँ बैठ गये। कोठरी में बड़ा अँधेरा था। बिजली अभी तक नहीं आयी थी। मतीन उन्हें बैठाकर ऊपर गया और शीशी की बनी हुई एक डिबरी जलाकर उसे हवा से बचाते हुए किसी प्रकार नीचे लेकर उतरा। डिबरी करघे के पास रख दी गयी और बातचीत शुरू हुई। अल्ताफ ने किवाड़ उड़का दिये।

पहले हुनीफ ने अपने साथ हुई सारी घटनाओं का विवरण दिया और बहुत उत्तेजित होकर गाली-गसौज करने लगा। फिर सतीफ ने बताया कि उसकी साड़ी के दाम में भी कटौती हुई है।

मतीन घामोश रहा। उसे सब-कुछ पता था। कटौती का यह चक्र तो इलेक्शन के बाद से ही शुरू हो गया था।

मतीन थोड़ी देर तक कुछ सोचता रहा, फिर अचानक ही वह बहुत ज्यादा उत्साहित हो उठा। सोगामटोवाला प्रसंग एक बार फिर उसके सामने साकार हो उठा। यानी बड़ लड़ाई वही नहीं खत्म हो गयी थी। और लड़ाई का सिर्फ़ वही एक पहलू नहीं था। यहाँ तो कदम-कदम पर अन्याय है और कदम-कदम पर लड़ाई है...

"अच्छा म्याँ ठीक है, देखा जइए! इ कटौती के खिलाफ भी हम लड़ेंगे। मगर पहले सब एक हो जाव। अब इ सब बरदास से बाहर हो मोवा है।"

मतीन ने अपने दाहिने हाथ को एक खास अन्दाज में सहराते हुए यह बात कही और करघे के पास रखी डिबरी से अपनी-अपनी बीड़ी जलाकर लोग खड़े हो गये।

ठीक उसी रात बिजली आ गयी और पूरा कमरा प्रकाश से भर उठा। लोगों

ने जब दाहर निकलने के लिए दरवाजा खोला तो रोशनी की एक मटमैली-सी चादर गली तक तनी हुई दिखायी पड़ी ।

30

हाजी अमीरुल्ला के पास दिली से कामता बाबू का ट्रंककॉल आया है । बड़ी घुरी घुबर है । केवल अंसारी विरादरी के लिए ही नहीं, बल्कि पूरे सुन्नी समुदाय के लिए यह मर-मिटने का समय है । लोग अंसारी स्कूल के मैदान में इकट्ठा हो रहे हैं । कलक्टर साहब के बंगले का घेराव करना है ।

दरबस्त दोसीपुरा की एक मस्जिद और एक कब्रस्तान को लेकर पिछले कई बरस में एक मुकदमा चल रहा था, जिसका अब सुप्रीम कोर्ट से फैसला हो गया है । वैसे तो कहा जाता है कि यह मुकदमा पिछले दो सौ वर्षों से चल रहा है और इसमें कई पीढ़ियाँ बरबाद हो गयी हैं, लेकिन इधर के कुछ बरसों में इसमें काफी तेजी आ गयी थी । हाजी अमीरुल्ला खुद भी इस मुकदमे से जुड़े हुए हैं ।

आज से लगभग ढाई सौ बरस पहले की बात है, जब हाजी अमीरुल्ला के लकड़वादा के कोई भाई शिया हो गये थे और तब से इनका खानदान दो समुदायों में विभक्त हो गया है । एक समुदाय सुन्नी है और दूसरा शिया । पहले इनकी एक निजी मस्जिद भी दोसीपुरा में और एक कब्रस्तान ! शिया-सुन्नी का खानदानों विभाजन हो जाने के बाद भी इन सार्वजनिक स्थानों को लेकर कुछ दिनों तक कोई शगड़ा नहीं रहा, लेकिन धीरे-धीरे बनारस शहर में जब जमीन की कीमत बढ़ती गयी तो दरार पैदा होने लगी और इस बात पर आपत्ति उठने लगी कि मस्जिदवाली कोठरी में ताजिया क्यों रखा जाता है ? इसी तरह कब्रस्तान को लेकर भी आपत्तियाँ उठी । दरबस्त इस कब्रस्तान में शियों का एक इमामबाड़ा है और मुन्तियों की तीन प्रमुख कब्रें, जिनके बारे में ऐसा माना जाता है कि ये किन्हीं बुजुर्ग हस्तियों की कब्रें हैं । सो इधर इमामबाड़े में तो नौहा-मातम होता है और उधर कब्रों पर दिये जलाये जाते हैं, चादरें चढ़ती हैं और कव्वालियाँ गायी जाती हैं । इस पर एतराज हुआ । । गम के साथ-साथ खुशी नहीं मनायी जा सकती ।

और मुकदमा दायर हुआ । जज हुए सर सैयद । वे खुद आये बनारस मुआयना करने और मौके पर पहुँचकर उन्होंने पाया कि यह जमीन न तो सुन्तियों की है न शियों की, यह तो राजा बनारस की है । पर राजा बनारस ने अपनी ओर से जब

कोई पगाम शिक्कापी नहीं दियायी तो मुकदमा दब-दबा गया। लेकिन कुछ दिनों के मन्नाटे के बाद अचानक ही यह मामला फिर उठ खड़ा हुआ और फिर मुकदमेबाजी होने लगी।

अब एक ओर हैं हाजी अमीरुल्ला और दूसरी ओर सिब्ते हसन। पिछले दिनों कोर्ट ने आदेश दिया था कि मस्जिद में जो ताजियेवाली कोठरी है उसे सील कर दिया जाय और मुकदमे के फैसले तक कब्रस्तान में कोई भी धार्मिक क्रिया न की जाय।

लेकिन धार्मिक क्रियाएँ की गयी और कलक्टर के हुक्म से ही जब मस्जिद-जानी कोठरी का ताला खोला गया तो भीतर का ताजिया क्षतिग्रस्त पाया गया। ऐसा कैसे हुआ? खुद कलक्टर भी हैरान! मामला और खोर पकड़ गया। गनीमत यही रही कि सघनऊ की तरह यहाँ कोई शिया-सुन्नी फसाद नहीं हुआ, केवल मुकदमेबाजी चलती रही।

धीरे धब मुग्रीम कोर्ट ने जो फैसला दिया है वह यह है कि इमामबाड़े के पागबानी दो कब्रें सुन्नी समुदाय के लोग हटा लें।

"इ कइसे होइए ग्या? कब्र कइसे हटिए!"

सोग उत्तेजित हैं। कब्र कैसे हटेगी? और फिर कब्र के भीतर हटाने के लिए बका हो गया होगा? जो लोग भीतर दफन होंगे उनकी हड्डियाँ भी तो न रह गयी होंगी देव। तब क्या हटाया जायेगा? क्या सिर्फ कब्र के निशान हटा देने मात्र से बच्चे हटो हुई मान ली जायेंगी? फिर कौन हटायेंगा कब्र? कौन खोदेगा इन्हें?

"अबोध न होइए ग्या!"

सोग सवास-पर-सवान उठा रहे हैं। कुरान-हदीस के हवाले दिये जा रहे हैं कि मजहब की रू से यह चलता है। लेकिन दूसरी ओर से जवाबी तर्क दिये जा रहे हैं कि इतिहास में ऐसी घटनाएँ हुई हैं। खुद मुमताज महस की कब्र दफन से उखाड़कर आगरा लायी गयी थी। लेकिन सुन्नी मोलाना इस तर्क को मानने के लिए तैयार नहीं। शिया घृणा है कि सुन्नियों की कब्रें उखड़ेंगी और सुन्नी दुखी हैं कि उनके आत्मीयों की रूहे तड़पेंगी; जबकि हाजी अमीरुल्ला इसलिए दुखी हैं कि इतनी जमीन पर अब उनका कब्जा नहीं रहेगा और सिब्ते हसन इसलिए घृणा है कि इतनी जमीन उन्हें अब जाकर मिली, जिसके लिए कई पीढ़ियों की प्रतिष्ठा दाव पर मग चुकी है।

अगरी स्कूल में हज्जारों की भीड़ जुटी हुई है। सोग-ही-सोग। मैदान में, स्कूल की छा पर, बहारदीवारी पर, बाहर सड़क पर। चारों ओर सोग-ही-सोग नजर आ रहे हैं। मुगियाँ-ही-मुगियाँ और टोपियाँ-ही-टोपियाँ। माहौल भड़भुंजे की मट्ठी

की तरह धधक रहा है।

कलक्टर को जब यह समाचार मिलता है तो वह दोनों समुदायों का ख्याल रखते हुए एक बयान जारी करता है और सम्बन्धित इलाके में सख्त पहरा लगा दिया जाता है। मस्जिद में सिर्फ़ नमाज़ के वक़्त ही जाया जा सकता है, जबकि कब्रस्तान में जाना एकदम वर्जित हो जाता है।

अब क्या हो ? जो बुनकर अपना ताना-बाना उसी कब्रस्तान में फैलाया करते थे, अब वे कहाँ जायें ?

इस सवाल का जवाब न हाजी अमीरुल्ला के पास है और न सिक्ते हसन के पास। बुनकर अपना ताना-बाना लिये थोड़ी-सी खुली हुई जगह के वास्ते भटक रहे हैं, ताकि वे अपने धागे सुलझा सकें और अपनी साड़ियाँ बना सकें। अपनी धीयियों के लिए दवाइयाँ ला सकें और अपने बच्चों के लिए अंसारी स्कूल की फीस जुटा सकें।

31

“तो साहबो नुना आपने ? जहाँ एक काफ़ी बड़ा तबका अपनी रोज़ी-रोटी के लिए परेशान है, वही चन्द आरामपसन्द लोग एक कब्रस्तान के लिए लड़ रहे हैं...”

इकबाल चौराहे पर खड़ा होकर भाषण दे रहा है।

“हज़रत ! हमें अपने हक के लिए खुद लड़ना होगा। आप जानते हैं कि जिस बनारसी साड़ी की धूम पूरी दुनिया में है—आज से नहीं सैकड़ों बरस से—और जिसके बल पर इन बड़े-बड़े गिरस्ता लोगों की विल्डिगें तनी जा रही हैं, एशो-एशरत के सामान से इनके घर भरे जा रहे हैं, उस साड़ी को बनानेवाले हम हैं। हम, जो बग़ैर नलवाली सीसन भरी कोठरियों में रहते हैं और ईद पर सेवई कैसे आये, नये कपड़े कैसे बनें, इसके लिए दूसरों का मुँह जोहते हैं। कर्ज के बोझ से हमारे कंधे जमीन तक झुक गये हैं। हमारे कंधे कर्ज पर, रेशम कर्ज पर—सब कुछ कर्ज पर। और बदले में हमें क्या मिलता है ?

“अपनी जिन्दगी में गुश्हाली लाने के लिए पिछले बरसों में मेरे अब्बा और रऊफ़ दादा ने मितकर कितनी कोशिशें की थीं कि एक सोसायटी बन जाय, जिसे सग़ार की सहायता मिल सके, लेकिन इन सरमायादारों ने वह सोसायटी खुद बना ली—फ़र्ज़ी तरीके से आप ही लोगों को नकली मेम्बर बनाकर ! और आप

कुछ नहीं कर सके। हज़ारों ! क्या आपको यह मालूम नहीं है कि आपकी मेहनत को वहाँ किस दर पर खरीदा जाता है ? आप लोगों की साड़ियों में तरह-तरह के त्रुटि निकालकर आपकी मजूरी कम कर दी जाती है और अब तो बटोती का नया ही पत्रर चल गया है। साड़ी पीछे बिना बजह बीस-बीस, पच्चीस-पच्चीस रुपये काट लिये जाते हैं, जिसका राज कोई नहीं जानता !

“... इसके लिए हमें एक होकर लड़ना होगा...”

“ठीक बोलते म्याँ !” बीच में एक थोता टिप्पणी करता है तो दूसरा केवल निरहिमा देता है। बोलता कुछ नहीं।

“आप मेरे सवाल का जवाब दीजिए। जिस बनारसी साड़ी को आप खून-पसीना एक करके, अपनी मेहनत और क़त्त से तैयार करते हैं, क्या उस साड़ी को आपने घर की औरतें भी पहन सकती हैं ? बोलिए, आप में से कितने लोगों के पास बनारसी साड़ियाँ हैं ?”

सन्नाटा !

“और अगर नहीं हैं तो क्यों ? ऐसा क्यों है कि ईद के रोज़ आपकी बीबी मामूली कपड़े के सलवार-कमोज़ से ही अपना तन ढाँकती है ? तो यह मेहनत किसके लिए ? यह क़त्त किसके लिए ? दोस्तो ! आज आप तय करें कि इस निज़ाम को आप बदलकर रहेंगे।”

तालियाँ।

“लेकिन निज़ाम ऐसे नहीं बदल जायेगा। उसके लिए अपने में सुधार करना ज़रूरी है। पहली बात तो ये कि हम एक हों ! जाती मज़सद को छोड़कर अपने हक़ के लिए एकजुट होकर लड़ें। और दूसरी बात यह कि हम अपनी समाजी बुलावों को ख़त्म करें। गोबिए, मारी दुनिया में जबकि लड़कियाँ पढ़-लिखकर बरा-बरा बन रही हैं, हमारे घरों की लड़कियाँ मिर्क़ कुरान पढ़-पढ़कर पदों में बैठी बतान फ़ैर रही हैं। उन्हें टी. बी. हो जाती है और उनकी जिन्दगी ख़हर हो जाती है। बात-बात में हमारे यहाँ तलाक़ हो जाता है और हमारे कितने ही भाई तारी पी-पीकर रिता बजह अपना दिमाग़ खराब किया करते हैं। लड़कों को भी ग़्यास न पढ़ाकर उन्हें ज़न्दी ही साड़ी की पेटियाँ घमा दी जाती हैं... मैं यह नहीं चाहता कि वे अपना काम न करें, करें, लेकिन अपने पुष्टतनी धन्धे के साथ-साथ हमें ख़रानी करती हुई दुनिया के साथ भी चलना होगा, तभी अपने हक़ के लिए लड़ने का ज़रूरा हमारे भीतर पैदा हो सकता है, बरना नहीं। अगर अभी से हम नहीं चलते तो यह सरमायादाराना निज़ाम हमें ख़त्म करके दम लेगा। इसलिए आप हज़ारों से मेरी पुरजोर अपील है कि यह सरमायादाराना निज़ाम इससे पहले कि हमें मिटावे, हम खुद इसका काम तमाम कर दें...”

‘दुनिया के मजदूरों—

—एक हो !

रुकवाल का भाषण नृत्य होते ही अल्ताफ ने यह चुना-सुनाया नारा लगाया और वातावरण तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। भीड़ में खड़ा मतीन मुस्करा उठा।

"इ त बड़ा बोले सगा है म्यां !"

भीड़ में चलते-चलते किसी ने कहा तो दूसरे व्यक्ति ने इस ढंग से मुँह विचकाया जैसा किसी ने उसके मुँह में जुन्न की गोलियाँ डाल दी हों।

"इ अल्ताफवा सबके खराब करते !"

"इ त बड़ा सीन-काफ में बोलेते म्यां, एद्दम अंगरेजी तकरीर करते।"

"इ मतीन क बेटा बड़ा चरफर निकलिये म्यां !"

लोग तरह-तरह की टिप्पणियाँ कर रहे हैं और एक-दूसरे को धकियाते हुए चल जा रहे हैं। अचानक पीछे से दौड़ता हुआ हनीफ का लड़का बिराहिम आगे आ जाता है और उर्दू अखबार 'हयात' की एक-एक कापी कुछ लोगों के हाथों में घमा देता है। लोग टिप्पणियाँ करना छोड़कर अखबार पढ़ने में लीन हो जाते हैं।

32

औरतों की नारी भीड़ बहेलिया टोले की ओर उमड़ी पड़ रही थी। तलउवा चउमुहानी से लेकर उधर कुतुबन शहीद तक औरतें दिखायी पड़ रही थीं। उस भीड़ में कमरून भी एक पुराना-सा-रंग उड़ा नकाब ओढ़े चली जा रही थी।

बहेलिया टोला की शुरुआत चन्द तोतों, बत्तखों और सफेद रंग के चूहों से होती है। आगे चलकर पिजड़ों में बन्दरों के बच्चे, सफेद खरगोश और तरह-तरह की लाल-पीली चिट्ठियाँ भी चह-चह करती हुई दिखायी पड़ती हैं। यहाँ से इन जीवों का वाक्तापदा व्यापार होता है। ये जीव इसी प्रकार पिजड़ों में बन्द करके रेलवे द्वारा देश के विभिन्न हिस्सों में और हवाई जहाज द्वारा विदेश में भेजे जाते हैं। एक साधारण बहेलिया भले ही कभी विदेश की शायल न देख सके, लेकिन उनका पकड़ा हुआ तोता अमेरिका से लेकर जापान तक की सैर कर लेता है।

इस मुहल्ले की गलियों में अगर ज़िन्दा जीवों का कलरव सुनायी पड़ता है तो यहाँ की नालियों में मरे हुए पंछी भी बहते हुए दिखायी पड़ जाते हैं। घरों की पालतू गुनियाँ उन पर चाँच मारकर अपनी हिकारत का प्रदर्शन करती हैं और

माना चारा दूड़ने में सस्तीन हो जाती है।

इन मुहब्बतों के पास ही बट जगह है, जहाँ मुमलमानों के अन्तिम पैगम्बर हुजूर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम की दाढ़ी का पवित्र बाल एक मस्जिद में शीशे के मोनेम में रखा हुआ है। सान में एक बार मस्जिद की वह कीठरी धोसी जाती है और अरने नगी के नूरे-मुबारक को देखने के लिए भीड़ लग जाती है। इस भीड़ में—जैसा कि हर भीड़ में होता है—भ्रियो की तादाद ही सबसे ज्यादा होती है। और उनके अलावा कुछ मौजवान लौटे भी अपनी धड़ा के गुमन अन्ति करने पहुँच जाते हैं।

बमरन उस धक्कम-धुक्का में निरुसकर बाहर आपी तो शाम हो चली थी। वह पत्नी-बस्ती कदम बढ़ाती हुई अपनी कीठरी की ओर भागने लगी। शरिफवा गिररता के यहाँ साड़ी लेकर गया था। अब तक आ गया होगा। 'घसके पकावे-बकावे के हैं।' दो रूटर में भी सड़के में ठीक से खाना नहीं खाया था।

और अपनाक ही उसे अपने दूसरे बच्चों की याद आ गयी। अब तो वे एकदम में पतीप हो गये हैं। दिन में तो अफ़ननिया पका-बिस्ता देती होगी पर रात में सब क्या करते होंगे? वही यासी-कूसी खाकर सो जाते होंगे या तहफनिया कुछ बना-बना लेती होगी, पर उसे डंग ही वहाँ है अभी। सबसे ज्यादा क्रिक तो कुटूस की है। वह तो अभी बहुत ही नादान है। एक दिन सड़क पर से उसने देखा था, छन पर वह पतंग उड़ा रहा था। मन तो हुआ कि पुकारे, पर सतीफ के डर से घामोश रही। अगर वह अपना एक और ब्याह कर लेता तो भी ठीक था। मार के बाहे गरिया के, नयी अम्मा कम-नो-कम खाना-बाना तो उसके बच्चों को देती...

बमरन का अंग-अंग धकान से टूटने लगा था। वह घर पहुँचकर फाँ पर निशाम हो गयी।

तभी शरिफवा भी आ गया और मन मार के बैठ गया।

"का भोवा रे?"

"भोवा का?" वह मानो गुस्से में था।

बमरन सन्न ! यह मेरे ऊपर काहे गुस्सा रहा है !

"सीधे-सीधे बतउते काहे नाही रे कि का भोवा?"

और शरीफ ने शुरू से अन्त तक सारा किस्सा सुना दिया कि किस प्रकार हाजी अभीरत्सा ने एक और नकली सोसायटी बना ली है जिसके जरिए वे सरकार में हमारे नाम पर खया भी ले रहे हैं और हमारे मास की आड में को-ऑपरेटिव के जरिए अपना मास बेच रहे हैं और सारा फायदा हड़प कर जा रहे हैं। सरकार का कहना है कि सरकारी खरीद को-ऑपरेटिव के जरिए होगी, जिसमें साधारण

बुनकरों के द्वारा बनायी गयी साड़ियाँ खरीदी जायेंगी, ताकि उनको अपनी मेहनत का पूरा फायदा मिल सके। लेकिन बीच में ये जो हाजी साह्य लोग हैं, इन्होंने नारा कानून-क्रायदा अपनी मुट्ठी में बन्द कर रक्खा है। लगभग सभी बड़े गिरस्तों ने नकली सोसाइटियाँ बनायी हैं और आम बुनकरों का माल खुद लेकर उसे को-ऑपरेटिव के जरिए ऊँचे दामों में बेचकर पूरा मुनाफा हजम कर जाते हैं। इकबलवा का कहना है कि इसके खिलाफ हमें लड़ना होगा।

"अरे बस-बस चुप रही। कुछ उनके बाप लड़े रहें कुछ ऊ लड़िएँ। अउर इ सरकार? इ सरकार त सब करावेती। उहं कायदा बनावेती अउर उहें इन्हें रास्ता बतावेती कि अब अइसे लूटो।" कमरुन ने दीवार के सहारे अपनी पीठ टेकते हुए कहा और उठकर चूल्हे की ओर चली गयी। उसने वहाँ थोड़ी देर तक कुछ खड़-भड़ किया और फिर बाहर निकलकर बर्तन माँजने बैठ गयी।

"के?"

अचानक शरीफ चौंक। उसे लगा कि अंधेरे में कोई खड़ा है और लड़खड़ा रहा है। वह उठा और जैसे ही आगन्तुक के पास पहुँचा, वह धड़ाम से जमीन पर गिर चुका था। शरीफ उस गिरे हुए व्यक्ति पर झुक गया और चीख उठा—
"बब्या!"

कमरुन थोड़ी देर तक गुमसुम-सी बैठी रही, फिर न जाने क्या सोचकर उठी और हाथ धोकर खुद भी लतीफ के पास पहुँच गयी। वह ताड़ी के नशे में धुत था।

दोनों, माँ-बेटे ने उसे उठाया और कोठरी में ले आये। कमरुन उसका नशा उतारने के लिए देशी उपाय करने लगी। वह भूल गयी कि वह एक तलाक़शुदा औरत है और जिस आदमी की सेवा-इहल में वह लगी है वह अब उसका शौहर नहीं है और वह उस पर हराम हो चुका है।

33

घर आते ही हाजी अमीरुल्ला ने अपने सभी भाइयों से सम्पर्क किया और आनन-फानन में यह तय हो गया कि एक ग्रैंड क्विज़ की पार्टी होनी चाहिए। दरअसल हाजी अमीरुल्ला इस बार दो-दो फतेहवावियाँ हासिल करके लौटे हैं और यह उनके लिए बहुत बड़ी बात है। अब बनारस के विरादरीवाले समझेंगे कि वे भी कोई चीज हैं!

दरअस्त इस बार अपने ही रिजनेदार के मुकाबले में हाजी अमीरुल्ला भी सड़ गये—यू. पी. ईष्टनूम बोर्ड के अध्यक्ष पद के लिए और ताल-तिकड़म से ये विजयी भी हो गये। सबसे बड़ी गलती तो यही है। इसके साथ ही 'बुनकर बहबूदी फण्ड' बना भी उनका काम शरफुद्दीन और कामता के सहयोग से हो गया। दरअस्त यह फण्ड गरीब बुनकरों को आर्थिक सहायता दिया करता है। और हाजी अमीरुल्ला बहुत दिनों में सोच रहे थे कि बनारस के अन्य गिरस्तों की भांति ही वे भी कुछ गरीब बुनकरों के समीहा बन जायें, ताकि उनके नाम पर फण्ड का एक अच्छा-बुरा हिस्सा हथियाया जा सके। और उनकी यह मनोकामना शरफुद्दीन के मृत्यु, एम. ए. होने ही पूरी हो गयी। सो खुदा जबकि खुद रास्ता बना रहा है तो उनका फायदा लेने से क्यों घूँके? फिर मजहबूरी से भी यह ठीक है, क्योंकि आखिर इस धन का इस्तेमाल वे गरीब बुनकरों के लिए ही तो करेंगे। कुछ और बाँचे गड़वा देंगे। कुछ और पावरलूम बैठा देंगे। कुछ खरदोजी का काम शुरू करा देंगे। एक ठे कनवेष्ट इस्कूल खुलवा देंगे—इंगलिस भीडियम...! बहुत दिनों में सोच रहे हैं कि दरिया पार पड़ाव या दुसहीपुर के इलाके में कुछ जमीन खरीदकर उसे गरीब बुनकरों के हाथों थोड़े मुनाफे के साथ बेच दें, तो वह भी अव हो जायेगा। आखिर यह सब क्या वे अपने लिए करेंगे? इसने उन्हीं लोगों का तो फायदा होगा जो बे-घर-बार हैं, बे सरो-मामान हैं। कुरआन में अल्लाह तआला फरमाना है कि जो बे-यारो मददगार हैं, उनकी मदद करो। इस्लाम की यही बुनियाद है।

सो इस्लाम की बुनियाद को दृढ़ करने के उद्देश्य से हाजी अमीरुल्ला ने जो धनगति हड़पी थी उसका एक क्षुद्रांश दावत के रूप में खर्च कर देना उन्होंने बेहद जरूरी समझा। 'अरे बुरचोदी के जब तक जिन्दगी है खा-खिता लो, बरना इस दुनिया-ए-फ़ानी का क्या ठिकाना?'

और दावत बग़ैरह से फारिग होकर एक रोज हाजी अमीरुल्ला अपने छोटे भाई हाजी हसीबुल्ला की लेकर पड़ाव की ओर निकल गये—जमीन देखने के लिए।

मुगममराय रोड पर, पड़ाव में लेकर दुसहीपुर तक, सड़क के किनारे-किनारे खोज रहे हैं, उनमें से कई टुकड़े बिक रहे हैं और बनारस शहर के गरीब बुनकर—जिनकी मापी जिन्दगी किराये की कोठरियों में बट गयी है—उन्हें खरीदने के लिए खबर मगा रहे हैं। इस जमीन का कुछ हिस्सा बरसान में चूँकि पानी में डूब जाता है इसलिए यह सस्ते में बिक रही है, बरना एक गरीब बुनकर तो कल्पना ही नहीं कर सकता कि जमीन खरीदकर अपना मकान बनवाये!

रिजने दिनों हनीफ, अल्लाफ, बगीर तथा मनीन इधर आये थे और एक क्षेत्र

को देख गये थे। दो हजार रुपये ब्रिस्वा की बात हुई थी मालिक से हवीबुल्ला को वह जमीन पसन्द आ गयी और उन्होंने ढाई हजार दिया।

उस वक़्त उस खेत में फसल लहरा रही थी और खेत के किनारे का झाड़ खड़ा था उसी के नीचे हाजी अमीरुल्ला, हाजी हवीबुल्ला मालिक बैठे थे। ढाई हजार मुनकर मालिक की नीयत बदल गई अमीरुल्ला मुस्करा उठे थे। खुदा जिसकी मदद करना चाहता है, वह है !

...मतीन बिफर उठा था...

तो इसका मतलब यह कि जो-जो चीज़ हम चाहेंगे वही-काम अमीरुल्ला भी चाहेंगे ! हैं !

मतीन की भीड़ें तनी हुई थीं और ओंठ फड़क रहे थे। अतः हाजी अमीरुल्ला को थोक के भाव गालियाँ बक रहे थे ! बशीर चुप

उठने ही उठने अमीमुन को घुटा। अन्धकार की दबाई दिखा दी है और इकबाल के लिए नाराज बजाकर मनीन के सामने जोरदार पक्षाने बैठ दली है। उमने पूरा बिगड़ाना है कि मनीन को खुशाम हुआ है और कुछ नहीं।

इकबाल नाराज काबे, पेटी मेंबर सोनपर जाने के लिए मैजार होना है मो हाथ के दुनारे में अमीमुन उमने करने पास बुला मेनी है। इकबाल अरनी माँ की चारपाई पर बैठ जाता है और उसके मुँह हुए चेहरे को एकटक देखने लगता है। अमीमुन हमारे में ही पेटी खोलने के लिए कहती है तो इकबाल पेटी का इकबाल हटा देता है और माटी निजामवर ठहर ग्य मेना है। अमीमुन की दुबली-यनसी गुणो हुई उँगुनिदी माटी पर इधर-उधर फिरने लगती है और उमकी आँखों में एक बिचित्र प्रहार की चमक उत्पन्न हो जाती है। मनीन ने इस बार साम रग की तानी पर मुनरने बगान में बड़े मुग्ध-मुग्ध फूल बनाये हैं। ऐसा लगता है मानो साममनि की पाटी में गोले की कमिदी बिटकी हुई है। अमीमुन उन कमियों को भरती आँखों में जैंगे बगा मेना चाहती है। अरने सोहर के अम की मानो बहु आसमाय कर मेने की इच्छा में ही उमने एक-एक धागे की दम तरह छू रही है जैंगे बहु धागा न होकर उमके अरने पेट का पैदा कोई मागूम गिरु हो—साम-साम, प्यारा-प्यारा !

"अम्मा अब की इटिया पर तोरे गानिर अइमने सड़िया गिआएँ !" इकबाल बोमता है। माँ की स्थाइ परे होठों पर एक गूँधी-सी मुस्कान निर जाती है और वह इशारा करती है कि इकबाल उम माटी को दुबारा पेटी में रख मे। इकबाल माटी को हिम्मे में बन्द कर मेना है।

"जाब !" अमीमुन बोमती है और आँखें बन्द कर मेनी है। इकबाल पेटी बगल में दबाकर निवम जाना है।

मेठ गजाधर प्रगाद ने इकबाल को मचद पैना देना तो स्वीकार कर लिया, पर बटौती के पक्षीम दमने बाटकर ।

उमका दिमाग भन्ना उठा ।

बहु माटी मेकर बाहर निवम आया ।

मनी के मुहने पर गृहा कमरहोन फौरन उमकी ओर आकर्षित हुआ और पाग बुलाकर कहने लगा कि वह अरनी माटी उमके हाथ खेच दे, लेकिन इकबाल ने इनकार कर दिया ।

किर बहु कहाँ जाय ? सरकारी को-ऑपरेटिव की भी यही हालत है। बिनी गिरस्ता की गद्दी पर जाना भी क़िबूल है। हर जगह गिड बैठे हैं। यही-वही पर, इकबाल-इकबाल पर ।

वह दूसरे नेट की गद्दी पर पहुँचा, लेकिन कटौती का चक्र वहाँ भी चल रहा था।

तब इकबाल पुनः नेट गजाधर प्रसाद की गद्दी पर नौट आया। यहाँ उसे नकद पैसे देने की बात मान ली गयी थी, और जगह तो वही चेक मिलता—एक महौने बाद भुननेवाला।

नेट गजाधर प्रसाद मुस्कराये। साड़ी की पेटो उन्होंने रख ली और कटौती की राशि काटकर बाकी पैसे इकबाल के हाथों में थमा दिये।

गोल्लपर ने निकलकर इकबाल जब मालवीय मार्केट की ओर बढ़ रहा था तो गुस्से में उसकी आँखें जल रही थीं। वह पछता रहा था। उसने गलती की। साड़ी उसे नहीं बेचनी थी, अपनी माँ को दे देनी थी। जब वह छोटा था, तभी से माँ की तानसा की वह देखता आ रहा था। छिः! दुनिया-भर के लिए साड़ी बिनकर देने-वाले घर की औरत को एक सस्ते दामवाली बनारसी साड़ी भी नसीब नहीं! पूरी उस कट गयी सूती धोतियों और छोट की सलवार-नमीज पर! अरे जैसे इतना ऊँच है, वैसे ही कुछ ऊँच और चढ़ जाता और बया! आज कैसी तो चमक थी अम्मा की आँखों में! साड़ी पर किस तरह उसकी उँगलियाँ फिर रही थीं—जैसे कोई भूया बच्चा रोटी पर अपना हाथ फेरे!

इकबाल का रोम-रोम क्रोध और दुःख से जलने लगा। उसके क्रदम तेज हो गये। इस कटौती के खिलाफ, इस पूरी साजिश के खिलाफ कुछ-न-कुछ करना ही होगा। आज ही वह अम्मा से इस सिलसिले में बात करेगा और अपने सापियों से भी।

लेकिन घर का तो नजारा ही और था। नजबुनिया दहाड़ मार-मारकर रो रही थी और मतीन बुज़ार में कांपता हुआ बुरी तरह सिसक रहा था। गली में मुहल्लेवालों की भीड़ बढ़ती ही जा रही थी। इकबाल का दिल तेज-तेज धड़कने लगा।

“का भोवा चच्चा?”

किन्नी से उठने पूछा तो उस व्यक्ति की आँखें भर आयी। उबड़वायी हुई आवाज़ में उसने जवाब दिया, “तोरी अम्मा नहीं रहों!”

ब्रह्मज्ञान में नाई ने जैने ही चतुर्ग्राम की घोषणा की, इकबाल ने आने गिर की एक इकबाला हाटका दिया और अगले ही रात उसके दिमाग में भी वे शोक में असम कुछ दूसरे ही विचार पककर बाटने लगे।

वह उगी मन-स्थिति में घर मोटा।

मजबुनिया ने चाहा कि इकबाल को अँधकार में भगकर वह गृह गेरे, लेकिन अब तब वह अपने दिम की गृह मजबुन कर चुका था। अगले गृह आनी विमाणा की मायबना दी और गटिया बिछाकर उस पर गुमगुम-गा बैठ गया। मनीन मानमगुर्गी के लिए आने हुए मोर्गों में स्थान रहा।

मुमैराल के दिन चतुर्ग्राम था। फजिर्गार में ही नीचे कारयेवासी कोठरी में मोर्गों की भीड़ जमा होने लगी थी। कुरआन के गिपारों की पंटी मजिद में आ गयी थी और हर आदमी एक-एक पारा लेकर गिर हिमा-हिमाकर कुरआन पढ़ने में मगमूम हो गया था। कुछ लोग बना पड़ रहे थे और मनामा की सेल-लून आरिग कर रहे थे। कोठरी में 'मुगन्ध गृगार' अगरवली की मुगन्ध धरी हुई थी।

जब कुरआन क्वाली छाम हुई तो तबरेक बोटा गया और लोग अपने-अपने रिश्तों की जमेथी से-लेकर अपने-अपने घरों की पते गये। सिके चन्द कबीर अपना छाना लेने के उद्देश्य में बैठे रहे। ऊपर औरने भी रबी हुई थी। मजबुन अपना गिपारा छाम करके तबरेक का हिम्मा खपाने में जुटी हुई थी। जो लोग जा रहे थे, वे गमत-पसत मनीन को हाकूम बंधाने जा रहे थे और वह गिर हिमा-हिमाकर अपना गिपारा प्रकट कर रहा था।

लेकिन इकबाल इन सारे कर्मकाण्डों में असम-यसम ऊपर एक बोने में बैठा हुआ था और कुछ मोच रहा था। मजबुन ने एक बार उसमें भी कहा कि वह भी एक गिपारा लेकर पढ़ बैठे और मो को बदा दे, लेकिन उसने इनकार कर दिया। मजबुनिया इस पर बिगड़ी तो उसने अत्यन्त दुकतापूर्वक कह दिया, 'यह गय ठीक है। मरनेवाला मर गया। अब उसके लिए कोई एक कुरआन मही, दम कुरआन पढ़ दे; उसमें क्या होनेवाला है? यह सब गरमापादारी का बनाया हुआ ढकोमला है। खाने-पीने का घन्घा। हमें जो करना चाहिए उसकी ओर तो हम गीर मही करने, उल्टे तरह-तरह के फालगु कामों में पड़े रहते हैं।'।

और ऊपर बैठे हुई धोखों में ने किसी ने उसे डाँट दिया, 'इ दहरियन' जैसी बात काहे करे तो, अल्ता मियाँ के बुरा नगिये !'

मगर इकबाल पर कोई अमर नहीं पड़ा। वह उसी तरह चुपचाप बैठा रहा।

और कुरबान खाने का सिलमिना खत्म होते ही वह घर से निकल पड़ा। उसने शरिफा से मुनाकात की। फिर हनीफ के लड़के विराहिम से मिला और फिर वशीर के यहाँ जाकर मुनुवा को बुला लाया और एक मुनसान चबूतरे पर आकर सब बैठ गये। कुछ चरम पहले मतीन के नेतृत्व में लतीफ, अल्ताफ, वशीर, रऊफ चचा आदि लोगों ने अपनी खुशहानी के लिए एक कानूनी योजना बनायी थी, जिसमें वे असफल रहे थे। आज दूसरी पीढ़ी के लोग फिर एकजुट होकर बैठे हैं और अपने शत्रुओं से निपटने के लिए विचार-विमर्श कर रहे हैं।

इकबाल के अल्फाज अंगारों की तरह जल रहे हैं—

"यह कटौती, यह साजिश, यह बद-इन्तजामी खत्म होनी चाहिए। सरमायादारों की तिकड़में अब टूटनी चाहिए और आम बुनकरों को उनका हक मिलना ही चाहिए। हमारे बापों ने भले सबकुछ बर्दाश्त किया, पर हम नहीं करेंगे। हम गड़ते-आज करेंगे।"

"इकबाल ठीक कहतेन !" विराहिम ने उसके वक्तव्य का समर्थन किया और उन नौजवानों के चेहरों पर क्षण-भर में ही तनाव की गहरी रेखाएँ उभर आयीं। सूर्य की किरणों ने उन रेखाओं में एक अजीब-सी चमक पैदा कर दी और लगा कि ये लीढ़े कुछ करके रहेंगे !

"कहाँ गये रहेव ?"

"गये रहे जहन्नुम में !"

हनीफ गुस्से में था। वह तेज-तेज चल रहा था और रास्ते में जो भी उसे टोंकता था, वह उसी पर बरस पड़ता था।

वह को-ऑपरेटिव से लौट रहा था। वहाँ एक हफ्ता पहले वह अपनी साड़ियाँ दे लाया था इस उम्मीद में कि जब बनारसी साड़ियाँ एक्सपोट की जायेंगी तो उसका माल भी साथ में भेज दिया जायेगा, लेकिन उस रोज उसे मालूम हुआ कि

1. भौतिकवादी।

2. प्रतिरोध।

मेड गजाधर प्रगाद, हाथी अमीरन्ना, हाथी बनोन्ना और ऐसे ही अनेक मोसो की माटियाँ भी गिमापुर और बेंबाब के लिए एकत्रित हुई हैं। पर उसका नाम को-ऑपरेटिव में रखो-जा-जो पड़ा है। बह् भयक उठा।

बुनकरों की मुक्ति के लिए सरकार ने बनारस शहर में समझौता दो गो गजबारी समिति बना दी है, जिनके माध्यम से यहाँ के आम बुनकरों का काम बाहर के बाजार में अच्छे दामों पर बिक गये, लेकिन ऐसा होने की गारंटी नहीं है। यहाँ तो ये मारी-बी-मारी समितियाँ ही बान्धन मारी हैं, बेचम बेच मो के बगीच गजबारी समितियाँ ही पामु हानन में हैं और इनका हानन यह है कि बेचम बड़े-बड़े गजबारादारी का काम तो ये निर्वाह करती हैं पर छोटे बुनकरों का काम यहाँ-जा-जो पड़ा रह जाता है। इनका तो इनने दिनों तक हाथी अमीरन्ना के पीछे लगा रहा, लेकिन एकाध बार के अनायास अभी उसका काम बाहर के मार्केट में मही गया।

दरअसल ये जितनी भी समितियाँ बनो हुई हैं, इनमें से अधिकांश नबनी हैं। बड़े-बड़े गिरानों में बुनकरों के पुराने दमन बनारस मोसाइटियों बना भी हैं। इन मोसाइटियों के माध्यम में पहले जो इन्होंने रिजर्व बैंक में अफ्री-गामी धन-राशि बकूल की और अब इन्हीं के जगह अपना काम एकत्रित कर रहे हैं। मनीन में बितनी बीगिन की थी कि बह् भी आम बुनकरों की एक सोसायटी बान्ध कर ले, लेकिन इन बड़बड़ों ने उसे कामयाब नहीं होने दिया। उस बकूल हनीक की मति भी मारी गयी थी और उसने मनीन की मुगानिफन की थी।

हनीक को अपने पूर्व कृत्यों पर उस रोड बहा पछाया हो रहा था और वह आत्मगतानि में गहा जा रहा था। उसे रद्द-रहकर हाथी अमीरन्ना और मेड गजाधर प्रगाद पर शोध आ रहा था और रास्ता चलते हुए अपना शोध वह जिन-जिन पर उतारता चल रहा था।

बाहर की समाज के बाद एक मभा होनी है बीगाहे पर। बुनकरों की यह पहली मभा है जो बीगाहे पर हो रही है और जिसमें बूढ़े-जवान सभी विद्यमान हैं। बीह को देखकर मभा है कि इस शहर के बुनकर अब बाबाई मैदान में उतर आये हैं। मभा के आरम्भ में उठक जगा एक छोटी-सी टिप्पणी करते हैं, फिर मनीन बीगाहा है। बह् अपनी तकरवीर सोसायटी के लिए विदे गये अपने मध्य में मुरु बनता है और मोझुदा हागत पर बर्षा करते हुए अपनी बात खत्म कर देता है। बीच में हनीक भी कुछ टिप्पिर-टिप्पिर बोलता है और अन्त में आत्मन संकीन के गाद दबबाम पड़ा होता है—

“माधियो,

मैं अपनी बात वहाँ ने नहीं शुरू करूँगा जहाँ पर वाकर सारी बातें गुप्त हो जाती हैं, बल्कि अपनी बात मैं वहाँ ने शुरू करूँगा जहाँ ने हम बुनकरों की हिन्दी शुरू होती है। माधियो ! कहा जाता है कि हम लोग महाराजा अजीक के उमाने में अरब ने हिन्दोस्तान आये थे और वहाँ काशी में हमने अपना कारोबार शुरू किया था। उन मुल्क में औरतों को सोने से बड़ा लगाव था। वे सोने के गहनों से नदी-केंदी होनी थी। यह देखकर हमारे आवाओ-अजदाद (पूर्वजों) ने सोने को महीन धागे में लपेटा दिया और उस धागे ने मुनहरी साड़ियाँ बनायीं। सोने के असली तारोंवाली वे साड़ियाँ देश-देश में जाकर ‘वनारसी साड़ी’ के नाम से मशहूर हुईं। इस तरह हमारी काशी नगरी ने एक ऐसे आर्ट को जनम दिया जिसने पूरी दुनिया को हैरत में डाल दिया। और हम देखते हैं कि धीरे-धीरे हमारा यह शहर जरीदार साड़ियों का मशहूर एक्सपोर्टर हो गया।

“आप लोगों को, पता नहीं मालूम है कि नहीं, कि सिर्फ ‘सेप्टल सिल्क बोर्ड, वनारस’ के जरिए पिछले साल एक करोड़ पच्चीस लाख रूपयों का माल एक्सपोर्ट हुआ। क्या आप समझते हैं कि यह माल यहाँ के गिरस्तों ने तैयार किया था ? जी नहीं, यह माल आपका था। आपने इसे तैयार किया था। आपने वे डिजाइनें बनायी थीं। यहाँ रक्त दादा बैठे हैं। उनसे पूछिए कि उन्होंने साड़ियों की कितनी डिजाइनें बनायी हैं अब तक। शायद उन्हें भी न मालूम होगा, क्योंकि यह सिर्फ वनारसी बुनकर की ही खूबी है कि अगर वह पाँच हजार साड़ियाँ बनाता है तो उनकी पाँच हजार अलग-अलग डिजाइनें होती हैं। लेकिन डिजाइनों के बादशाह रक्त दादा को क्या मिला ? उनके आर्ट को क्या कीमत दी गयी उन्हें ?

“आप जानते हैं कि पूरे वनारस शहर में करीब दो लाख बुनकर हैं और करीब चालीस हजार करघे यहाँ चलते हैं। अब तो पावरलूमों की धूम है, लेकिन निर्र करघों की मदद से तकरीबन पच्चीस-तीस करोड़ रूपयों की रेशमी साड़ियाँ हर साल आप लोगों की मेहनत से यहाँ तैयार होती हैं, पर आपको क्या मिलता है बदले में ? निर्र एक लुंगी ! भैंस का गोश ! और नंग-घट्ठंग जाहिल बच्चे ! टी. वी. की बीमारी से छटपटाती हुई औरतें ! इससे ज्यादा और क्या मिलता है ? क्या दिल्ली-बम्बई, गिगापुर-बैकाक और फ्रांस-अमेरिका के बाजारों में आपकी बुनी हुई साड़ियाँ खरीदनेवाले लोग यह जानते होंगे कि आप यहाँ कैसी जिन्दगी जी रहे हैं ?

“पिछले दिनों यहाँ एक ‘बुनकर कालोनी’ भी बनी है, लेकिन आपने कभी देखा यहाँ जाकर कि कौन रहता है वहाँ ?

“धैर छोड़िए, आप मुझे यह बताइए कि आपका मान आगिर ‘को-ऑपरेटिव’ के जरिए क्यों नहीं खरीदा जाता ? क्या वजह है उसकी ? आपको सोसाइटियों

के रहिए। आर. पी. आई. का सोन क्यों नहीं मिल पाया ? और 'सेक्टर बीरिम' का प्रामाण्य क्यों नहीं मिले पाये ? इसलिए कि ये सब चीजें सम्भाव्यताओं की मुद्रितियों में बाध हैं।

“साधियों ! आरको साम्य नहीं पता है कि इन को-ऑरेटिव सोसाइटियों को किन्ता सरकारों धन अब तक मिल चुका है ? आरको जान लेता था कि अभी रिटने मान उन्हें को-ऑरिनेट से बनाम की उन्नीस सोसाइटियों की तकरीबन चार लाख रुपये हज़ार रुपये देने गये हैं। यही नहीं, शहर की तकरीबन एकलुट सोसाइटियों की रिटने बैंक के लिए तकरीबन पन्चीस लाख अलग-अलग हज़ार रुपये रिटने मान मिले हैं, लेकिन आज मुझे बताया कि आरको किन्ते रुपये मिले हैं ? मैं जानता हूँ कि आरको एक घेना भी नहीं मिला है। मारा गया रिपीनियों के बीच बंट गया है।

“साधियों ! आरको मान बेचने के लिए मद्रुंदारो, आइनियों और बोटीदारों के पक्षर लगाने पड़ते हैं और आरको मेहनत का उपादान दाम इन्ही विधायियों के माबेट में खसा जाता है। हालाँकि दम मने में निवटने के लिए सरकार ने ‘अवेसम गृहणी समिति’ नामक एक चीज बनायी है, मगर वह किन्ता काम कर रही है, यह जगहाहिर है।

“और मजदुर तो यह है कि जो बेईमान हैं, बड़ी ईमानदार बने हुए हैं। जो थोर हैं, बड़ी शरीक माने जाते हैं। क्या आज मुझे बताया गये है कि दुमा भी कोई बोटीबान है जो अपने मजदूरी मान की मजदूरी बहकर पैसा करता हो ? नहीं। आज जानते हैं कि अब सोने के तार नहीं रह गये हैं। मूल में जब से मजदूरी खरी बनने लगी है तब से उसी का इन्तेमान होने लगा है। इनके अभाव मजदूरी पैसा का इन्तेमान भी बढ़ा है। लेकिन ये सम्भाव्यता मजदूरी को अगली बहकर अपना गेहवार धूमधाम में खसा रहे हैं और एक बात है कि अपना मान लेकर बोटीबानों के पक्षर लगाने-लगाने सब की ओर बढ़े जा रहे हैं। सरकार ने अमली-मजदूरी की पहचान के लिए ‘कू मीन’ का जो कानून बनाया है उसकी भी हासन मभी पर अया है।

“बहरहाल, मेरे कहने का मतलब निम्न यह है कि जो सम्भाव्यता है, उनका सामान्य दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है और एक हप्ता जो दिन-ब-दिन मजदूरों की ओर मुड़ने जा रहे हैं। हमारा मान को-ऑरेटिव में नहीं बिजना। हमारे मान की मद्रुंदार दुर्गो पर खरीदना है जिसका कोई मजदूर नहीं होता। और हमें मजदूर पैसा नहीं दिया जाता, बल्कि हमारे ही मान को बेचकर हमें उनको बीमर

दाँ जानी है। वह कीमत भी पूरी नहीं होती। तरह-तरह की नाजायज कटौतियाँ होती हैं। जो लोग गिरस्तों के यहाँ बानी पर या मजूरी पर बिनते हैं उनकी हालत तो और भी बदतर है। इसलिए साधियो, अब वक्त आ गया है कि हम इस जुल्म के खिलाफ एकजुट होकर खड़े हों और अपनी लड़ाई जल्द-से-जल्द शुरू कर दें। अब देर करने की उम्मत नहीं है। ग्यासतौर से मैं अपने नौजवान साधियों से इस बात के लिए पुरजोर अपील करता हूँ कि वे आगे आयें और इन्तलाव की रहबरी करें, क्योंकि इन्तलाव हमेशा नौजवानों के जोश से पैदा होता है। शुक्रिया !”

लतीफ की छत पर अख्तरनिया खड़ी थी। उसको हाल ही में बच्चा पैदा हुआ था और उसका जिल्म पहले-पहल फल लगे आम के पेड़ की तरह गदबदा गया था। हाथ-पाँव फूले-फूले-से लग रहे थे और चेहरे पर एक अजीब-सी रंगत छायी हुई थी। छातियों से दूध रिसने के कारण उसकी समीज के अगले हिस्से पर दोनों ओर गोल-गोल धब्बे पड़ गये थे, जिन्हें वह अपने महीन दुपट्टे से छिपाये हुए थी। उम वक्त वह अपने बच्चे का तेल-उबटन करने के लिए छत पर चढ़ी हुई थी और चौराहे की सभा को देखने का लोभ उसे भी हो आया था। उसने एक टाँग छत की मुँहरे पर रख ली थी और अपने लाल-लाल बच्चे को एक गन्दे-से कपड़े में लपेटकर जाँघ पर मुलाये हुए थी।

अचानक बिराहिम की निगाह ऊपर उठ गयी और न जाने क्या हुआ कि अख्तरनिया मुस्करा उठी। बिराहिम का दिल चीते की तरह उछला और इक्वाल के भाषण के बाद उसने एक जोर का नारा लगाया—

“इन्तलाव ! जिन्दावाद !”

अख्तरनिया अपने बच्चे को लेकर नीचे चली गयी।

36

लतीफ के घर में पंचायत हो रही है। सरदार-महंतो तथा मुहल्ले के कई जाने-माने लोग बैठे हुए हैं और मसले पर गरमागरम बहस हो रही है। सवाल सिर्फ यह है कि लतीफवा ने जरीअत के खिलाफ कदम क्यों उठाया ? यह सवाल उसी रोज से उठा हुआ है जिस रोज कमरन फिर लतीफ के घर में आ गयी है। वैसे उस बेचारी का हममें कोई दाँग नहीं है। लतीफवा ही उसे जबर्दस्ती ले आया है। उस दिन बेहोशों की हालत में कमरन ने जिस आत्मीयता के साथ उसकी खिदमत की, उससे

बट विचलित हो उठा। इस बीबी-बानी औरत को नाटक ही तो उसने छोर दिया है। इसकी गलती ही क्या थी? निरुद्ध जरा-सी बाउ के लिए उसने समाक दे दिया। लेकिन समाक भी क्या उसने होना से दिया था? उस दिन भी तो बट गारी के नरों में था...

मनिरत्ना फिर पचपचर बैठ गया था कि कुछ देरें साथ बसता ही होता।

बमरन सभी तो आती बामन, लेकिन अपने ही घर में बट बगिनी की तरह रहने लगी। किम मूह में बाहर निकलती? दुनिया में क्या ऐसा भी बही हुआ है कि समाकगुला सुमनमान औरत बटौर 'हनाना' के फिर अपने गौहर के साथ आकर रहने लगे? मउहूह के साथ इतना बड़ा छिपकाइ! इतना बड़ा दुनाह! अगर आज बट अनयन रहकर अपने माँ-बाप के साथ रहती होती तो क्या ऐसा ही गहगा था? बाटकर पंक न हो जाओ बट! उसने पूरी बिरादरी की नाक बटा दी है!

लेकिन भीतर-ही-भीतर एक अजीब तरह का गल्लोप भी उसे अनुभव होता था। जिसके साथ बट इतने दिनों तक छाया की तरह रहे, उसने अगर वादमदन में एक बार उसे घर में बाहर ही कर दिया तो क्या उनके दिनों की मुहयन भी गहम हो गयी? मूह में तीन बार समाक-समाक बट देने में ही क्या इतने दिनों का प्रेम-बग्नन बचने धागे की तरह टूट गया? बट तो दूसरे ही दिन में अपने आदमी और अपने बच्चों को देखने के लिए लड़ने लगी थी, लेकिन समाक और बिरादरी का हर ही उसे बाँधे हुए था।

मतीफ ने उस बग्नन को एक ही सटने में तोड़ दिया है, लेकिन क्या इस मिठाई की आमाती के साथ लोग स्वीकार कर लेंगे?

यस गही एक प्रश्न था जो बमरन को मरोड़े बाल रहा था। इसलिये इस प्रश्न में बचने के लिए उसने घर में आते ही खुद को काफी खराब कर लिया था। घर की दशा बड़ी ही गराब हो गयी थी। चारों ओर गन्दगी का साम्राज्य था। दीवारों बामो ही गयी थी और बोनो-अन्तरी में गेटी के टुकड़े, बूहो की मेशियाँ, पूरी हुई कीमियाँ तथा इसी तरह का डेरो कूड़ा-बबाह भरा था। उसने पूरा एक दिन समाक गारा कूड़ा गाफ किया और शरीफ से खूना मँगवाकर खुद ही दीवारों पर खूना-कमी की। कुछ ग हानाकि अब बडा हो गया था, लेकिन उचित देखभाल के अभाव में बट आवारा हो गया था। बाप तो बीमार है घर साथ ही दूबान में बैठा रहता, या दाममगो में भाकर बीमे की पकोटियों का स्वाद चघता होगा और रात में गारी पीकर घर मोटता और गही कुछ ग बी दामत यह बी कि मुहयने के हमउछ मोड़ों के साथ दिन-भर खजूरे पर बैठा रहता और गरी-गन्दी बानो में इस तरह मकदूम रहता कि बीन-दुनिया का उसे कुछ गपाम ही न रहता। एक तहरनिदा बेचारी थी कि दिन-भर घर के बामो में बूदी रहती थी।

कमरून के आते ही कुटूंस ख्यादातर घर में ही रहने लगा था, बल्कि कभी-कभी वह करघे पर भी बैठने लगा था। अन्तरनिया बहुत दिनों से नहीं आ रही थी, क्योंकि पेट में होने के कारण वह आने लायक ही नहीं रही थी। लेकिन बच्चा होने का दम जब निगचा गया तो एक दिन प्लास्टिक की डोलची में अपना धोड़ा-सा सामान लेकर वह भी आ गयी। तब से अभी तक यहीं है वह।

कमरून को लगा कि उसका बिखरा हुआ परिवार फिर सँवर गया, लेकिन मुस्लिमवालों को यह भला कैसे बर्दाश्त होता? पहले तो उन्होंने लतीफ को बुलाकर टाँटा-इपटा, समझाया, चुझाया, मजहब और शरीयत का कानून समझाया, विरादरी से निकाल देने की धमकी दी, लेकिन जब उस पर कोई असर नहीं हुआ तो मरदार-महतो की राय से यह तय हुआ कि सारा मामला पंचायत में रक्खा जाय और पंचायत का दिन तय कर दिया गया। लेकिन बीच में कुछ ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हुईं कि कई-कई बार तारीखें टलों और कई-कई बार विरादरी के लोग निराश हुए। आखिर पुदा-खुदा करके एक इतवार का दिन मुकर्रर हुआ।

पंचायत में कई-कई तरह के तर्क-वितर्क हो रहे थे। किस्म-किस्म के फतवे दिये जा रहे थे, लेकिन कोई भी निष्कर्ष नहीं निकल रहा था। धीरे-धीरे दिन डूब चला और रात हो गयी।

लेकिन पंचायत चलती रही।

रात के दो बज गये।

“तुवें पंच क बात माने के होइए।”

अन्त में अपना दूढ़ निर्णय रखते हुए सरदार साहब ने जब अपनी बात कही तो रुकफ चचा पड़े हो गये। उन्होंने अपनी लुंगी की सिकुड़न ठीक की, टोपी की नोक कुरस्त की और दाढ़ी पर हाथ फेरकर चौखते हुए-से बोले, “पंचो, पहले इ बताया जाय के नसे की हालत में अगर तिलाक दिया जाय त का तिलाक हो गोवा? इस्लाम में का यही लिखया है? सरदार साहब अउर महतो साहब, हाजी साहब, आप लोग कुरान-हदीस यूँ पढ़े हो, बताओ।”

“नाही भाई, नसे की हालत में तिलाक दिया जाय त तिलाक तो नहीं भोवा।” किसी ने टिप्पणी की तो लोग उसका मुँह देखने लगे।

“त जब तिलाक भोवे नाही भै तब फिर हलाला कइसा? लतीफ त नसे की हालत में ही तिलाक दिये रहेन। कमरून से पूछ लो।”

इस पर कोई कुछ नहीं बोला। रुकफ चचा और भी उत्साहित हुए। बोले, “आप लोग आपन-आपन टेक छोड़ी। लतीफ के अब होस आ गोवा है त ओके ठीक से रहे देव। ओके आपन किये की सजा भिन चुकी। इस्लाम सोहर-बीबी के अलग

करे के नहीं कहते।”

“बच्चा की बात एहम ठीक है। इ पंचायत-संचायत मत करो। हमारी बिरादरी में एक जने इ हिम्मत नियोन, इ तारीफ की बात है। आगे से इ देखा जाय कि कोई अपनी बीबी को एत्तर के तिलाक न देय।” मतीन अभी तक मोका दूँड़ रहा था कि वह भी कुछ कहे, कि रऊफ बच्चा की बातों ने उसकी हिम्मत बढ़ायी और वह बोल पड़ा।

इस पर पंचायत में बैठे कुछ पुराने लोग काफ़ी उत्तेजित हो गये।

तब कमरन ने भीतर से कहलाया कि अगर पंच का फैसला यह होता है कि मैं दूसरे किसी आदमी से शादी करने के बाद उससे तलाक़ लेकर तब इस घर में फिर आऊँ तो पंच को चाहिए कि मुझे जहर दे दे। मैं ऐसी ज़लामत का काम नहीं कर सकती। मेरे मौहूर ने मुझे दिल से तलाक़ नहीं दिया था और अब वह मुझे दिल से अपना रहा है, इसलिए पंच को चाहिए कि वह माफ़ी दे दे।

सरदार साहब खड़े हो गये।

“जमाना बहुत बदल गया म्याँ। चलो। अब ऊ पुरनका मजहब नहीं चले के।” उन्होंने कहा और अपनी चादर संभालते हुए बाहर निकल गये।

सतीफ़ के घर में पला हुआ मुर्गा चीखा—कुकूँ कूँ...! और पंचायत में बैठे सभी नमाज़ी लोग वहाँ से उठकर सीधे मस्जिद की ओर लपके। फज़िर का वक़्त क़रीब था।

37

हनीफ़ की बिटिया छोटा-सा नकाब ओढ़े, एक हाथ में बस्ता लिये चली आ रही है और बशीर का लड़का मुनुषा बीराहे पर खड़ा उसे घूर रहा है।

“क ये मुनुषा, तोरे अम्मा हैं न?” इकबाल की आवाज़ सुनकर मुनुषा सँप जाता है।

“हाँ हैं न!” वह जवाब देता है और वहाँ से चल देता है। इकबाल भी पीछे-पीछे बशीर से मिलने के लिए चल पड़ता है।

हनिफ़ा ने जब से अपने घरवानों से भेल किया है तबसे उसकी बहू की बिटिया बिबिया नज़बुनिया के पास बहुत आने-जाने लगी है, बल्कि उसका स्यादातर वक़्त अब अपनी बुआ के यहाँ ही कटता है। इकबाल ने हनीफ़ से कह-सुनकर हाल ही में

मुहल्ले में गुले लड़कियों के एक प्राइवेट मिडिल स्कूल में बिबिया का नाम सिखा दिया है और वह बाकायदा स्टूडेंट हो गयी है। पहले तो नजबुनिया को यह सब अच्छा नहीं लगा, लेकिन बाद में वह खामोज हो गयी। इकबाल ने अपनी 'माँ' को समझाया कि अब लड़कियों को पढ़ाना भी बहुत जरूरी हो गया है। हमारी बिरादरी की यह बहुत बड़ी कमी है कि हम लोग लड़कियों को सिर्फ कुरान शरीफ पढ़ाकर अपना फ़र्ज क़स्म समझ लेते हैं। दुनिया बहुत आगे बढ़ गयी है और तरक्की के इस ज़माने में हमें हर तरह से खुद को आगे ले जाना होगा।

हालांकि नजबुनिया को इन बातों का असली अर्थ नहीं मालूम है, फिर भी वह इकबाल के कामों में ज्यादा मीन-मेख नहीं निकालती, क्योंकि वह जानती है कि उसका गौहर मतीन खुद ही अपने बेटे के किसी काम पर उँगली नहीं उठाता, बल्कि गाहे-बगाहे उसे अपनी राय भी देता रहता है। इसलिए वह समझती है कि ये नये ज़माने के लड़के जो सोच रहे हैं और जो कर रहे हैं, उसमें कुछ अच्छाई तो जरूर है, वरना 'ये' बाप होकर भी अपने बेटे को ऐसा करने से क्यों नहीं रोकते भला ?

जब से बिबिया स्कूल जाने लगी है, उसके व्यवहार में एक अजीब-सा परिवर्तन दिखायी पड़ रहा है। पहले तो वह घर की हांडी-चूली में ही दिन-भर फँसी रहती थी और बाहर निकलने का उसे मौका ही नहीं मिलता था। जो थोड़ा-बहुत वक़्त बचता भी था, उसमें, या तो वह बँठी-बँठी नरी भरा करती थी या कतान फेरा करती थी। बहुत छोटी-सी उम्र से ही वह यह सब करने लगी थी और वह नहीं जानती थी कि दुनिया इसके आगे भी कहीं है। अब जाकर उसे मालूम हुआ है कि जिस घरती पर वह रहती है वह सूरज का एक टुकड़ा है और वह गोल है और वह सूरज के चारों ओर घूम रही है। इस मुल्क के ज्यादातर मुसलमान यहीं के वाणिन्दे हैं और अंग्रेजों ने यहाँ के हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों पर हुकूमत की है। कबीरदास एक बहुत बड़ा कवि था और वह उसी की जाति का था और वह उमी बनारस में रहकर कपड़ा भी बुनता था और कविता भी लिखता था... इस तरह बिबिया के सामने एक नयी दुनिया खुलती चली गयी थी और इसके लिए वह इकबाल के प्रति हृदय से कृतज्ञ हो उठी थी। लेकिन अपनी कृतज्ञता को प्रकट करने के लिए उसके पास कोई साधन नहीं था, सिवा इसके कि जब भी इकबाल उसके सामने आता वह हल्के-से मुस्करा देती और लज़ाकर सिर झुका लेती।

उस वक़्त जब इकबाल और मुनुवा में बातें हो रही थीं, तब भी वह नकाब के भीतर मुस्कराया थी और कनछी से इकबाल की ओर देखती हुई आगे बढ़ गयी थी।

इकबाल दशर के घर पहुँचकर बाहर ही खड़ा हो गया था। मुनुवा अपने अम्बा

को दुस्ताने भीतर खता गया था। दरअसल इकबाल चाहता था कि हाजी नबीर, हाजी बनिठल्ला और हाजी अमीरुल्ला के घर मजूरी पर बिननेवाले कारीगर भी उसके प्रोग्राम में शामिल हों और नहाई को कामयाब बना दें। इसके लिए एक रोड बूढ़ आसुराम के गाँवों की ओर भी गया था। बगीर मियाँ बाहर निकलकर आने लो इकबाल उन्हें अपने साथ लेकर चायघाने की ओर बड़ गया।

रास्ते में चार-पाँच सड़के गोलियाँ सेल रहे थे। सामने में इन्हें आते हुए देखकर वे घड़े हो गये और आराम में बातचीत करने लगे—

“कू से गाजी मियाँ क मेला कब है बे?”

“ई अत्तवार जो आई कई अत्तवार के है।”

“भक, ऊ अत्तवार के नइने। ओके बादवाले अत्तवार के है।”

“हाँ हाँ वही अत्तवार के है। हमरी अम्मा भी बहेत रही।”

इकबाल और बगीर आगे बढ़कर चायघाने में घुम गये और भीतर पड़ी एक गन्दी-सी बेंच पर बैठ गये। वहाँ पहने में भी कई लोग बैठे थे और बीड़ियों के धुएँ में पूरा माहील गर्मीला बना हुआ था। छत के ऊपर एक कासा-सा पंखा धीमी गति से घूम रहा था।

थोड़ी देर बाद वहाँ मतीन भी पहुँच गया था। साथ में बिराहिम और शरीफ भी थे, जो दूकान में जगह न होने के कारण बाहर ही खड़े हो गये थे।

“तो भाइयो, क्या सोचा आप सोमों ने? एहतेजाज में शामिल होंगे या सरमायादारों के जुलूम को इसी तरह मुँह बन्द करके सहते रहेंगे?”

इकबाल चायघाने में ही एक ओर खड़ा हो गया था और ऊँची आवाज में बोलने लगा था।

थोड़ी देर में क्या हुआ कि सड़क पर आने-जानेवाले लोग भी वहाँ खड़े हो गये और चायघाने के सामने एक अच्छा-खासा मजमा ही लग गया। मतीन टेबुल पर कुहनियाँ टिकाये, चुपचाप अपने बेटे की बातों को सुन रहा था।

इकबाल मेला खता गया है और एकान्त देखकर मतीन ने नजबुनिया को अपने पास बुला लिया है। धिरकी-दरवाजा बन्द करके दोनों साथ-साथ सेटे हुए हैं और सुछ-दुछ की धर्मा में मशगूल हैं। जमाना कितना बुरा आ गया है। हर चीज

मुहल्ले में मुने लड़कियों के एक प्राइवेट मिडिल स्कूल में बिबिया का नाम लिखा दिया है और वह चाज़ायदा स्टूडेंट हो गयी है। पहले तो नजबुनिया को यह सब अच्छा नहीं लगा, लेकिन बाद में वह खामोश हो गयी। इकबाल ने अपनी 'माँ' को समझाया कि अब लड़कियों को पढ़ाना भी बहुत जरूरी हो गया है। हमारी बिरादरी को यह बहुत बड़ी कमी है कि हम लोग लड़कियों को सिर्फ़ कुरान शरीफ़ पढ़ाकर अपना फ़र्ज पूरत समझ लेते हैं। दुनिया बहुत आगे बढ़ गयी है और तरक्की के इस ज़माने में हमें हर तरह से खुद को आगे ले जाना होगा।

हालाँकि नजबुनिया को इन बातों का असली अर्थ नहीं मालूम है, फिर भी वह इकबाल के कामों में ज्यादा मोन-मेख नहीं निकालती, क्योंकि वह जानती है कि उसका शौहर मतीन खुद ही अपने बेटे के किसी काम पर ज़ंगली नहीं उठाता, बल्कि गाढ़े-गगाढ़े उसे अपनी राय भी देता रहता है। इसलिए वह समझती है कि ये नये ज़माने के लड़के जो सोच रहे हैं और जो कर रहे हैं, उसमें कुछ अच्छाई तो जरूर है, वरना 'ये' बाप होकर भी अपने बेटे को ऐसा करने से क्यों नहीं रोकते भला ?

जब से बिबिया स्कूल जाने लगी है, उसके व्यवहार में एक अजीब-सा परिवर्तन दिखायी पड़ रहा है। पहले तो वह घर की हाँड़ी-चूली में ही दिन-भर फँसी रहती थी और बाहर निकलने का उसे मौक़ा ही नहीं मिलता था। जो थोड़ा-बहुत वज़त बचता भी था, उसमें, या तो वह बैठी-बैठी नरी भरा करती थी या कतान फेरा करती थी। बहुत छोटी-सी उम्र से ही वह यह सब करने लगी थी और वह नहीं जानती थी कि दुनिया इसके आगे भी कहीं है। अब जाकर उसे मालूम हुआ है कि जिस घरती पर वह रहती है वह सूरज का एक टुकड़ा है और वह गोल है और वह सूरज के चारों ओर घूम रही है। इस मुल्क के ज्यादातर मुसलमान यहीं के वाशिन्डे हैं और अंग्रेजों ने यहाँ के हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों पर हुकूमत की है। गबीरदास एक बहुत बड़ा कवि था और वह उसी की जाति का था और वह उसी बनारस में रहकर कपड़ा भी बुनता था और कविता भी लिखता था... इस तरह बिबिया के सामने एक नयी दुनिया खुलती चली गयी थी और इसके लिए वह इकबाल के प्रति हृदय से कृतज्ञ हो उठी थी। लेकिन अपनी कृतज्ञता को प्रकट करने के लिए उसके पास कोई साधन नहीं था, सिवा इसके कि जब भी इकबाल उसके सामने आता वह हल्के-से मुस्करा देती और लज़ाकर सिर झुका लेती।

उस वक़्त जब इकबाल और मुनुवा में बातें हो रही थीं, तब भी वह नकाव के भीतर मुस्करायी थी और कनखी से इकबाल की ओर देखती हुई आगे बढ़ गयी थी।

इकबाल बशीर के घर पहुँचकर बाहर ही पड़ा हो गया था। मुनुवा अपने अम्बा

को बुलाने भीतर चला गया था। दरअसल इकबाल चाहता था कि हाजी गज़ीर, हाजी बसिउल्ला और हाजी अमीरुल्ला के घर मज़ूरी पर बिननेवाले कारीगर भी उसके प्रोपाम में शामिल हो और लड़ाई को कामयाब बनायें। इसके लिए एक रोज़ वह आसपास के गाँवों की ओर भी गया था। वशीर मियाँ बाहर निकलकर आये तो इकबाल उन्हें अपने साथ लेकर चायघाने की ओर बढ़ गया।

रास्ते में चार-पाँच सड़के गोतिरियाँ खेत रहे थे। सामने से इन्हें आते हुए देखकर वे खड़े हो गये और आपस में बातचीत करने लगे—

“कब वे गाजी मियाँ का मेला कब है वे?”

“ई अत्तवार जो अइए बई अत्तवार के है।”

“भक, ऊ अत्तवार के नइने। ओके बादवाले अत्तवार के है।”

“हाँ हाँ वही अत्तवार के है। हमरी अम्मा भी कहते रही।”

इकबाल और वशीर आगे बढ़कर चायघाने में घुस गये और भीतर पड़ी एक गन्दी-सी बेंच पर बैठ गये। वहाँ पहले से भी कई लोग बैठे थे और बीड़ियों के धुएँ से पूरा माहौल गन्धैला बना हुआ था। छत के ऊपर एक कासा-सा पंखा धीमी गति से घूम रहा था।

थोड़ी देर बाद वहाँ मतीन भी पहुँच गया था। साथ में बिराहिम और शरीफ भी थे, जो दूकान में जगह न होने के कारण बाहर ही खड़े हो गये थे।

“तो भाइयो, क्या सोचा आप लोगों ने? एहतेजाज में शामिल होंगे या सरमायादारों के जुल्म को इसी तरह मुँह बन्द करके सहते रहेंगे?”

इकबाल चायघाने में ही एक ओर खड़ा हो गया था और ऊँची आवाज़ में बोलने लगा था।

थोड़ी देर में क्या हुआ कि सड़क पर आने-जानेवाले लोग भी वहाँ खड़े हो गये और चायघाने के सामने एक अच्छा-खासा मजमा ही लग गया। मतीन टेबुल पर कुहनियाँ टिकाये, चुपचाप अपने बेटे की बातों को सुन रहा था।

इकबाल मेला चला गया है और एकान्त देखकर मतीन ने नज़बुनिया को अपने पास बुला लिया है। गिरफ़ी-दरवाजा बन्द करके दोनों साथ-साथ सेटे हुए हैं और सुख-दुख की चर्चा में मग्न हैं। जमाना कितना बुरा आ गया है। हर चीज़

कितनी मेंदगी हो गयी है। तानीवाले का कितना क्रुज चढ़ा हुआ है ! कैसे क्या होगा ! इकबलवा का ब्याह भी अब कर देना चाहिए ! आदि-आदि ।

फिर अचानक मतीन के हाथ गुनुर-फुमुर करने लगते हैं और नजबुनिया खिल-खिलाने लगती है ।

इससे पहले जब भी वे साथ-साथ लेटते थे, मतीन को अलीमुन की याद आ जाती थी और नजबुनिया को अपने पुराने शौहर की । और दोनों ही का मन न जाने कैसा तो हो जाता था । लेकिन आज दोनों ही प्रफुल्ल थे । ऐसा घोर एकान्त भी शायद उन्हें कभी नहीं मिला था । वे उन क्षणों को पूरे मनोयोग से जी रहे थे ।

“बुआ !”

थोड़ी देर बाद ही बाहर से विविया की आवाज आयी तो नजबुनिया हड़बड़ाकर उठ बैठी । उसका अंग-अंग उस वक़्त अलसाया हुआ था और उठने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी, लेकिन क्षट से वह खड़ी हो गयी और ‘के है ? विविया !’ कहती हुई अपने खुले हुए वालों को पल्लू में छिपाती हुई दरवाजे की ओर बढ़ चली । मतीन ने घिड़की खोल दी और उठकर तोगरे के पीछे कुछ ढूँढ़ने लगा ।

विविया नकाब उतारकर पानी के घड़े की ओर बढ़ गयी । उसे बहुत तेज प्यास लगी हुई थी । उसने मलसी में पानी निकालकर गट-गट पिया और नजबुनिया के सामने आकर खड़ी हो गयी ।

“आज गाजी मियाँ क मेला है, चलो बुआ घूम आवें ।” उसने प्रस्ताव रखा तो नजबुनिया तैयार हो गयी । उसने मतीन की ओर आँखें तरेरीं और बोली, “तू भी चलो !”

मतीन मुस्कराया । थोड़ी देर तक वह नजबुनिया को देखता रहा, फिर उठा और कमीज पहनने लगा ।

मेले में बड़ी भीड़ है । औरतें नकाब उलटे मलाई बरफ खाती घूम रही हैं और बच्चे झिलीनों के लिए ठुनक रहे हैं । आगे-आगे मतीन चल रहा है और पीछे-पीछे नजबुनिया के साथ विविया । अचानक एक दूकान पर इकबलवा दिख जाता है । वह अपने दोस्तों के साथ गड़ा था और उसके हाथ में एक सिगरेट जल रही थी । इन लोगों को देखते ही उसने सिगरेट एक ओर फेंक दी और मुँह घुमाकर खड़ा हो गया । मतीन ने उसे ऐसा करते हुए साफ़ देख लिया, लेकिन नज़र-अन्दाज़ किया । नये जमाने के लड़के हैं, इन्हें पुराने कानूनों में नहीं बाँधा जा सकता । इतना लिहाज किया, यही क्या कम है, बरना आजकल तो ऐसा जमाना आ गया है कि लोंडे चुरचोटी के बाप के सामने लोंडिया लेकर घूमने लगे हैं !

अल्ताफ के दोनों बच्चे सुबह से ही मेला जाने के लिए तैयार हैं । पपुआ सवेरवें

सं पूछ रहा था, "अब्या मेला मैं हम लोग के लिया चल्यो ने?"

"हाँ संभा के लिया चलने।" उसने आश्वासन दिया था और चार बजते-बजते दोनों बच्चे धीमे-धीमे, "अब्या चली बेला हो गयी!"

अस्ताफ ने जब देखा कि ये लोग किसी भी तरह नहीं मानेंगे तो हनिफा के यहाँ जाकर दो रुपया उधार माँग लाया और अपना 'नेता' वाला ट्रेस पहनकर तैयार हो गया।

"अच्छा चली सब कोई, कपड़ा मजे-मजे का पहिन के चली।"

उसने अपने बच्चों को भी कपड़े बदलने का आदेश दिया तो पपुआ और बटवा घिस उठे, लेकिन कभी-कभी पहनने के लिए भी उनके पास जो कपड़े थे वे निहायत बीसीदा और मुड़े-बुड़े थे। बच्चों ने उन्हीं कपड़ों को इस अम्दाज से पहना जैसे वे शाहजादों की पोशाक पहन रहे हों और तैयार हो गये।

चलते-चलते अस्ताफ ने अपने दोनों बच्चों को सावधान किया, "चल बे बटवा, देख सचने साथ चलवे थे। अबे पपुआ देख बटवा का हाथ पकड़े रहिबे, ऊ हेराये न। कउनो हेराएँ ना?"

और अस्ताफ की बीबी ने जब देखा कि मेला चलने के लिए उसे कोई नहीं पूछ रहा है तो वह झमककर भीतर गयी और अपने आप ही तैयार होने लगी। वह बशीर की बीबी के साथ या कमरून के साथ चली जायेगी। उसे किसी का डर पोंड़े रखा है।

मेले में पहुँचकर पपुआ और बटवा ने अस्ताफ की नाक में दम कर दिया—

"अब्या हम ऊ सेंने।"

"अब्या हम ई सेंने।"

"अब्या हम चर्यो झूलेंने।"

"अब्या हमें उईवाला गुम्वाडा दियाओ।"

और अस्ताफ अपनी जेब की सीमा देखता हुआ उन्हें समझाने में लगा हुआ था, "अबे नाहीं बे, ऊ नाही सेवे के है। चल आओ, हमई दियाइति। लो ई घामो, ई बहुत बड़ियाँ है। लो ई लो। अबे बटवा उधर मत जाव।"

अस्ताफ ने दोनों लिए जो थोड़ी-सी नानघताई और थोड़ी-सी घिजली घरीद दी थी, उन्हें अपने नन्हे-नन्हे हाथों में लिये वे गर्म-गर्म धूस में नंगे पाँव चल रहे थे और मगन थे।

अचानक मतीन को देखकर अस्ताफ खड़ा हो गया। नजबुनिया के साथ अब बिबिया के अलावा अस्ताफ की बीबी हन्नुन भी थी। एक ओर कमरून, अस्त-रनिया, महरून और मामिना भी खड़ी थी। पपुआ और बटवा दौड़कर अपनी अम्मा के पास पहुँच गये थे।

मतीन और अस्ताफ स्त्रियों को छोड़कर अलग हो गये थे।

“नद परोगराम बन गोवा है, पर इकताल कहेंतेन के अवहीं बघत नाहीं भोवा है। एहतेजाज बघत पर होय के चाही।”

अल्ताफ़ मानों इस विषय पर मतीन की राय जानना चाहता था, लेकिन मतीन कुछ नहीं बोलता। वह चुपचाप मेले में चलता रहता है। उसके पाँव गर्द में सन गये हैं और कंभी किये गये बाल हवा की बजह से बिखर गये हैं, पर वह सब कुछ न देखता है। उगे मेले में चल रहे लोगों और अपने आसपास लगी दुकानों का ध्यान भी नहीं है, मानो मेले में होकर भी वह मेले में नहीं है।

“हमारे कमरेट नोग कहेंतेन के...” मतीन को चुप देखकर अल्ताफ़ ने अपनी बान का तिलमिना फिर शुरू करना चाहा, लेकिन तभी उसे शरफुद्दीन दिखायी पड़ गया और वह खामोश हो गया। पीछे-पीछे उसकी बीबी भी थी।

मतीन एक झूले के पास रुक गया।

“मेला में शरफुद्दीनवो आइसे।”

“आवे दो म्याँ, का तूँ अकेलवे मेला घुमियो ? चलो, पइसा होय त झूला झूल लो।” मतीन ने पहले थोड़ा सख्त होकर और फिर हँसते हुए अल्ताफ़ का ध्यान बँटाया और तेजी से घूमते हुए झूले को देखने लगा। झूले पर झुण्ड-की-झुण्ड औरतें और बच्चे लदे हुए थे। झूला किसी बहुत बड़े चखे की तरह तेजी के साथ घूम रहा था।

39

शरफुद्दीन एम. एल. ए. का नया मकान तैयार हो गया है। यह मकान उसने अपनी निजी कमाई से बनवाया है। इसमें हाजी अमीरुल्ला का कुछ भी नहीं लगा है—गिरा देग़भान के। मकान बिल्कुल अंग्रेजी ढंग का बना है। कई-कई तरह की टाइलिंग और कई-कई तरह के पत्थरों से पूरे भवन को सुसज्जित किया गया है। सामने छोटा-सा, मगर गूँथमूरत-मा एक लॉन है। मकान हालाँकि गली में बना हुआ है, पर दूर से ही दिखायी पड़ जाता है। गली के मोड़ पर एक बोर्ड लगा दिया गया है—श्री शरफुद्दीन एम. एल. ए.। यही नहीं, आगे चलकर गली के किनारे पत्थर की एक पटिया भी लगायी गयी है, जिस पर लिखा है : हाजी अमीरुल्ला रोट ! यह गली आगे जाकर एक पतली-सी सड़क से मिल जाती है।

मकान में बड़ी-बड़ी फ़िटफ़िर्षा हैं और बड़े-बड़े दरवाजे। उनमें कीमती शीशे

जड़े हुए हैं। छन पर एक पुलवारी लगायी गयी है, जिसमें तरह-तरह के बंस्टम-
वाने गमने लाकर रंगे गये हैं। एम. एस. ए. साहब की बीबी अपनी पेरानो टीक
करती हुई रोज अपने नगोल पर चढ़ती है और अपने पति के पीछों को प्यार करती
है।

लेकिन इस मकान का निचना हिस्सा पुराने ढंग का है। एम. एस. ए. साहब
का विचार था कि नीचे खूब बड़ा-सा डाइनिंग हाल बनाया जाये और उगी में सटा
हुआ ड्राइंग रूम बने, लेकिन हाजी मतीउल्ला और हाजी मिनिम्टर नाराज हो
गये। उन्होंने हाजी अमीरुल्ला से वानचीन की ओर मुझाव दिया कि नये फैशन में
बहकर अपने जातीय गुणों का स्थापन कर देना बुद्धिमानी का काम नहीं है। हालांकि
हाजी हबीबुल्ला को इस मकान-बकान में कोई रुचि नहीं थी लेकिन इस सम्बन्ध
में उनकी राय भी अपने अन्य भाइयों की राय से मेल गी रही थी। मकानवासी
यह समस्या मरदार-महतो तक के कान में जा पहुँची और शरफुद्दीन की बल्नाएँ
धराशायी हो गयी। मकान का निचना हिस्सा उन्हें पारम्परिक ढंग में ही बनवाना
पड़ा, अर्थात् बीच में एक खूब बड़ा-सा आँगन और आँगन के चारों ओर चार बड़े-
बड़े कमरे। रिवाज के अनुसार आँगन की ओर खुलनेवाले तीन-तीन दरवाजे सभी
कमरों में होने चाहिए। शरफुद्दीन ने जब यह कहा कि ड्राइंग रूम में तो आँगन की
ओर एक ही दरवाजा होगा तो बड़े-बूढ़ों ने राय दी कि तब दीवार पर दो दरवाजों
के निशान बनाये जाने चाहिए, वरना परम्परा का उल्लंघन होगा। फिर मकान
बन जाने के बाद यह भी मसला सामने आया कि शरफुद्दीन जिसे बार-बार 'ड्राइंग
रूम' कह रहा था उसकी सजावट कैसी होनी चाहिए? एम. एस. ए. साहब की
राय थी कि इस कमरे में एक आलीशान सोफासेट होना चाहिए और एक ओर
सनमादका की मेज तथा भूमिज बेयर। लेकिन हाजी अमीरुल्ला की राय थी कि
'कोठरी' में गद्दी बिछी होनी चाहिए और बाहर की ओर में नहीं, बल्कि आँगन की
ओर से प्रवेश होना चाहिए, ताकि लोग आँगन में जूते उतारकर 'ड्राइंग रूम' वाली
'कोठरी' में जा सकें। इस मसले पर देर तक बहस-मुवाहसा होता रहा। फिर यह
तय पाया कि दोनों की इच्छाओं में समन्वय स्थापित करके इस महत्वपूर्ण मसले को
छरम किया जाय। और इस तरह जो नया विचार बना वह यह था कि कमरे में
गद्दी नहीं, सोफासेट ही होना चाहिए, पर प्रवेश आँगन की ओर से ही होना चाहिए
और जूते उतारकर!

तो इस तरह यह 'इंग्लिश-कम-अंमारी-स्टाइल' का मकान तैयार हुआ और
सेठ गजाधर प्रसाद की राय में बाकायदा 'गृह प्रवेश' का आयोजन भी किया गया,
लेकिन शुद्ध इस्लामिक ढंग से। उस रोज फजिर बाद में ही कुरआन ख़्तानी शुरू
हो गयी, जो दोपहर तक चलती रही। कुरआन पढ़नेवाले सौदों को इमिरनी बाँटी
गयी और बाद में एक घास दाबत हुई, जिसमें बड़े-बड़े लोग उपस्थित हुए। फिर

हाजी अमीरुल्ला ने बड़ी देर तक उन्हें घुमा-घुमाकर मकान दिखाया। एक-एक हिस्से के महत्त्व पर प्रकाश डाला और समझाया कि किस तरह उन्होंने इतनी कम जगह में इतना बड़ा मकान बनवा लिया। यहाँ तक कि लैंड्रिन-वायरूम का दरवाजा गोलकर भी उन्होंने उस जगह के बारे में एक छोटी-सी टिप्पणी की। लोगों ने देखा कि लैंड्रिन में बिल्कुल ताजा टट्टी पड़ी हुई थी जिसमें एक बदमाश क्रिस्म का केंचुआ अकड़ रहा था। हाजी अमीरुल्ला को इस दृश्य से बड़ी शर्मिन्दगी हुई और वे वही से चिल्लाये, “क वे कमरुवा, देख ईहा के हगो है ? फलस नाहीं चलाइसे ! देव त ओके !”

और मेहमानों के साथ वे छत पर चले गये—गार्डन दिखाने के लिए !

40

चारों ओर पानी-ही-पानी दिखायी पड़ रहा है। हफ्ते-भर से सूरज का पता नहीं है। जितनी तेज गरमी पड़ी है इस साल, उतनी ही तेज बारिश भी हो रही है। पूरा बनारस जलाहल हो गया है।

सरैया डूब गया है। वहाँ के बेघर-बार हुए बुनकर लाइन के इस पार आ गये हैं और अंसारी स्कूल में उन्हें शरण मिली है। हालाँकि स्कूल के बाहर भी पानी-ही-पानी है और भीतर का प्ले ग्राउण्ड भी डूबा हुआ है, लेकिन बरामदे पर पानी नहीं पड़ा है। बाइप्रस्त लोग बरामदों में घुसकर पड़े हुए हैं। भागमभाग में वे अपने साथ जो कुछ भी ला सके हैं वह इस तरह वहाँ पड़ा हुआ है, जैसे उसकी भी अब कोई जरूरत नहीं रह गयी है। जिन लोगों ने सस्ती जमीनें लेकर उधर बरणा के किनारे छोटी-मोटी कोठरियाँ बना ली थीं, वे सब-के-सब लोग इस वक़्त बेघर हो गये हैं। उनके घर डूब गये हैं और जरूरत की चीजें वह गयी हैं। सिर्फ कुछ कपड़ियाँ बची हैं और अलुगुनियम के कुछ बर्तन। अपनी इतनी-सी कायनात लिये हुए वे लोग अपनी स्त्रियों और लड़कों-लड़कियों के साथ अंसारी स्कूल के बरामदों में पड़े हुए हैं। कई रोज़ ने गुन रहे हैं कि एम. एल. ए. साहब हवाई जहाज से उनके लिए साटा-साल नानेवाने हैं, पर अभी तक कुछ पता नहीं है।

इस मान मंगा और बरणा दोनों सीतें इस तरह क्रुद्ध हुई हैं कि उनके रोप में पूरी कानी डूबी जा रही है। उधर नगवा डूब गया है। अस्सी और गोदोलिया के चौराहों पर नावें चल रही हैं। इधर मछोदरी और हनुमान फाटक में पानी भरा

हुआ है। सारा गांव-काज टप हो गया है।

राजपाट पुल पर बाढ़ देखनेवालों की भीड़ समी हुई है। उस पार के सारे वृक्ष डूब गये हैं। जो वृक्ष बचे हैं उनकी फूलगियां ही सिर्फ दिखायी पड़ रही हैं। गांवों के लोग भाग गये हैं और उनके मकान या तो गिर गये हैं या डूब गये हैं।

गंगा में जब कोई छप्पर बहता हुआ दिखायी पड़ता है, या जब कोई भैंस बहती हुई नजर आती है तो बाढ़ देखनेवाले इस कदर खुश होते हैं मानो उन्हें ईश्वर का चांद देख लिया हो।

इधर यजीर की कोठरी में नाली का पानी घुस आया है और वे लोग भागकर अपनी यही ब्रिटिया के यहाँ चले गये हैं। मतीन, इकबाल और अन्तारु चन्दा मांग-मांगकर अमारी स्कूल में बसे हुए शरणापियों के लिए आटा-प्याज खरीद रहे हैं और उधर बिनेमरगंज की ओर से घूमकर किसी तरह उन तक चीजें पहुँचा रहे हैं। इधर कुछ दिनों से अमारी स्कूल के पुराने छात्रों ने 'ओल्ड ब्याच एमोसियेशन' बना रखा है। इकबाल ने इस काम में एमोसियेशनवालों की भी सहायता ली है, हालाँकि इस एमोसियेशन का गठन हुआ था अमारी स्कूल के मैनेजर, प्रिंसिपल और चन्द पिट्टू टाईप अध्यापकों की राह-रास्त पर साने के उद्देश्य से, लेकिन बिरादरी का बमोला देकर उनके अभिभावकों से उनकी ऐसी शिकायतें की गयी कि सबकुछ टॉय-टॉय फिक्स हो गया। इकबाल ने कहा, बसो राजनैतिक काम नहीं कर सके न सही, सामाजिक काम ही करो।

सगमग बीस रोड तक बाढ़ का ताण्डव जारी रहा और बुनकरों की रूहो-सही ताकत भी जवाब दे गयी।

महोदारों, गिरस्तों और कोठीवालों का दमनक बदस्तूर चलता रहा।

41

छित्तनपुरा चउमुहानी पर बनारस-भर के बुनकर इकट्ठे हो रहे हैं। मजूरों पर बिननेवाले, बानी पर बिननेवाले, बिन्नी पर बिननेवाले सभी तरह के बुनकर। बड़ी बजार, कच्ची बाग, बकरिया कुण्ड, दोसीपुरा, सदनपुरा, बरजी गानुत्तापुरा, जसालीपुरा, गरमा, पठानी टोला, कोयला बाजार, आतमपुरा, बहेनिया टोला और सत्तापुरा, औरंगाबाद, भदनपुरा से लेकर बजगडीहा और मोहता तक के

बुनकर चले आ रहे हैं। लुंगी-कुर्ता पहने, टोपी लगाये, पान दबाये। सभा होगी। सभा में कटौती के खिलाफ 'एक्सन' लिया जायेगा। को-ऑपरेटिव में हो रही घांघली के खिलाफ बोला जायेगा। फर्जी सोसाइटियों का भण्डाफोड़ किया जायेगा...

...जनाब इकबाल अहमद अंसारी की तकरीर है।

"उहँ मतिनवा के बेटा इकबाल?"

"हाँ म्याँ उहे, बहुत बढ़िया बोलेते!"

"हाँ म्याँ, मतिनवाँ निपर निकलिये।"

"बाप से बड़ के है म्याँ!"

"चली चली!"

और भीड़ बढ़ती जा रही है। युग-युगों से करघे-कतान के दोस तले दबे हुए बुनकर पत्थर की दरार में जगती हुई घास की तरह बेरोक-टोक बढ़ते जा रहे हैं।

"इ बनारस में म्याँ इतने जोलहा हैं न! बुरचोदी के पतें नहीं चलत रहा! हम समझत रहे छंटहियों के इ गिरस्तवन जादा हैं न! अब आवैं छिनरो के, हम देगी ते!"

और अगले दिन से बुनकरों की हड़ताल शुरू हो गयी।

छित्तनपुरा चउमुहानी पर दो तख्तों का एक स्टेज बना हुआ है, जिस पर दरी-चाँदनी बिछी हुई है। मकानों के छज्जों से बाँधकर चारों ओर फागज की झण्डियाँ लगा दी गयी हैं। चबूतरों पर दफती के कुछ पोस्टर्स रख दिये गये हैं और एक माइक का इन्तजाम कर लिया गया है। लगभग पन्द्रह रोज से चउमुहानी पर मेला-जैसा लगा हुआ है। रोज ये होता है कि अब कोई-न-कोई फैसला हो जायेगा, मगर मामला फिर उलझ जाता है। धीरे-धीरे बुनकरों की हालत बिगड़ती जा रही है। जब काम ही न होगा तो खर्चा कैसे चलेगा?

लोगों का उत्साह कम होता जा रहा है।

मतीन ने जब देखा कि हड़ताल बहुत लम्बी खिच रही है और आम बुनकर प्यगते जा रहे हैं तो इकबाल और अल्ताफ को बुलाकर उसने सलाह दी कि हड़ताल को अब अनशन की शक्ल में बदल देना चाहिए। कुछ लोग पारी-पारी से यहाँ अनशन पर बैठें और जिसका जी चाहे काम करता रहे, वरना लड़ाई नाकाम-याब हो जायेगी।

1. बनारस में कटौती के खिलाफ बुनकरों का एक आन्दोलन जनता पार्टी के शासन-काल में हुआ था।

मनीन का यह सुमाध हनिकर्ता को भी पगन्द आया और अगले ही दिन से अनशन का कार्यक्रम शुरू कर दिया गया। मजूरी पर और बानी पर बिननेवाले घुनकर इस फैसले से बहुत खुश हुए, लेकिन भीतर-ही-भीतर वे इनने गमिन्दा थे कि आत्मग्लानि में डूबे जा रहे थे। हालाँकि करघों पर वे बैठने लगे थे, लेकिन काम में उनका मन नहीं लगता था और वे सोच घूम-फिरकर छितनपुरा खजमुहानी पर चले आते थे। अनशन पर चाहे कोई भी बैठा हो, पर मनीन बराबर स्टेज पर बैठा रहता था—मुमगुम, और एक अजीब-से तनाव में डूबा हुआ।

42

सफर¹ का महीना खत्म हो रहा है। आज 'आघिरी बुघ' है। सफर-महीने का आघिरी बुघ। बनारस के घुनकरों का यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पर्व है। इनका विश्वास है कि हजरत मुहम्मद साहब ने इसी रोज़ गुस्ते-सेहत किया था। उन दिनों वे सम्बी बीमारी से रहे थे और उनकी सेहत जब ठीक हुई तो जिस रोज़ बिस्तर से उठकर उन्होंने स्नान किया और बढ़िया-बढ़िया घाना घाया, वह 'सफर' महीने का आघिरी बुघवार था। उस रोज़ के बाद वे फिर बीमार पड़ गये थे और उनकी मृत्यु हो गयी थी। उनकी जिन्दगी में उस बुघवार जैसा घुगनुमा बुघवार फिर कभी नहीं आया, अतः प्रतिवर्ष सफर महीने के अन्तिम बुघवार के रोज़ बनारस के घुनकर बढ़िया-बढ़िया पकवान बनाते हैं और उस पर न्याउ-फातेहा कराते हैं। इस रोज़ मुरी बन्द रहती है।² करघे नहीं चलते। बिनकारी का कोई काम नहीं होता। कारीगरों को मिठाइयाँ बाँटी जाती हैं और इस पर्व को एक जल के रूप में मनाया जाता है।

नजबुनिया ने दो रोज़ पहले से ही गेहूँ के दाने भिगो दिये हैं। मनीन के घर में 'आघिरी बुघ' को हर साल गेहूँ का हलुवा जरूर बनता है। इस साल हालाँकि हड़ताल-फड़ताल और अनसन-फनसन में दोनों बाप-बेटे बुरी तरह फँसे हुए हैं, लेकिन त्योहार मनाना कोई छोड़े न छोड़ देगा।

1. मुहर्रम के बाद का अरबी महीना।

2. काम बन्द रहता है।

विरोध का यह कार्यक्रम पिछले अठारह दिनों में चल रहा है, लेकिन किसी के कान पर जूँ तक नहीं रेंग रही है। बीच में एक रोज़ हाजी अमीरुल्ला, सेठ गजाधर प्रसाद और मरकुद्दीन नेता समझाने-बुझाने आये थे, लेकिन बान्दोलनकारियों पर कोई असर नहीं पड़ा। इकबाल ने तो साफ़ कह दिया कि जब तक कटौती का किन्हीं एक अंग नहीं किया जायेगा और जब तक को-ऑपरेटिव सोसाइटियों में आम चुनकरों की भागीदारी शामिल नहीं की जायगी तब तक यह कार्यक्रम जारी रहेगा। यही बात उसने डी. एम. के सामने भी कही और सब अपना-अपना मुँह लेकर वापस लौट गये। लेकिन इसके बावजूद अभी तक कुछ नहीं हो सका है। न सरकार की ओर से कोई आश्वासन मिला, न कोठीवालों की ओर से। इसलिए वातावरण में एक मटमैली-सी धुन्ध छायी हुई है, पर बीच में त्योहार के आ जाने से यह धुन्ध कुछ हल्की हो गयी है।

मुहल्लों में चहल-पहल खूब बढ़ गयी है और रसोईघरों में सुबह से ही खटर-पटर शुरू हो गयी है। लड़के धमाचौकड़ी मचाये हुए हैं और लड़कियाँ अपने वालों में अफ़ाँ के बेलबूटे सजाये तिलतियों की तरह फुदक रही हैं।

विविया सुबह से ही अपनी बुआ के यहाँ आ गयी है, लेकिन घर में कुछ सामान न होने की वजह से अभी तक कुछ पका-बका नहीं है। दो वज रहे हैं।

बस थोड़ी देर पहले मतीन चउमुहानी पर से आया था तो वनिये के यहाँ से पो-चीनी और गोशवाड़ा से गोश्त लाकर रख गया है। इकबाल का तो कुछ पता ही नहीं है।

मतीन बता रहा था कि आज अनशन पर बैठने के लिए कोई तैयार नहीं है।

ठीक तो है, भला त्योहार के दिन भी कोई भूखा रहेगा? इन बाप-बेटों की अप्स को पता नहीं क्या हो गया है? नजबुनिया सोचती है और उसे औंधाई आने लगती है। वह घटिया पर लेट जाती है। विविया खिड़की पर जाकर खड़ी हो जाती है। यहाँ से छित्तनपुरा चउमुहानी का दृश्य बहुत साफ़ नज़र आता है। वह देर तक वहीं खड़ी रहती है।

अचानक नजबुनिया की नोद टूट जाती है और उसे लगता है कि शाम हो गयी, वह विविया को बड़बड़ाने लगती है, "अरे अल्ला, चार वज गोवा जनाते। विविया! कहाँ है रेतें? अबइन तक का करेती रे तें? तोके तनियको पकावे-आंकावे की फिकिर है के नाहीं रे? देख एग्री अवेर हो गयी, अबइन तक तै हाँड़ी-चूली की नाहीं किये है। चल जल्दी से मसाला पोस। तब से हम गोस बइठा के पियान सानी ला।"

विविया शट से हाँड़ी-चूली करके मसाला पोसने बंठ गयी। नजबुनिया दूसरे कमरों में लग गयी। पेट में बच्चा होने की वजह से वह ठीक से उठ-बैठ नहीं पाती, लेकिन बिना किये कुछ होता भी तो नहीं। आजकल वह कुछ चिड़चिड़ी भी हो

गयी है। अचानक वह फिर चिल्लाती है, "मसाला पिस गोवा रे?"

"हाँ बस पिसाइ गोवा है।"

"पीस के घाली होइवे त देख होइ मिर्चा रख्या है, ओके तइसा काट देवे—
मसाला के साथ भूँजे घातिर।"

और रसोई घर में पहुँचकर वह फिर चीखने लगी, "अरे ऊ कहाँ है रे?"

"कउन ची...?"

"अरे कबगीर, अउर दरवा, अउर अघरा, अउर पासली, ई सबकुछ देखइवे
नहीं करते रे!"

"ऊ सब गहरेवाली अलमरिया मे रक्खा है।"

और सारी चीजें एकत्र करके नजबुनिया घाना पकाने बैठ गयी। पहले उसने
गेहूँ की गुरी का हलुवा बनाया, फिर आटा गूँथकर गोश्त भूनने के लिए बैठ गयी।

"देख हम गोस भूँजे जाइसा, पिसान सान दिया है। तै तावा चढ़ा के रोटी
पकाव। देख मजे की रोटी पकइवे। खूब फुल्ली-फुल्ली रहे।" उसने बिबिया को
आदेश दिया और गोश्त भूनते-भूनते बिबिया का रोटी पकाना भी वह देखती रही।
इ पढाई-लिखाई से यही तो खराबी है कि सड़कियाँ घर-गिरस्ती में एकदम
कमजोर हो जाती हैं। नजबुनिया को लगा कि बिबिया फुल्ली-फुल्ली रोटियाँ नहीं
पका रही है तो वह गोश्त छोड़कर रोटी पकाने बैठ गयी।

"ला दे, हट तै, अब हम रोटी पकावें। देख गोस पक जइये न ओकी देगची
धूला पर मे उतार के, घरतरी रख के, बही पर रख देवे। अउर देख, ऊ बर्तन जुट्टा
है, ओके जोइना लेके माँज देवे।"

तभी सीडियो पर किसी की आहट हुई और नजबुनिया तेजी के साथ बेलना
घसाने लगी। बिबिया दौड़कर झाँक आयी। मतीन हैं।

"हलुवा पक गोवा?"

"हाँ पक गोवा।"

इसके असावा मतीन ने और कोई बात नहीं की। वह बघना मे पानी लेकर
बजू बनाने लगा।

बिबिया ने एक प्लेट मे हलुवा निकालकर उसे नीचेवाली कोठरी मे करघे के
पास रख दिया और एक अगरवत्ती जलाकर बही खमोन में उसे गाड़ दिया।

मतीन दोनों हाथ उठाकर फ्रातेहा करने के लिए उकड़ूँ बैठ गया।

बिबिया दरवाजे पर खड़ी रही।

फ्रातेहा करके मतीन जब तुरन्त ही बाहर जाने लगा तो बिबिया से नहो रहा
गया। वह पूछ बैठी, "इकवाल भाई कहाँ हैं?"

"ऊ आज अनसन पर बइठा है।" मतीन ने जवाब दिया और झटके के साथ
बाहर निकल गया। बिबिया हलुवा उठाकर धीरे-धीरे सीडियाँ चढ़ने लगी।

आसमान साफ है, लेकिन हवा बिल्कुल नहीं चल रही है। कई रोज़ से बारिश न होने के कारण गर्मी फिर बढ़ गयी है।

बिबिया अपने घर चली गयी है। नजबुनिया छत पर लेटी हुई है। घाना ज्यों-का-त्यों रसोईघर में ढँका हुआ रखा है।

नजबुनिया के हाथ में बाँस का एक पंखा है, जिसे वह धीरे-धीरे डुला रही है और आसमान के तारों को लगातार देखे जा रही है। नींद उसकी आँखों से कौनों दूर है। यह रात न जाने कब खत्म होगी ?

उसका फूला हुआ पेट उसे करवट भी नहीं लेने दे रहा है। भीतर रह-रहकर हड़र-हड़र हो रहा है।

"बड्वा ढोल रहा है शायद !" नजबुनिया सोचती है और सिहर उठती है।

वह रात-भर कुछ-न-कुछ सोचती रहती है और सिहरती रहती है।

फिर अचानक उसे लगता है कि छतों पर एक ठण्डा उजाला फैलने लगा है। तारों की फौज शिथिल पड़ गयी है और चाँद अपने रथ से नीचे गिर गया है। पड़ोस की छत पर, इण्टर में पढ़नेवाला अंसारी स्कूल का लड़का जोर-जोर से पढ़ने लगा है—

सन्तो आयी ग्यान की आँधी रे

भ्रम की टाटी सब उड़ानी माया रहे न बाँधी रे...

